हिंदी रंगमंच के विकास में प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का योगदान: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

HINDI RANGMANCH KE VIKAS MEN PRAMUKH CINEMA ABHINETAON KA YOGDAN: EK VISHLESHNATMAK ADHYAYAN

Thesis Submitted for the Award of the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

in

Performing Arts

By

Sanjeet Kumar

Registration No. 11814312

Supervised By

Dr. Kulwinder Singh (24471)

Department of Theatre & Music (Associate Professor)

Lovely Professional university

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY, PUNJAB

2025

DECLARATION

I, hereby declared that the presented work in the thesis entitled "**HINDI RANGMANCH KE VIKAS MEN PRAMUKH CINEMA ABHINETAON KA YOGDAN: EK VISHLESHNATMAK ADHYAYAN**" in fulfilment of degree of **Doctor of Philosophy (Ph. D.)** is outcome of research work carried out by me under the supervision of **Dr. Kulwinder Singh**, working as Associate Professor, in the **School of Liberal and Creative Arts (Theatre, Music & Film)** of Lovely Professional University, Punjab, India. In keeping with general practice of reporting scientific observations, due acknowledgements have been made whenever work described here has been based on findings of other investigator. This work has not been submitted in part or full to any other University or Institute for the award of any degree.

(Signature of Scholar)

Name of the scholar: Sanjeet Kumar

Registration No.: 11814312

Department/school: **School of Liberal and Creative Arts (Theatre, Music & Film)**

Lovely Professional University,

Punjab, India

CERTIFICATE

This is to certify that the work reported in the Ph. D. thesis entitled "**HINDI RANGMANCH KE VIKAS MEN PRAMUKH CINEMA ABHINETAON KA YOGDAN: EK VISHLESHNATMAK ADHYAYAN**" submitted in fulfillment of the requirement for the award of degree of **Doctor of Philosophy (Ph.D.)** in the **School of Liberal and Creative Arts (Theatre, Music & Film)**, is a research work carried out by **Sanjeet Kumar, 11814312,** is bonafide record of his/her original work carried out under my supervision and that no part of thesis has been submitted for any other degree, diploma or equivalent course.

(Signature of Supervisor)

Name of supervisor: Dr. Kulwinder Singh, 24471

Designation: Associate Professor

Department/school: School of Liberal and Creative Arts (Theatre, Music & Film)

University: Lovely professional University, Punjab, India

कृतज्ञता ज्ञापन

सर्वप्रथम मैं कोटि-कोटि प्रणाम करता हूँ उस परमेश्वर के चरणों में जिन्होंने मुझे इस शोध कार्य को संपूर्ण करने हेतु शारीरिक और मानसिक रूप से शक्ति प्रदान की।

प्रस्तुत शोध, मेरे निर्देशक आदरणीय डॉ. कुलविंदर सिंह जी, सह-प्राध्यापक, प्रदर्शनकारी कला विभाग, एल.पी.यू. पंजाब के सद्परामर्श एवं सौहार्दपूर्ण प्रोत्साहन का प्रतिफलन है। शोध प्रबंध की रूप रेखा बनाने से लेकर समापन तक उनके समूल्य एवं सारगर्भित सुझावों के लिए मैं हार्दिक आभारी रहूंगा। इस शोध के सम्पन्न होने का श्रेय उन्हीं को जाता है जिनके निरंतर प्रोत्साहन एवं कुशल मार्गदर्शन ने मेरा मार्ग प्रशस्त किया एवं गुरू शब्द की सार्थकता को सिद्ध किया।

मैं अपने परिवार के समस्त सदस्यों परम पूजनीय दादी (बुआ)- सुश्री दुखिया देवी ऊर्फ देवपती देवी, माता- श्रीमती शीला देवी एवं पिता- श्री मुंगेरी लाल शाह, पत्नी- लता रानी का हार्दिक आभारी हूँ जिन्होंने इस शोध कार्य के दौरान न केवल भावात्मक एवं आर्थिक सहयोग दिया अपितु मुझे इस शोध को पूरा करने के लिए निरंतर उत्साहित एवं प्रोत्साहित भी किया।

मैं आभार व्यक्त करता हूँ अपनी बड़ी बहन उषा कुमारी एवं छोटी बहन पुजा कुमारी का जिनके स्नेह एवं प्रेरणामयी बातों ने मुझे पग-पग आगे बढ़ने का साहस दिया।

मैं आभार व्यक्त करता हूँ उन तमाम रंगकर्मियों तथा कलाकारों का जिन्होंने अपने किमती समय से समय निकालकर कृतार्थ किया तथा शोध हेतु चुने गये कलाकारों के प्रति अपने अनुभव और विचारों को साक्षा कर अनेक नयें पहलुओं से रू-ब-रू करवाया। जो कि शोध में बहुत ही कारगर साबित हुआ।

मैं आभार व्यक्त करता हूँ उन समस्त विश्वविद्यालय, पुस्तकालयों तथा उनके कर्मियों को साथ ही मैं राज्य सभा टी.वी. विशेषकर गुफ्तगू कार्यक्रम को आभार जताता हूँ जिनके मदद से इस शोध को पूरा करने हेतु प्रयाप्त मात्रा में डाटा संग्रह कर सका।

मैं लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय का धन्यवाद जताता हूँ जिसने अपने छत तले मुझे इस शोध कार्य को समाप्त करने का सुअवसर प्रदान किया।

शोध प्रबंध की टंकण त्रुटियों में मैंने यथा संभव निवारण करने का प्रयास किया है। पूर्ण प्रयास के बाद भी अवशिष्ट टंकण-त्रुटियों के लिए अग्रिम रूप से क्षमा याचना करता हूँ। यह शोध प्रबन्ध अत्यंत विन्रमता के साथ आपको प्रस्तुत करता हूँ।

- संजीत कुमार

भूमिका

हिंदी रंगमंच और सिनेमा, जनसंचार के सर्वाधिक लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण माध्यम रहे हैं। आज से हजारों वर्ष पूर्व जब टेलीविजन, रेडियो, समाचार पत्र और डिजिटल माध्यम उपलब्ध नहीं थे, तब रंगमंच लोगों का मनोरंजन कराने के साथ-साथ समाज को जागरुक भी करता था। धार्मिक एवं नैतिक तथ्यों को रंगमंच के माध्यम से बढ़ावा दिया गया। वहीं वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के क्रम में सिनेमा के आगमन ने लोगों को एक ऐसा आकर्षक माध्यम उपलब्ध कराया जिसे वे बड़े मनोवेग से देखने लगे और अपनी दिनचर्या का हिस्सा बना लिया। समय बीतने के साथ सिनेमा, हिंदी रंगमंच पर भारी पड़ने लगा। रंगमंच के कलाकार विभिन्न कारणों से सिनेमा की तरफ 'पलायन' कर गये। गिनती के कुछ अभिनेताओं के तार अभी भी रंगमंच से जुड़े हैं। हिंदी रंगमंच और सिनेमा में कहानी, अभिनय, नृत्य, गीत-संगीत, निर्देशन, दर्शकों पर प्रभाव आदि विषय हमेशा ही शोध और चिंतन के विषय रहे हैं। इसी क्रम में 'हिंदी रंगमंच के विकास में प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का योगदान: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन शोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण विषय है।

भारत में रंगमंच का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। जो हमारे वेद-पुराणों के इतिहास से जुड़ा हुआ है। 'भरत ने ऋषियों को, उत्पत्ति का इतिहास बताया कि देवताओं की प्रार्थना पर ब्रह्मा जी ने चारों वेदों और चारों उपवेदों का ध्यान करके, उनसे सामग्री ली और पंचमवेद के रूप में नाट्य वेद की सृष्टि की।' जिसे नाट्यशास्त्र का नाम दिया गया। भारतीय रंगमंच मुख्य रूप से नाट्यशास्त्र का अनुसरण करता आ रहा है। नाट्यशास्त्र के

अनुसार भारत में रंगमंच की शुरूआत संस्कृत भाषा में हुई थी। मुख्य रूप से भारत में रंगमंच ने क्रमशः संस्कृत, लोक, पारसी, आधुनिक (हिंदी, बांग्ला, माराठी, गुजराती आदि) के सहारे अपने स्वरूप को बचाये हुए है। संस्कृत नाटक के अवनति के बाद भारत में रंगमंच ने अपने आप को लोक नाटकों के रूप में तब्दील कर लिया। 'संस्कृत नाटक का अवसान हुआ। इसके साथ ही क्षेत्रीय भाषाओं में रंगमंच का विकास हुआ जिसने संस्कृत रंगमंच की विशेषताओं को भी अपनाया।' उन्नीसवीं सदी तक एक ओर भारतीय लोक नाटक की लोकप्रियता कम होने लगी और दूसरी ओर एक व्यावसायिक रंगमंच की शुरूआत हुई जिसे पारसी रंगमंच के नाम से जाना गया। भारतेंदु हरिश्चंद्र को पारसी रंगमंच भारत की सभ्यता-संस्कृति के खिलाफ प्रतीत हुआ। उन्होंने पारसी रंगमंच को नकारते हुए हिंदी रंगमंच की शुरूआत की। 'औपनिवेशिक भारत में अंग्रेजों के स्वमनोरंजन के लिये आयातित रंगमंच के अनुकरण से भारतीय भाषाओं में आधुनिक रंगमंच का विकास हुआ। आधुनिक हिंदी रंगमंच का उद्भव भी इसकी कड़ी है। भारतेंदु 'जानकी मंगल' को हिंदी का पहला मंचित नाटक घोषित करते हैं।' हिंदी रंगमंच के उद्भव एवं विकास में शुरूआती दौर से लेकर आधुनिक समय तक भारतेंदु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश, राम कुमार वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

हिंदी रंगमंच के विकास में लोकप्रिय सिनेमा अभिनेताओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रायः सिनेमा के अभिनेता रंगमंच के ज़रिये अभ्यास करके ही सिनेमा तक का सफर तय करते हैं। कुछ स्टार पुत्रों-पुत्रियों या अन्य अभिनेताओं की बात छोड़ दें तो बड़ी संख्या में कलाकारों ने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली से प्रशिक्षण लेकर अभिनय की दुनिया में

नाम कमाया है। नसीरुद्दीन शाह और ओम पुरी जैसे तमाम कलाकार रंगमंच से लेकर सिनेमा के पर्दे तक बड़े बेजोड़ ढंग से प्रस्तुत हुए और अपने अभिनय का लोहा मनवाया है। इस शोध में ऐसे ही 'प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं' में से कुछ का चयन अध्ययन के लिए किया गया है। यहां 'प्रमुख सिनेमा अभिनेता' का तात्पर्य उन अभिनेताओं से है जिन्होंने रंगमंच के सहारे सिनेमा तक का सफर तय करने के साथ ही रंगमंच से जुड़ाव बरकरार रखा। इन अभिनेताओं के नाम सामने आते ही रंगमंच की छवि भी प्रकाशमान हो जाती है। शोध के लिए प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का चयन यादृच्छिक नमूना विधि से किया गया है। शोध के लिए चयनित प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं के नाम निम्न प्रकार से हैंः- पृथ्वीराज कपूर, नसीरूद्दीन शाह, अनुपम खेर, राम गोपाल बजाज, ओम शिवपुरी, ओम पुरी, गिरीश कर्नाड, पंकज कपूर, सौरभ शुक्ला, टॉम ऑल्टर, पीयूष मिश्रा, श्रीराम लागू, परेश रावल, यशपाल शर्मा।

उपर्युक्त प्रमुख अभिनेताओं द्वारा रंगमंच के क्षेत्र में किये गये तथा किये जा रहे कार्य निम्न हैंः- उपर्युक्त अभिनेताओं द्वारा किये गये/किये जा रहे नाटक, उपर्युक्त अभिनेताओं द्वारा बीच-बीच में नाट्य विद्यालय तथा अन्य संस्थाओं में जाकर वहाँ के छात्र/छात्राओं की प्रस्तुति देखना तथा उस पर विचार-विमर्श करना। उन्हें कला की बारीकियों से रूबरू करवाना, साक्षात्कार वीडियो/पत्रिका के जरिये अपने रंगमंच अनुभव को साझा करना, निजी विद्यालय के माध्यम से अभिनय तथा उसके अन्य पहलुओं के बारे में जानकारी देना इत्यादि।

भारतीय सिनेमा का इतिहास 7 जुलाई 1896 ई. से माना जाता है। जब बंबई के वाटसन होटल में लुमियर बंधुओं द्वारा सिनेमा का प्रदर्शन किया गया था। 3 मई

1913 ई. में दादा साहेब फाल्के द्वारा निर्मित सिनेमा 'राजा हरिश्चंद्र' के प्रस्तुति के साथ भारतीय सिनेमा अपने अस्तित्व में आया। अस्तित्व में आने के कुछ समय बाद ही भारतीय सिनेमा ने विश्व में अपनी पहचान बना ली थी। सन् 1931 ई. के पहले तक केवल मूक सिनेमा ही बनती रही। वर्ष 1931 में प्रदर्शित 'आलमआरा' को पहली बोलती फिल्म बनने का खिताब मिला। आर्देशिर ईरानी द्वारा निर्मित फिल्म 'आलमआरा' से भारत में सवाक फिल्म का श्रीगणेश हुआ, जो कि हिंदी भाषा में बनाई गई थी। तब से धीरे-धीरे फिल्मों का क्षेत्र और दर्शक अलग-अलग बंटने लगें और भारत में बोली जाने वाली अन्य बोलियाँ और भाषाओं जैसे मराठी, बांग्ला, गुजराती, पंजाबी, मलयालम, कन्नड़, भोजपुरी आदि में भी फिल्में बनने लगीं। आज के समय में विश्व में सबसे ज्यादा सिनेमा भारत में बनाई जाती है, जिसमें से कुछ फिल्में गुणात्मक रूप में भी विश्व स्तर पर जानी जाती हैं। भारत में बनने वाली फिल्मों की कुल संख्या में ज्यादातर फिल्में हिन्दी भाषा में होती है। हिंदी भाषा में बनने वाली फिल्मों का मुख्य केंद्र बंबई (मुंबई) है, जिसे बॉलीवुड के नाम से जाना जाता है।

हिंदी रंगमंच के समयावधि को देखते हुए ये कहना कतई गलत नहीं होगा कि आधुनिक समय में भी हिंदी रंगमंच को जिस मुकाम पर होना चाहिए था, वो उसे प्राप्त नहीं है। जिस गति से समय अपने प्रवाह में बहे जा रहा है, आज हिंदी रंगमंच उस समय और गति के साथ ताल से ताल मिलाने से चूक रहा है। वर्तमान में रंगमंच एक कारखाना के रूप में तबदील होता जा रहा है, जो सिनेमा को एक उत्तम कलाकार मुहैया करवा रहा है। एक ओर, सिनेमा के शुरूआती दौर से ही रंगमंच कलाकारों ने सिनेमा को अपनाया है और उसमें अपनी उत्तम प्रतिभा की प्रस्तुति देते आये हैं, जैसे पृथ्वीराज

कपूर, संजीव कुमार, शिवाजी गणेशन, बलराज साहनी, ओम शिवपुरी, अमज़द ख़ान आदि। ऐसा कहा जाता है कि पृथ्वीराज कपूर ने थियेटर करने के लिए ही सिनेमा में काम किया करते थे। उन्होंने सिनेमा से पैसा कमाया और थियेटर में लगाया।

दूसरी ओर, सिनेमा ने भी कलाकारों को दर्शकों से भरा एक प्लेटफॉर्म एवं आर्थिक लाभ मुहैया करवाया है। आज ये सिलसिला अधिकाधिक मात्रा में होने लगा है। इन सब के बीच में एक अहम वृतांत ये हो रहा है कि अधिकांशतः रंगमंच कलाकार हमेशा के लिए सिनेमा का बनकर रह जा रहे हैं, जहाँ से उन्हें अभिनय की बारिकियाँ हासिल करने का मौका मिलता है। वे उस कला के प्रति अपनी जिम्मेदारियां भूल जा रहे हैं, जिसके फलस्वरूप रंगमंच, सिनेमा की तुलना में कमजोर मंच साबित हो रहा है, खासतौर से कलाकारों की आर्थिक स्थिति की दृष्टि से। सिर्फ रंगमंच से जुड़ा रहकर कोई कलाकार अपना और अपने परिवार का खर्च नहीं निकाल पा रहा है और यह भी एक व्यवसायिक रूप में परिवर्तित होने लगा है। हालांकि कुछ कलाकार, जो सिनेमा में कार्य करने के बाद भी अपने मन को तृप्त करने या अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए रंगमंच में अपनी भागीदारी देते आ रहे हैं लेकिन ऐसे कलाकारों की संख्या बहुत कम है और उनके द्वारा रंगमंच को मिल रहा समय भी अपेक्षा से बहुत कम है।

प्रस्तुत शोध को छह अध्याय में लिखा गया है। प्रथम अध्याय 'भारतीय सिनेमा के प्रारंभिक समय से आधुनिक समय तक हिंदी रंगमंच का इतिहास' में हिंदी रंगमंच के उद्भव पर प्रकाश डालते हुए आदिम रंगमंच, संस्कृत रंगमंच, लोक रंगमंच, पारसी रंगमंच के संक्षिप्त इतिहास को बताया गया है। इसके साथ ही आधुनिक समय तक हिंदी रंगमंच के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है।

दूसरे अध्याय में साहित्य पुनरावलोकन, शोध अंतराल, शोध का उद्देश्य, उपकल्पना, सीमांकन, शोध प्रविधि, एवं निदर्शन के बारे में बताया गया है।

तीसरे अध्याय में, भारत में सिनेमा के आगमन से लेकर सन् 2019 के भारतीय सिनेमा विशेषकर हिंदी भाषी सिनेमा के इतिहास को उजागर किया गया है, जिसे मूक सिनेमा और सवाक सिनेमा दो भागों में लिखा गया है।

चतुर्थ अध्याय में चयनित प्रमुख अभिनेताओं का जीवन परिचय लिखने का कार्य किया गया है, साथ ही उनके द्वारा कला की दुनिया में दिये गये योगदान हेतु प्राप्त पुरस्कार की जानकारी भी लिखी गई है।

पंचम अध्याय में चयनित प्रमुख अभिनेताओं द्वारा रंगमंच और सिनेमा के क्षेत्र में किये गये कार्यों को विशेष रूप से उजागर किया गया है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि उपर्युक्त अभिनेता किस प्रकार रंगमंच और सिनेमा की दुनिया में अपना योगदान देते आये हैं।

छठा अध्याय में सिनेमा उद्योग एवं चयनित प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा रंग क्षेत्र के विस्तार के पहलुओं पर चर्चा की गई है, जिसमें यह बताया गया है कि किस प्रकार सिनेमा तथा रंगमंच से सिनेमा में गये अभिनेताओं के माध्यम से रंगमंच को बढ़ावा मिल सकता है या मिल रहा है।

अनुक्रमिका

क्र.सं./अध्याय शीर्षक **पृष्ठ संख्या**

<u>अध्याय:1</u> **01-44**

हिंदी सिनेमा के प्रारंभिक समय से आधुनिक समय तक हिंदी रंगमंच का इतिहास

1.1. भारत में रंगमंच का उद्‌भव

1.1.1. आदिम रंगमंच

1.1.2. संस्कृत रंगमंच

1.1.3. लोक रंगमंच

1.1.4. पारसी रंगमंच

1.2. आधुनिक हिंदी रंगमंच का इतिहास: आरंभ से भारतीय सिनेमा के आरंभिक काल तक

1.3. भारतीय मूक सिनेमा कालीन हिंदी रंगमंच

1.4. भारतीय सवाक् सिनेमा कालिन हिंदी रंगमंच आरंभ से 2019 तक

निष्कर्ष

<u>अध्याय:2</u> **45-62**

साहित्य पुनरावलोकन एवं अनुसंधान कार्य विधि

2.1 साहित्य पुनरावलोकन

2.1.1 शोध प्रबंध

2.1.2 हिंदी पुस्तकें

2.1.3 अंग्रेजी पुस्तकें

2.1.4 लेख

2.2 शोध अंतराल

2.3 शोध का उद्देश्य

2.4 उपकल्पना

2.5 सीमांकन

2.6 शोध प्रविधि

2.7 निदर्शन

अध्याय:3 **63-126**

भारतीय सिनेमा का इतिहासः अभिनेताओं के संदर्भ में

3.1. भारतीय सिनेमा का इतिहास: मूक सिनेमा (आरंभ से 1930 ई. तक)

3.2. हिंदी सिनेमा का इतिहास: सवाक सिनेमा (1931 ई. से 2019 तक)

निष्कर्ष

अध्याय:4 **127-168**

प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का जीवन एवं व्यक्तित्व

4.1. पृथ्वीराज कपूर

4.2. श्रीराम लागू

4.3. ओम शिवपुरी

4.4. गिरीश कर्नाड

4.5. राम गोपाल बजाज

4.6. परेश रावल

4.7. टॉम ऑल्टर

4.8. नसीरुद्दीन शाह

4.9. ओम पुरी

4.10. अनुपम खेर

4.11. पंकज कपूर

4.12. पीयूष मिश्रा

4.13. सौरभ शुक्ला

4.14. यशपाल शर्मा

<u>अध्याय:5</u> **169-245**

चयनित अभिनेताओं द्वारा रंगमंच एवं सिनेमा के क्षेत्र में किया गया कार्य

5.1. पृथ्वीराज कपूर

5.2. श्रीराम लागू

5.3. ओम शिवपुरी

5.4. गिरीश कर्नाड

5.5. राम गोपाल बजाज

5.6. परेश रावल

5.7. टॉम ऑल्टर

5.8. नसीरुद्दीन शाह

5.9. ओम पुरी

5.10. अनुपम खेर

5.11. पंकज कपूर

5.12. पीयूष मिश्रा

5.13. सौरभ शुक्ला

5.14. यशपाल शर्मा

<u>अध्याय:6</u> **246-276**

सिनेमा उद्योग और प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा रंग क्षेत्र का विस्तार

निष्कर्ष **277-288**

संदर्भ ग्रंथ सूची **289-299**

तालिका	**300-316**
परिशिष्ट - 1 प्रश्नावली	**317-318**
परिशिष्ट - 2 साक्षात्कार	**319-320**
परिशिष्ट - 3 छायाचित्र	**321-338**
परिशिष्ट - 4 प्रकाशन, कार्यशाला एवं संगोष्ठी	**339-340**

विषय सूचि (छाया चित्र सूचि)

चित्र **पृष्ठ संख्या**

चित्र 1: भारत में सिनेमा का प्रथम शो का विज्ञापन	321
चित्र 2: फिल्म 'पुंडलिक' का विज्ञापन	322
चित्र 3: फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का विज्ञापन	323
चित्र 4: फिल्म 'आलम आरा' का विज्ञापन	324
चित्र 5: पृथ्वीराज कपूर	325
चित्र 6: श्रीराम लागू	326
चित्र 7: ओम शिवपुरी	327
चित्र 8: गिरीश कर्नाड	328
चित्र 9: राम गोपाल बजाज	329
चित्र 10: परेश रावल	330
चित्र 11: टॉम ऑल्टर	331
चित्र 12: नसीरुद्दीन शाह	332
चित्र 13: ओम पुरी	333
चित्र 14: अनुपम खेर	334
चित्र 15: पंकज कपूर	335
चित्र 16: पीयूष मिश्रा	336
चित्र 17: सौरभ शुक्ला	337
चित्र 18: यशपाल शर्मा	338

<u>अध्याय:1</u> हिंदी सिनेमा के प्रारंभिक समय से आधुनिक समय तक हिंदी रंगमंच का इतिहास

भारतीय सिनेमा के प्रारंभिक समय से हिंदी रंगमंच के विभिन्न दौर पर प्रकाश डालने के पूर्व रंगमंच के आरंभ से भारतीय फिल्म के प्रारंभिक समय तक संक्षिप्त प्रकाश डालना उपयुक्त रहेगा। हिंदी रंगमंच का आरंभ तो भारतेंदु से माना जाता है लेकिन इसका बीज लोक रंगमंच से ही बोया जा चुका था।

1.1. भारत में हिंदी रंगमंच का उद्‌दभव

1.1.1. आदिम रंगमंच

रंगमंच की शुरुआत कब, कहाँ और कैसे हुई? इसके बारे में हमें आज तक कोई पुख्ता सबूत नहीं मिल पाया है, जिसके आधार पर हम दावे के साथ कह सकें कि रंगमंच की शुरुआत इस समय, इस जगह और इस तरह से हुई थी। इन प्रश्नों को लेकर आधुनिक समय तक प्राप्त डाटा से एक अनुमान लगाया जाता है कि रंगमंच की शुरुआत आदिम काल से रही होगी। आदिम काल से रंगमंच की शुरुआत! इसे लेकर भी अनेक मत प्राप्त होते हैं लेकिन आदिम काल के इतिहास पर गौर किया जाये तो शायद यह मानना सही होगा कि रंगमंच की शुरुआत आदिम काल से हुई होगी। आदिम काल एक आदि मानवों का समय रहा है। आदि मानव जंगल, पहाड़, गुफाओं आदि में वास करते थें, जो उनके साथ-साथ अनेक जानवरों का निवास स्थान आज भी है। जब वे कभी जंगली जानवरों से अपने आप की, अपने परिवार, कबिले आदि की रक्षा करते होंगे या फिर अपनी भूख-प्यास मिटाने के लिए शिकार करते समय उनकी जो हरक़ते होंगी। वो

सब कुछ एक समय पर अपनों के सामने अपनी हाव-भाव या भाषा में प्रस्तुत करते होंगे। इसे हम एक स्टोरी टेलिंग के तौर पर रंगमंच से जोड़ सकते हैं। कुछ समय बाद जब आग की उत्पत्ति हुई और शिकार को पकाकर खाने लगे तो शिकार को बनाते समय वो लोग भी जश्न मनाते होंगे, जिसमें वो अपनी खुशियाँ ज़ाहिर करते होंगे। उस समय शिकार किये गये जानवरों की खाल को ओढ़ कर, उसके सींग आदि को माथे पर लगाकर मनोरंजन करते होंगे। उनमें से कुछ लोग जानवरों की आवाज़ की नकल भी निकालते होंगे। कुछ इन सब का आनंद उठा रहे होते होंगे। अगर हम इन सब हरकतों को रंगमंच की दृष्टि से ग़ौर करें तो ये सभी हरकतें मिलाकर कहीं न कहीं एक नाटक की प्रस्तुति को दर्शाती हैं। इसे आधार मानकर यह कहना गलत नहीं होगा कि रंगमंच की शुरूआत आदिम काल से हुई थी लेकिन इस काल से संबंधित कोई सटीक साक्ष्य न होने के कारण इसे रंगमंच का उद्भव का श्रेय प्राप्त नहीं है। साहित्यिक तौर पर संस्कृत रंगमंच से हमारे पास साक्ष्य उपलब्ध हैं। तो ये कहना सही होगा कि भारत में रंगमंच की शुरुआत संस्कृत रंगमंच से हुई। नेमिचंद्र जैन के अनुसार, "कई शताब्दियों तक वह समान्य लोक जीवन में केवल अनुष्ठान मूलक गीत-नृत्य, कथा गायन अथवा विशिष्ट अवसरों पर निकाली जाने वाली झाकियों के रूप में ही मौजूद रही। बाद में समाज के अभिजात वर्गों में भी उसके विभिन्न रूप प्रतिष्ठित हुए। एक-डेढ़ हजार वर्ष की अवधि में फैले इन रूपों को संस्कृत नाटक और रंगमंच के रूप में जाना गया।"[1] साहित्यिक नाटक भास, कालिदास, अश्वघोष आदि के नाटकों से जाना जाता है। जिनका समय लगभग छठी ईसा पूर्व से शुरू होता है।

---

[1]जैन, नेमिचंद्र, लेखक, भारतीय नाट्य परंपरा, पृष्ठ-1

भारत में रंगमंच का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। जो हमारे वेद-पुराणों के इतिहास से ही रहस्यमय ढ़ंग से जुड़ा हुआ है। इस संदर्भ में डॉ ब्रजवल्लभ मिश्र बताते है, "भरत ने ऋषियों को, उत्पत्ति का इतिहास बताया कि देवताओं की प्रार्थना पर ब्रह्मा जी ने चारों वेदों और चारों उपवेदों का ध्यान करके, उनसे सामग्री ली और पंचमवेद के रूप में नाट्य वेद की सृष्टि की। जिसे नाट्य शास्त्र का नाम दिया गया।"[2] भारतीय रंगमंच मुख्य रूप से नाट्य शास्त्र का अनुसरण करता आ रहा है। नाट्य शास्त्र के अनुसार भारत में रंगमंच की शुरूआत संस्कृत भाषा में हुई थी। मुख्य रूप से भारतीय रंगमंच क्रमशः संस्कृत रंगमंच, लोक रंगमंच, पारसी रंगमंच, आधुनिक (हिंदी, बांग्ला, मराठी, गुजराती आदि) रंगमंच के सहारे अपने स्वरूप को बचाये हुए है। संस्कृत नाटक के अवनति के बाद भारत में रंगमंच ने अपने आप को लोक नाटकों के रूप में तब्दील कर लिया। संस्कृत नाटक का अवसान हुआ। इसके साथ ही क्षेत्रीय भाषाओं में रंगमंच का विकास हुआ जिसने संस्कृत रंगमंच के विशेषताओं को भी अपनाया।[3] उन्नीसवीं सदी तक एक ओर भारतीय लोक नाटक की लोकप्रियता कम होने लगी और दूसरी ओर एक व्यावसायिक रंगमंच की शुरूआत हुई जिसे पारसी रंगमंच के नाम से जाना गया। भारतेंदु हरिश्चंद्र को पारसी रंगमंच भारत के सभ्यता-संस्कृति के खिलाफ प्रतीत हुआ। उन्होंने पारसी रंगमंच को नकारते हुए हिंदी रंगमंच की शुरूआत की। रंगविमर्श ब्लॉग पर अमितेश लिखते है, "औपनिवेशिक भारत में अंग्रेजों के स्वमनोरंजन के लिये आयातित रंगमंच के अनुकरण से भारतीय भाषाओं में आधुनिक रंगमंच का विकास हुआ। आधुनिक

---

[2]मिश्र, डॉ. ब्रजवल्लभ, भरत और उनका नाट्य शास्त्र, पृष्ठ-18

[3]अमितेश, भारतीय रंगमंच, https://rangwimarsh.blogspot.com/2015/05/blog-post_21.html

हिंदी रंगमंच का उद्भव भी इसकी कड़ी है। भारतेंदु 'जानकी मंगल' को हिंदी का पहला मंचित नाटक घोषित करते है।"[4] हिंदी रंगमंच के विकास में भारतेंदु ने अपना स्वतंत्र रंगमंडल बनाया, यात्रायें कीं, नाटक खेले, जनता के कष्टों कि गाथा को शासकों तक पहुचाने की कोशिश भी की। सन् 1868 में ही 'जानकी मंगल' नाटक (बनारस थियेटर की प्रस्तुति) में वे अभिनय कर चुके थें। 'नीलदेवी' और 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटकों में भी उन्होंने क्रमशः पागल और हरिश्चंद्र की भूमिकाएं करके अभिनय क्षमता का प्रमाण दिया था। भारतेंदु नाटक में पुराने और नए रूप का सामंजस्य चाहते थे। 'नाटक' शीर्षक निबंध में भारतेंदु स्वयं लिखते है - "नाटकादि दृश्यकाव्य प्रणयन करना हो तो प्रचीन समस्त रीति ही परित्याग करें, यह आवश्यक नहीं है क्योंकि जो सब प्राचीन रीति व पद्धति आधुनिक सामाजिक लोगों की मतपोशिका होगी, वह अवश्य ग्रहण होगी।"[5] हिंदी रंगमंच के उद्भव एवं विकास यात्रा में शुरूआती दौर से लेकर आधुनिक समय तक 'भारतेंदु हरिश्चंद्र', 'भुवनेश्वर मिश्र माधव', 'बालकृष्ण भट्ट', 'श्री निवास दास', 'अंबिका दत्त व्यास', 'जय शंकर प्रसाद', 'मोहन राकेश', 'राम कुमार वर्मा', 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेना' आदि नाम उल्लेखनीय है।

1.1.2. संस्कृत रंगमंच

भारत में भाषा की दृष्टि से रंगमंच की शुरूआत संस्कृत भाषा में हुई। इसके साक्ष्य हेतु, पंचमवेद कहे जाने वाला नाट्यग्रंथ 'नाट्य शास्त्र' ही काफी है। 'नाट्य शास्त्र'

---

[4]अमितेश, आधुनिक हिंदी रंगमंच (क), https://rangwimarsh.blogspot.com/2015/06/blog-post.html

[5]हरिश्चंद्र, भारतेंदु, नाटक शीर्षक निबंध, लेखक-श्रीवास्तव परमानंद, पेज - भूमिका

विश्व के सबसे पुराने ग्रंथों में से एक है। कम से कम तीसरी शताब्दी ई.पू., इसका पहला अध्याय नाटक के जन्म की कहानी कहता है। यह एक ऐसा समय था जब दुनिया नैतिक मर्यादा में डूब गई थी। लोग तर्कहीन जुनून के गुलाम बन गए थे। एक नया साधन ढूंढा जाना था (जो आँखों और कानों को प्रसन्न करने के साथ-साथ संपादन कर सके) जो मानवता का उत्थान कर सके। तब ब्रह्मा ने चार वेदों से संयुक्त तत्वों को लेकर एक पांचवें वेद, प्रदर्शन का वेद बनाने के लिए अनुमति दी। चूंकि देवता गण यह नाट्य ग्रंथ मनुष्यों के कल्याण हेतु गढ़ना चाहते थे। इसलिए मनुष्यों से इसकी रचना करवाना ज्यादा उचित समझें और पंचम वेद की रचना का कार्य एक इंसान भरत पर पारित किया गया था और भरत अपने सौ पुत्रों और ब्रह्म द्वारा भेजे गए कुछ खगोलीय नर्तकों की मदद से पहला नाटक का मंचन करने में सफल हुए थे। संस्कृत रंगमंच के आरंभिक काल को सटीक बता पाना मुश्किल है लेकिन नाट्य शास्त्र की दृष्टि से यह कहना कतई गलत न होगा कि इसकी शुरूआत वैदिक काल से रही होगी। या यह भी हो सकता है कि इसकी शुरूआत वैदिक काल से भी पूर्व रही हो लेकिन कोई साक्ष्य उपलब्ध न होने की स्थिति में वैदिक काल मानना ज्यादा सटीक लगता है। डॉ. ब्रजवल्लभ मिश्र कृत पुस्तक 'भरत और उनका नाट्य शास्त्र' के पृष्ठ संख्या 18 (अठारह) में उल्लिखित वाक्य "भरत ने ऋषियों को, उत्पत्ति का इतिहास बताया कि देवताओं की प्रार्थना पर ब्रह्मा जी ने चारों वेदों और चारों उपवेदों का ध्यान करके, उनसे सामग्री ली और पंचमवेद के रूप में नाट्य वेद की सृष्टि की।" (संदर्भ संख्या 2) से भी ज्ञात होता है कि वेदों में प्रदर्शनकारी कलाओं का समावेश रहा अर्थात वेद रचना से पूर्व इनका उद्भव हो चुका था। डॉ. दास गुप्त के अनुसार "वैदिक मंत्रों में नाटकीय तत्व विद्यमान है और तात्कालिक धार्मिक संगीत और

नृत्य के साथ नाटक का संबंध अवश्य रहा है।[6] भारतीय रंगमंच की नींव रखने वाला भरत कृत पंचमवेद 'नाट्य शास्त्र' में रंगमंच के सभी पहलुओं को बारीकी से उजागर किया गया है। इसके बाद मुख्य रूप से रंगमंच के अलग-अलग पहलुओं पर अपना पक्ष रखने वालों में कोहल, तुंबरू, दत्तिल, मतंग, कात्यायन, राहुल, उद्भट्ट, भट्टलोलट, शंकुक, भट्टनायक, भट्टयंत्र, भट्टतौत, अभिनवगुप्त, कीर्तिधर, मातृगुप्त, सुबंधु, अश्मकुट्ट, वादरायण, शातकर्णी, नखकुट्ट आदि नाम उल्लेखनीय है। साहित्यिक तौर पर संस्कृत नाट्य रचना में विशेषकर कालिदास का नाम सर्वोच्चय है। इनके अलावा संस्कृत नाट्य रचना में 'भास', 'शुद्रक', 'भवभूति' आदि नाम भी उपलब्ध है। जिनके नाटक आज भी उपलब्ध हैं। संस्कृत नाटकों का न सिर्फ भारत वर्ष बल्कि विदेशों में भी बोलबाला रहा है। मुख्य रूप से 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' और 'मृच्छकटिकम्' नाटक का। नौवीं शताब्दी तक संस्कृत रंगमंच का बोलबाला रहा। भवभूति एक ऐसे नाटककार रहे जिन्हें संस्कृत के आख़िरी उच्च नाटककार का दर्जा प्राप्त है। दसवीं शताब्दी से संस्कृत नाटक औसान की ओर बढ़ चला था और ग्यारहवीं शताब्दी तक संस्कृत रंगमंच न के बराबर रह गया था। पंद्रहवीं सदी के अंत तक, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, आंध्र, उत्तर प्रदेश और गुजरात में मंच पर संस्कृत नाटकों का प्रदर्शन किया गया। मध्ययुगीन भारत में रंगमंच ने भारतीय शास्त्रीय नृत्य नाटक की शुरुआत के साथ भारतीय नाटक की एक नई शैली देखी। रासलीला, रामलीला, भांड, नौटंकी और वांग जैसे गीत, नृत्य और सस्वर नाटकों ने महाकाव्यों पर आधारित मध्यकालीन भारत में नाटकीय पैटर्न पर शासन किया।

---

[6] Gupta, Das S.N., Dev, S.K., History of Sanskrit Literature, Volume 1 1947, Kolkata University press, Page 44

मध्यकालीन भारतीय रंगमंच को आकार देने में, धर्म ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भक्तिमय, पौराणिक और धार्मिक नाटक मध्ययुगीन रंगमंच के उत्पाद थे और 'भक्ति आंदोलन' की आभा थे। ऐतिहासिक रूप से पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों के दौरान, लोक-रंगमंच संबंधित क्षेत्रीय भाषाओं में सशक्त रूप से उभरा। आज यक्षगान एक मात्र वो नाट्य कला है जो संस्कृत नाटक के परंपराओं को बचाये हुए है। संस्कृत नाटक के लुप्त होने के बाद नाटक ने लोक रंग के रूप में अपना जीवन-यापन करना सीख लिया। हर क्षेत्र में लोगों ने अपने-अपने लोक रंग के आधार पर नाटक खेलना आरंभ कर दिया। हालांकि लोक नाटकों ने संस्कृत रंगमंच को अपने में समाहित रखा। नेमिचंद्र जैन लिखते है, "यद्यपि संस्कृत भाषा का वर्चस्व समाप्त हो गया तथापि विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में यह नया रंगकार्य भारतीय नाट्य परंपरा के एक नए या अगले चरण को सूचित करता था जिसमें व्यापक भारतीय रंगकला की निरंतरता निहित थी।"[7] देश में संस्कृत रंगमंच की गिरावट के साथ, प्रसिद्ध भाषाओं के लोकप्रिय लोक रंगमंच की गुणवत्ता और मात्रा दोनों में वृद्धि हुई।

1.1.3. लोक रंगमंच

प्राचीन वैदिक संस्कृति से उपजी, पारंपरिक भारतीय लोक रंगमंच के रूप दुनिया भर में प्रतिष्ठित हैं। उनकी समृद्ध विरासत और शास्त्रीय पहलू क्षेत्रीय, स्थानीय और लोक रंग में डूबे हुए हैं। भारत के नाट्य कला रूपों में, सभी भावनाओं जैसे कि दुःख, खुशी, हताशा, घृणा और प्रेम की एक भूमिका और स्थान है। हजारों साल पुरानी

---

[7]जैन, नेमिचंद्र, भारतीय नाट्य परंपरा, , पृष्ठ-14

विरासत, पारंपरिक लोक रंगमंच एक ऐसी संस्कृति है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संगीत, नृत्य, नाटक और भाषण के माध्यम से गुजरती है। देशी संस्कृति में लोक रंगमंच की जड़ें स्थानीय पहचान और सामाजिक मूल्यों में अंतर्निहित हैं। भारतीय लोक रंगमंच को मोटे तौर पर दो व्यापक श्रेणियों धर्म और धर्मनिरपेक्ष में विभाजित किया जा सकता है, जो क्रमशः ऋतु रंगमंच और मनोरंजन के रंगमंच को जन्म देता है। भारत में लोक रंगमंच का एक लंबा, समृद्ध और शानदार इतिहास रहा है। प्राचीन काल में, मौसमी त्योहारों पर या विशेष आयोजनों को मनाने के लिए संस्कृत नाटकों का मंचन किया जाता था। संस्कृत रंगमंच की समाप्ति के बाद लगभग एक सदी तक रंगमंच न के बराबर हुआ। फिर धीरे-धीरे पुनः लोक रंगमंच के सहारे भारतीय रंगमंच अपने अस्तित्व में आने लगा। प्राप्त प्रमाणों के अनुसार संस्कृत के शास्त्रीय रंगमंच के विघटन के बाद ही हिंदी का लोकमंच उदित हुआ।[8] देखा जाए तो हिंदी रंगमंच का शुभारंभ इसी काल से हो गया था। दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी में भक्ति परंपरा अपने चरम पर रही थी और इसी को सहारा बनाते हुए रंगमंच ने रासलीला, रामलीला, नौटंकी आदि जैसे लोक रंगमंच को जन्म दिया। हिंदी रंगमंच का दर्शन सर्वप्रथम हमें इन्हीं लीलाओं में मिलता है।[9] कुछ ही समय में लोक रंगमंच धीरे-धीरे पूरे भारत वर्ष में अपना अलग-अलग रूप लेकर अवतरित हुआ। लोक रंगमंच के संबंध में डॉ के. एन. सिंह अपने पुस्तक में लिखते है, “आसाम में अंकिया नाट्य, बंगाल में यात्रा और कीर्तनिया, बिहार में बिदेसिया, उत्तर भारत में रास, नौटंकी, स्वांग, भांड़, राजस्थान में रास, झूमर, ढ़ोलामारू, गुजरात में भवाई, महाराष्ट्र में

---

[8] शर्मा, डॉ. विश्वनाथ, हिंदी रंगमंच का उद्भव और विकास, पृष्ठ-90

[9] ओझा, डॉ. दशरथ, हिंदी नाटक का उद्भव और विकास, 2003

लडित और तमाशा, कर्नाटक में यक्षगान, तमिल में भगवत मेला और उत्तर पर्वतीय क्षेत्र में करियाडा आदि वर्तमान में उपलब्ध लोक मंच के स्वरूप हैं।"[10] इसके अलावा कुचीपुड़ी, दशावतार, रासलीला, रामलीला, कृष्णाट्यम आदि नाटक भी आज उपलब्ध हैं। भारतीय रंगमंच परंपरा को बचाये रखने में लोक नाटक का बहुत बड़ा योगदान है। लगभग पाँच शताब्दी तक लोक नाट्य भारतीय रंगमंच की परंपरा को अग्रसर करता रहा। यह काल विशेष कर मुग़लो का शासन काल रहा और मुग़ल शासन काल में मुख्य रूप से संगीत कला पर विशेष ज़ोर दिया गया। हर दरबार में उनका अपना संगीतज्ञ होता था जो अपने संगीत से मनोरंजन करता-करवाता था। बावजूद इसके भी लोक रंग कला आम लोगों के बीच बहुत प्रचार-प्रसार में रहा। इस समय रंगमंच का संगीत पक्ष काफी मजबूत हुआ। भारतीय रंगमंच संस्कृत से होते हुए लोक रंग कला में अपने स्वरूप को बदलते हुए अब पारसी रंगमंच तक जा पहुँचा। हालांकि लोक रंग कला के काल में भी छिटपुट संस्कृत रंगमंच होते रहे। प्रमाण स्वरूप आज भी हम कर्नाटक के यक्षगान को देख सकते हैं।

1.1.4. पारसी रंगमंच

आधुनिक भारतीय रंगमंच के क्षेत्र में पारसी रंगमंच एक अत्यधिक प्रभावशाली आंदोलन था। पारसी रंगमंच यूरोपीय तकनीकों के मिश्रण और भारतीय रंगमंच के स्थानीय लोक रूप का एक परिणाम था। उन्नीसवी सदी में एक ओर लोकनाट्यों की परम्परा चल रही थी, दूसरी ओर पारसी थियेटर सुसंगठित होकर उभर रहा था और लगभग एक शताब्दी तक यह लोक में हावी रहा। इसकी मूल प्रेरणा

---

[10] सिंह, डॉ. के. एन., हिंदी के प्रतीक नाटक और रंगमंच, पृष्ठ-77

पाश्चात्य रंगमंच था।[11] पारसी रंगमंच ने भारतीय तरीकों से ज्यादा अंग्रेजी तरीके अपनाए। पारसी समुदाय द्वारा पारसी रंगमंच चलाए जाते थे जो व्यापार के उद्देश्य से भारत के पश्चिमी भाग में आए थे। अपने निजी मनोरंजन के लिए वे अपने साथ रंगमंच लाए। बाद में, उन्होंने इसका इस्तेमाल व्यावसायिक उद्देश्य के लिए किया। व्यावसायिक रंगमंच में पारसी रंगमंच के इस मंच ने न केवल भारतीय रंगमंच के तेज विकास को सक्षम बनाया, बल्कि इसने बॉलीवुड फिल्म उद्योग की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत में सर्वप्रथम पारसी थियेटर का प्रदर्शन सर जमशेदजी जीजीभोय द्वारा बंबई में किया गया था। पारसी रंगमंच के प्रदर्शन हेतु दो लोकप्रिय थियेटर थी। एक 'बॉम्बे थिएटर' और दूसरा 'ग्रांट रोड थिएटर'। डॉ चंदुलाल दुबे के अनुसार "बंबई में सन् 1853 ई. के अक्टूबर महीने में पारसियों ने सबसे पहले नाटक करने की शुरूआत की। पेस्तन जी धनजी भाई मास्टर ने इसके लिए एक क्लब की स्थापना की और नाम रखा 'पारसी नाटक मंडली'। इस मंडली के मुख्य मालिक थे फराम जी गुस्ताद जी दलाल।"[12] धीरे-धीरे बंबई के अलावा भारत के अन्य शहरों में भी पारसी रंगमंच का बोलबाला होने लगा। पारसी रंगमंच के दृश्य, संगीत, डायलॉग आदि को भारत में लोगों ने खूब पसंद किया। इसके परिणाम स्वरूप देखते-देखते बहुत ही कम समय में पारसी रंगमंच ने अपनी कई संस्थाओं को व्यवसाय हेतु अपने को बाजार में ला खड़ा किया। इनमें कुछ के नाम निम्न हैं: 'विक्टोरिया थियेट्रिकल कंपनी', 'एलिफिस्टन ड्रामैटिक क्लब', 'ज़ोरोस्ट्रीयन थियेट्रिकल क्लब', 'अल्फ्रेड थियेट्रिकल कंपनी', 'मदन थियेटर कलकता', 'शेक्सपियर

---

[11] चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टि, पृष्ठ-164

[12] दुबे, डॉ. चंदुलाल, हिंदी रंगमंच का इतिहास, पहला भाग, पृष्ठ-48

नाटक मंडली', 'ओरियंटल नाटक मंडली', 'हिंदी नाटक मंडली', 'दी वालंटीयर्स क्लब' आदि। डॉ चंदुलाल दुबे के अनुसार, "विभिन्न पारसी मंडलियों के कुछ प्रमुख अभिनेता इस प्रकार थे- पेस्तन जी धनजीभाई मास्टर, नाह्नाभाई रू राणीना, दादा भाई एलिअट, मनचेरशाह बे. मेहरहोमजी, भीखाजी ख. भुस, कावसजी हो, बिलिमोरिया (डाक्टर), रू. हो. हाथीराम (डाक्टर), कावसजी नशरवान जी कोहीदास।"[13] प्रदर्शन के पहले भाग में, पारसी रंगमंच ने अंग्रेजी में नाटक का मंचन किया और ब्रिटिश नाटककारों द्वारा लिखे गए नाटकों का चयन किया लेकिन समय बीतने के साथ उन्होंने थिएटर में भारतीय दर्शकों की रुचि देखी और उन सभी अंग्रेजी नाटकों का उर्दू, हिंदी, गुजराती, आदि जैसे अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद के साथ-साथ उनका प्रदर्शन भी किया लेकिन समय बीतने के साथ पारसी रंगमंच के निर्देशकों ने उर्दू साहित्य और हिंदी साहित्य से भूखंडों का चयन करना शुरू कर दिया था और उनका प्रदर्शन किया क्योंकि उन दिनों भारत में उर्दू साहित्य हिंदू और मुस्लिम दर्शकों के बीच लोकप्रिय था। पारसी के कुछ प्रमुख नाटककार आगा हश्र कश्मीरी, नारायण प्रसाद 'बेताब', राधेश्याम कथावाचक, किशनचन्द्र जेबा, तुलसीदत्त शैदा, जमुनादास मेहरा आदि रहे।

अंततः पारसी रंगमंच के बारे में यह कहा जा सकता है कि, पारसी रंगमंच भारत में पेश किया गया पहला व्यावसायिक थिएटर है। इसने नाटक को मंच पर प्रस्तुत करने का एक नया तरीका सामने रखा है। इस थिएटर की प्रमुख उपलब्धि गहरे और उथले दृश्यों का उपयोग है। शैलो दृश्यों ने धीरे-धीरे गहरे दृश्यों पर हावी होना शुरू कर दिया

[13] वही, पृष्ठ-49

क्योंकि इसमें कॉमिक दृश्य शामिल थे जो भारतीय दर्शकों को आकर्षित करते थे। भारत में इस तरह के रंगमंच का अभ्यास पारसी और मुसलमान समुदाय करते थे और बाद में हिंदू नाटककारों ने इसका इस्तेमाल किया। उन्होंने नाटक के एक अनिवार्य हिस्से के रूप में धर्मनिरपेक्षता का परिचय दिया। इसने भारतीय रंगमंच में नाटकों के प्रदर्शन का एक नया दायरा खोला। बाद में इन पारसी नाटककारों ने बॉलीवुड की पटकथाएँ लिखनी भी शुरू कर दी। इस प्रकार भारतीय रंगमंच और बॉलीवुड पारसी रंगमंच के क्रमिक विकास का अगला हिस्सा बना। मूल रूप से हिंदी रंगमंच के उद्भव की बात कि जाए तो इसका संबंध सीधे तौर पर पारसी रंगमंच से जुड़ा हुआ है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लिखते है, "अन्य सभी भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक पारसी नाट्य लेखन और उसका रंगमंच-प्रदर्शन हिंदी भाषा में ही हुआ है। इसलिए हिंदी भाषा, हिंदी क्षेत्र और हिंदी संस्कृति के संदर्भ में उसे पारसी हिंदी रंगमंच और नाटक कहना ही अधिक युक्ति संगत है।"[14] प्रमुख पारसी नाटककार 'आगा हश्र कश्मीरी', 'नारायण प्रसाद 'बेताब'', 'राधेश्याम कथावाचक' आदि ने हिंदी नाटक भी लिखे हैं।

1.2. आधुनिक हिंदी रंगमंच का इतिहास: आरंभ से भारतीय सिनेमा के आरंभिक काल तक

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि हिंदी रंगमंच की शुरूआत लोक रंगमंच से ही हो गई थी लेकिन मूल रूप से हिंदी रंगमंच की स्थापना भारतेंदु काल में हुई। हिंदी क्षेत्र में लोक नाट्यों के अनेक रूप प्रचलित रहे हैं। इनमें कलात्मक उपलब्धि की दृष्टि से

[14] लाल, डॉ. लक्ष्मीनारायण, पारसी हिंदी रंगमंच, पृष्ठ-18

रासलीला, रामलीला, माच, ख्याल, नौटंकी, स्वांग, भगत आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें रासलीला संभवतः बहुत पुरानी परंपरा है।[15] लोक नाट्य के साथ ही पारसी रंगमंच में भी हिंदी भाषा का ही बोलबाला रहा अर्थात संदर्भ संख्या आठ और तेरह के अनुसार कह सकते है कि हिंदी रंगमंच लोकनाट्यों के साथ-साथ पारसी रंगमंच क्षेत्र में अपने पाँव जमाने लगा लेकिन पारसी रंगमंच अपने व्यवसाय में अति मुनाफा हेतु दृश्य और भाषा में अश्लीलता का उपयोग करने लगा या उनके द्वारा उपयोग किया गया दृश्य और भाषा भारतीय संस्कृति के खिलाफ थी, जो हिंदी प्रेमियों और भारतीय संस्कृति को जीने वाले लोगों को रास नहीं आया। उन्होंने पारसी रंगमंच को नकारते हुए भारतीय संस्कृति के पक्ष में हिंदी रंगमंच की नींव रखी। डॉ गोविंद चातक के अनुसार “1875 में जब विक्टोरिया नाटक मंडली ने वाराणसी में शकुन्तला ऑपेरा प्रस्तुत किया तो राजा-महाराजाओं और रईसों की भीड़ उमड़ आयी थी। इसी के अभिनय के संबंध में भारतेंदु ने लिखा था: काशी में पारसी नाटक वालों ने नाचघर में जब शकुन्तला नाटक खेला और उसमें धीरोदत्त नायक दुष्यंत खेमटेवालियों की तरह कमर पर हाथ रखकर मटक-मटककर नाचने और पतरी कमर बलखाये यह गाने लगा तो डॉ. थोबो, बाबू प्रमदादास मित्र प्रभृति विद्वान यह कहकर उठ आये कि अब देखा नहीं जाता। ये लोग कालिदास के गले पर छूरी फेर रहे हैं।”[16] हिंदी रंगमंच के नीव रखने का श्रेय भारतेंदु हरिश्चंद्र को जाता है। भारतेंदु ने अपने नाटकों में सौंदर्य आकर्षण, सामाजिक, ऐतिहासिक, राष्ट्रीय जैसी आदि दिशा पर विशेष जोर दिया। आधुनिक हिंदी रंगमंच की प्रस्तुति का आरंभ ‘जानकी

---

[15] चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टि, पृष्ठ-159

[16] वही, पृष्ठ-166

मंगल' नाटक से माना जाता है। जिसका प्रथम प्रदर्शन 'बनारस थियेटर' में सन् 1868 में हुआ था। इस नाटक में भारतेंदु द्वारा लक्ष्मण का किरदार निभाने के बावत उनकी नाटकीय शैली और उनके अभिनय की सूझ-बूझ की भूरी-भूरी प्रशंसा की गई थी।

आधुनिक हिंदी साहित्य और हिंदी रंगमंच के जनक भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म बनारस में 9 सितंबर को 1850 में हुआ था। आधुनिक हिंदी साहित्य के लिए 35 वर्षों तक बहुत सेवा करने के बाद, वर्ष 1885 में 6 जनवरी को उनका निधन हो गया। वह अपने महान कार्यों के लिए विश्व विख्यात हैं। वें आधुनिक भारत के सर्वोच्च एवं प्रसिद्ध हिंदी लेखकों, उपन्यासकारों और नाटककारों में से एक थे। रामविलास शर्मा सन् 1953 में अपने कवि मित्र केदार नाथ अग्रवाल को पत्र लिखते है जिसमें भारतेंदु के बारे में बताते है- "वाह क्या गजब का आदमी था... दस साल में पत्रकार, नाटककार, कवि, इतिहासकार वह क्या नहीं रहा और नई चाल की हिंदी ढ़ालने वाला अलग से।"[17] वह कई भाषाओं जैसे बंगाली, गुजराती, मराठी, मारवाड़ी, पंजाबी आदि में माहिर थे। ऐसा माना जाता है कि उन्होंने अपने 5 साल की उम्र में कविता रचनी शुरू कर दी थी। हिंदी साहित्य और रंगमंच के नए युग की शुरुआत के रूप में उन्हें अपनी पहचान मिली, जिसने उन्हें 'आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक' बना दिया और इस काल खण्ड को भारतेंदु युग के नाम से हिंदी साहित्य में एक ख़ास पहचान भी मिली। हिंदी रंगमंच के अग्रणी, भारतेन्दु ने लगभग 20 नाटक लिखे। उनके नाटकों में संगीत एक अनिवार्य तत्व था। उनके द्वारा रचित नाटकों में 'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति' (1873), 'भारत दुर्दशा'

---

[17] शर्मा, रामविलास, मित्र संवाद, पत्रीका, सन् 1953, पृष्ठ - 102

(1880), 'नीलदेवी' (1881), 'अँधेर नगरी' (1881), 'श्री चंद्रावली' (1876) आदि, रूपांतरित नाटक 'सत्य हरिश्चंद्र' (1875), 'विद्यासुंदर' (1868) तथा कुछ प्रमुख अनुदित नाटक 'कर्पूर-मंजरी' (1875), 'भारत जननी' (1877), 'मुद्राराक्षस' (1878) आदि प्रमुख हैं। ...इन नाटकों की रचना में उन्होंने मध्यम मार्ग का आलंबन किया। न तो बंगला की नाटकों की तरह प्राचीन भारतीय शैली को एक बार की होड़ पे अंग्रेजी नाटकों की नकल पर चले और न प्राचीन नाट्य शास्त्रों की जटिलता में अपने को फंसाया।[18] भारतेंदु हरिशचंद्र न केवल नाट्य रचना में माहिर थें बल्कि अभिनय तथा निर्देशन कला के क्षेत्र में भी उन्हें उच्च दर्जा प्राप्त था। भारत में पहले से चली आ रही नाट्य शैली को बदलने में भारतेंदु ने मुख्य भूमिका निभाई है।

"अंधेर नगरी चौपट राजा ।

टके सेर भाजा टके सेर खाजा ।।"

इस प्रश्नोत्तर के बहाने पाठक अंतर वस्तु के नाटकीय बीज-अभिप्राय को पकड़ लेता है। जिसके कारण यह लोकोक्ति जनता के ज़ुबान पर सहज ही चढ़ जाती है। भारतेंदु के नाटकों की रंगमंचनीयता इससे भी सहज ही सिद्ध हो जाती है। जयशंकर प्रशाद ने अपने 'रंगमंच' निबंध में कहा है कि - "भारतेंदु महत्वपूर्ण इसलिए है कि उनमें लोकधर्मी और नाट्यधर्मी तत्वों का सार्थक समन्वय है।"[19] भारतेंदु अपने नाटकों के माध्यम से समाज और आम जीवन के नज़दीक जाने कि पहल की। इस पहल में भारतेंदु के

---

[18] हरिश्चंद्र, भारतेंदु, अंधेर नगरी चौपट राजा, मूल्यांकन, पृष्ठ-10

[19] प्रसाद, जयशंकर, रंगमंच निबंध

समकालीन नाटककार 'लालाश्री निवास दास', 'पं. बाल कृष्ण भट्ट', 'श्री निवास दास', 'प्रताप नारायन मिश्र', 'अंबिका दत्त व्यास', 'राधा कृष्ण दास', 'बद्रीनारायण चौधरी' (प्रेमधन), 'राधा चरण गोस्वामी', 'देवकी नंदन त्रिपाठी', 'काशी नाथ खत्री', 'राय देवी प्रसाद' आदि ने भी अपने स्तर पर भूमिका निभाई। इन नाटककारों ने हिंदी रंगमंच की प्रस्तुति हेतु अपनी-अपनी मंडलियाँ भी बनाई। हिंदी साहित्य जगत में भारतेंदु का उदय सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जागरण का संदेश लेकर आया। रीतिकालीन प्रवृत्तियों को त्याग कर अब साहित्यकार जन-जीवन के निकट आने का प्रयास करने लगा।.... भारतेंदु तथा उनके समकालीन लेखक अपनी समसामयिक समाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक, गतिविधि तथा कार्यप्रणाली के यथार्थ के प्रति पूर्ण जागरूक थे। उन्होंने अपने नाटकों का प्रयोग इस यथार्थ को वाणी देने में किया है।[20] भारतेंदु युग से हिंदी रंगमंच के पुनरुत्थान की यात्रा अभूतपूर्व रही है। इस युग के हिंदी नाटक ने विविध शैली, विषय, निर्देशक, अभिनेता, नाटककार आदि को जन्म दिया।

इस युग के हिंदी नाटक के कथावस्तु के बारे में कहा जाये तो इस समय के नाट्य लेखन को देखने से ज्ञात होता है कि इस युग में नाटक की कथावस्तु मुख्य रूप से सामाजिक और राष्ट्रीय रही है। इसके अलावा पहले से चली आ रही पौराणिक नाटक भी लिखे जा रहे थे। हिंदी नाटक के शुरूआत में विशेष रूप से नाट्य लेखन पर जोर दिया गया। इस समय की नाट्य प्रस्तुतियों में भारतीय शास्त्रीय रंगमंच के साथ ही पारसी रंगमंच के अंश देखने को मिलते हैं। हिंदी के रंगमंच प्रेमियों ने जिस पारसी

---

[20] https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97988/5/05_chapter%202.pdf

रंगमंच के शैलियों को नकारते हुए हिंदी रंगमंच की नीव रखी उसे वो पूर्ण रूप से हिंदी से नहीं निकाल सके। कारण स्पष्ट था - दर्शक। दर्शक रंगमंच का एक बहुत बड़ा हिस्सा है और उस समय दर्शक पारसी रंगमंच की शैलियों की आदि हो चुकी थी। कमोबेश यही कारण भी रहा कि दर्शक वर्ग से जुड़ने के लिए हिंदी रंगमंच में पारसी रंग शैलियों का अंश शामिल किया गया। इस संबंध में डॉ गोविंद चातक लिखते है, "जिस पारसी रंगमंच के नाटकों से भारतेंदु और उनके सहयोगियों को परहेज था, स्वयं उनके अपने नाटक उन दोषो से युक्त थे। भारतेंदु से लेकर प्रसाद तक पारसी रंगमंच की प्रवृत्तियों से ग्रस्त दिखायी देते हैं। बाहर से पारसी नाटक का विरोध करने के बावजूद अंदर से सभी उसकी प्रवृत्तियों से ग्रस्त थे।"[21] बावजूद इसके भी हिंदी नाट्य जो कि एक नया नाट्य आंदोलन था, इस आंदोलन के पक्ष में अनेक नाटक मंडलियाँ अपने आप को अस्तित्व में ला खड़ा किया। हर मंडलियाँ नाटक प्रस्तुति में अपनी मंडली से जुड़े हुए नाटककार को प्राथमिकता देती थी लेकिन इसके अलावा भी अन्य नाटकारों के प्रसिद्ध नाटकों की प्रस्तुतियाँ हुआ करती थी। इन मंडलियों में ज्यादातर मंडलियां अव्यवसायिक थी। जैसे 'कवितावर्द्धिनी सभा'(1870), 'नेशनल थियेटर' (1884), 'रामलीला नाटक मंडली' (1898), 'जैन नाटक मंडली' (1903), 'नागरी नाट्य कला संगीत मंडली' (1907), 'नागरी नाटक मँडली' (1909), 'भारतेंदु नाटक मंडली' (1909) आदि।

किसी भी नाटक में दृश्य सज्जा उस नाटक के रस और भाव को जागृत करने में अपनी अहम् भूमिका निभाती है। हर नाटक की अपनी एक समय सीमा होती है, उसका

[21] चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टि, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-167

अपना एक माहौल होता है। उस समय सीमा और माहौल को व्यक्त करने में दृश्य सज्जा और उस दृश्य परिकल्पना से उक्त नाटक के मुख्य रस-भाव को जागृत करने में बखूबी भूमिका होती है। दृश्य परिकल्पना की दृष्टि से भारतेंदु युग के हिंदी नाटक को देखें तो पाते है कि इस समय जो भी नाटक रचे गये, उसमें परदे और दृश्य को ध्यान में रखते हुए नाटक रचे गये हैं और एक बात ध्यान देने योग्य है कि भारतेंदु ने जिस रंगमंच की परिकल्पना की थी वो रंगमंच जनसमूह के लिए था। इसमें किसी प्रकार की बनावट या आडंबर के लिए कोई जगह नहीं थी। भारतेंदु के नाटकों की संरचना से स्पष्ट है कि उन्होने पारंपरिक मंच की रूढ़ियों और व्यवहारों को आधार बनाते हुए सादगी भरे रंगमंच की परिकल्पना की होगी।[22] इस युग के दृश्य परिकल्पना को विस्तार से समझने के लिए हम भारतेंदु के निबंध 'दृश्यकाव्य' अथवा 'नाटक' को संदर्भ स्वरूप में देख सकते हैं। अंततः इस युग के दृश्य परिकल्पना के बारे में कह सकते हैं कि हिंदी रंगमंच का अपने शुरूआती दौर में दृश्य परिकल्पना पर कोई खास नज़र न थी।

भारतेंदु युग के रंगमंच में नाटककार, अभिनेता और रंगमंडली इन सभी का एक साथ मेल देखने को मिलता है। इस समय के अधिकांश नाटककार के पास अपनी मंडली या हर मंडली के पास अपना नाटककार हुआ करता था और अधिकांश नाटककार अपने नाटक के अभिनेता भी हुआ करते थे। इस समय के नाटककार 'भारतेंदु', 'राधाकृष्ण दास', 'प्रताप नारायण मिश्र', 'बालकृष्ण भट्ट', 'बदरीनारायण चौधरी', 'माधव शुक्ल' आदि अपने समय में जाने-माने अभिनेता भी रह चुके है। इससे नाटककारों को एक लाभ

[22] पुस्तक नाम, प्रकाशन और लेखक - अज्ञात, पृष्ठ-189

अवश्य रहता होगा कि जिस भाव से नाटककार ने नाटक की रचना की है उसे वो उसी रस-भाव में खेलते होंगे। कारण स्पष्ट है निर्देशक चाहे कितना भी स्क्रिप्ट के साथ छेड़-छाड़ कर ले लेकिन अंततः एक नाटककार हमेशा अपने नाटक को उसी भाव में देखना पसंद करता है जिस भाव में उसने नाटक को रचा है। ठीक इसी प्रकार निर्देशक, नाटककार चाहे कितना भी अभिनेता को समझा लें लेकिन अंततः एक अभिनेता हमेशा अपने मनः स्थिति के अनुरूप ही किसी नाटक को अभिनित करता है। "मंच पर प्रस्तुति से पूर्व नाटककार और निर्देशक जितने भी कल्पनाशील हों अंततः नाटक दोनों के हाथो से छूटकर अभिनेताओं के हाथ में आ जाता है। अभिनेताओं के वैशिष्टय को बताते हुए नेमिचंद्र जैन इस प्रकार लिखते हैं कि - निर्देशक तथा रंगशिल्पी- सभी का प्रयास अंततः अभिनेता के सृजन कार्य को अधिक से अधिक सक्षम, अभिव्यंजनापूर्ण और प्रभावी बनाने के लिए होता है। अभिनेता ही नाटककार के साथ वह सर्व प्रमुख और केंद्रीय सृजन शील घटक है जिसके कारण प्रदर्शन को एक प्रभावशाली और संश्लिष्ट कला विधा का दर्जा मिलता है। प्रतिभावान कुशल तथा कल्पनाशील अभिनेता के बिना, अन्य सारे तत्व चाहे जितने सक्षम और सशक्त हो, वे कोई नाट्यनुभूति की, कलात्मक नाट्य सृष्टि की रचना नहीं कर सकते।"[23] जहाँ पर एक नाटककार ही अभिनेता है तो स्पष्ट है कि वो अपनी नाट्य रचना के प्राथमिकता के आधार पर अभिनय की कल्पना करेगा। भारतेंदुयुगीन नाटक अभिनेयता एव रंगमंचनियता की दृष्टि से अत्यधिक सफल है क्योंकि भारतेंदु तथा उनके सहयोगी स्वयं नाटकों में काम करते थे और आवश्यकतानुसार रंगमंच में सुधार

---

[23] पोतुराजु, रेड्डी वेंकट, हिंदी नाटक: परिवर्तन के विविध आयाम (1950 से 2000 तक), पृष्ठ-223

करते थे।[24] उपर्युक्त संदर्भ से स्पष्ट है कि इस समय रंगमंच के अभिनय भाग से ज्यादा नाट्य लेखन को अहमियत दी जा रही थी। अंततः इस दौर में अभिनय की बात की जाये तो इस युग में अभिनय मुख्य केंद्र में न था। जिस तरह भारतीय (संस्कृत) रंग परंपरा के पंचमवेद नाट्यशास्त्र में अभिनय के चार अंग आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक बताये गये हैं। भारतेंदु युग में इसे उस रूप में जगह नहीं मिली। किसी भी कार्य के बीच में जहाँ पर प्रतियोगिता कि भावना आ जाती है तो मुख्यतः वहाँ पर कार्य का मूल स्वरूप खोने लगता है और वहाँ पर प्रयोगात्मक कार्य अपनी जगह बनाने लगता है। इस समय के हिंदी और पारसी नाटक भी कहीं न कहीं एक दूसरे से प्रतियोगिता में थे । जिस तरह पारसी नाटककारों ने अपने प्रचार-प्रसार या व्यवसाय के लिए नाट्य दृश्य, पोशाक, संगीत, संवाद, अभिनय आदि में रूपों में परिवर्तन कर अपने नाटकों को एक अलग रूप दिया वह भारतीय हिंदी या नाट्य प्रेमियों को रास नहीं आया। उसी के विपरीत हिंदी रंगमंच ने राष्ट्र भावना एवं भारतीय संस्कृति का मुद्दा लेकर अपने को अस्तित्व में ला खड़ा किया और इस होड़ में रंगमंच के अभिनय अंग पर हिंदी रंग - प्रेमियों का कोई खास ध्यान नहीं गया। विशेष रूप से उनके द्वारा राष्ट्र भावना एवं भारतीय संस्कृति के ऊपर हिंदी रंगमंच की नींव रखी गयी।

इस काल में भारतेंदु ने संगीत को भी विशेष महत्तव दिया। मई सन् 1879 के आस-पास भारतेंदु ने 'जातीय संगीत' जैसे विषय पर लिख कर पहली बार ग्राम गीतों के मर्म को उकेरा था तथा उनकी सामाजिक उपयोगिता की ओर ध्यान आकृष्ट किया।

[24] https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97988/5/05_chapter%202.pdf , पृष्ठ-59

डॉरामविलास शर्मा लिखते है कि, "यह सब लोग जानते है कि जो बात साधारण लोगों में फैलेगी उसी का प्रचार सार्वदेशिक होगा और यह भी विदित है जितना ग्राम गीत फैलते हैं और जितना काव्य को संगीत द्वारा सुनकर चित्त पर प्रभाव होता उतना साधारण शिक्षा से नहीं होता।"[25] कह सकते है कि यह भारतेंदु के नाट्य रूप संबंधी समझ थी जिसके बल पर उन्होंने एक रात में 'अंधेर नगरी' जैसे नाटक की रचना कर डाली। भारतेंदु ने नाटक को एक विशेष अर्थ में खेल कहा है और माना है कि जहाँ संगीत का आधार पुष्टित होगा वहीं नाटक अधिक विकसित होगा। इसके बावजूद भी अगर हम इस युग के नाटकों को ग़ौर करें तो हमें प्राप्त होता है कि पारसी रंगमंडलियाँ अपने नाटकों में जिस तरह से संगीत को विशेष महत्व देती आ रही थी, संगीत का वैसा महत्व, इस युग के हिंदी नाटकों में कम देखने को मिलता है। यहाँ संगीत के दोनों रूप- गायन और वादन के संदर्भ में यही स्थिति रही थी। इस युग के नाटकों में जीवंत (लाइव) संगीत का प्रयोग होता था, कारण कि संगीत की रिकार्डिंग उपलब्ध नहीं थी। इस समय के हिंदी नाटकों से ज्ञात होता है कि संगीत नाटक के लिए अंग है लेकिन कोई विशेष अंग नहीं है। हिंदी नाटकों में संगीत का विशेष रूप से स्थान भारत में स्वतंत्रता के बाद देखने को मिलता है। इस संदर्भ में रेड्डी वयंकट पोतुराजु लिखते है, "पचास के पूर्व के नाटकों में संगीत केवल नृत्य को सहारा देने वाले माध्यम के रूप में लेते थे लेकिन पचास के बाद के नाटकों में संगीत या ध्वनि उपकरणों को दृश्य योजना में इस्तेमाल करना शुरू हुआ। एक दृश्य के समाप्त होने पर संगीत का विधानकर दूसरे दृश्य का आरंभ करना एक पद्धति

[25] शर्मा, डॉ. रामविलास, भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा, राज कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975, पृष्ठ-12

है। कथा गायन के साथ दृश्यों का आरंभ करना एक अन्य पद्धति है। इस पद्धति को लोक नाट्य शैली से लिया गया है। अभिनेता को मार्मिक बनाने में और पात्रों की कुंठाओं को स्पष्ट कराने में संगीत की सहायता से पचासोत्तर नाटककार अनेक सुनियोजित प्रयोग के साक्षी बने हैं।"[26]

अंततः निष्कर्ष स्वरूप में कहा जाये तो भारतेंदु युग में मुख्य रूप से हिंदी रंगमंच अपने अस्तित्व में आया। जो एक आंदोलन के रूप में आरंभ हुआ था। जिसका मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति, परंपरा, राष्ट्र भक्ति आदि जैसे मुद्दों को उजागर करना था। इस समय के नाटक के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इस समय नाटक में नाटक के साहित्यिक पक्ष का खूब बोलबाला रहा। बाकि नाटक के अन्य अंग जैसे अभिनय, निर्देशन, सज्जा आदि पर विशेष कार्य देखने को नहीं मिलते हैं। पारसी रंगमंच जैसी व्यावसायिक मंडलियों के सामने अनेक अव्यवसायिक मंडलियां हिंदी रंगमंच के पक्ष में बनीं। भारत के हिंदी भाषी क्षेत्र के अलावा अन्य भाषी क्षेत्र से जुड़ने के लिए वहाँ के साहित्य नाटक को हिंदी में अनुवाद करने का कार्य भी खूब जोर-शोर से हुआ।

हिंदी रंगमंच के आरंभिक दौर अर्थात भारतेंदु युग लगभग सन् 1850 ई. से सन् 1900 ई. तक माना जाता है। इसके बाद द्विवेदी युग जो लगभग सन् 1900 ई. से 1920 ई. माना जाता है। इस युग में अर्थात भारतेंदु युग के बाद और प्रसाद युग के आरंभिक काल से पहले का समय, हिंदी नाटक के लिए एक श्राप साबित हुआ। इस समय हिंदी नाटकों में कोई उन्नति नहीं देखने को मिलती है। ई-ज्ञानकोश वेबसाइट पर

---

[26] पोतुराजु, रेड्डी वेंकट, हिंदी नाटक: परिवर्तन के विविध आयाम (1950 से 2000 तक), पृष्ठ-237-238

प्रकाशीत लेख के अनुसार, “हिंदी के मौलिक साहित्यिक नाटकों की दृष्टि से भारतेंदु के बाद एक ठहराव सा आ गया। उनके परवर्ती नाटककारों में कोई भी इतनी विशिष्ट प्रतिभा और नाटकीय कौशल से सम्पन्न न था जो इस युग में भारतेंदु के स्थान को ग्रहण करता।”[27] हिंदी रंगमंच के द्विवेदी युग में ही भारतीय सिनेमा का श्री गणेश होता है। हालांकि भारतेंदु युग के उतरार्द्ध के अंत अर्थात सन् 1896 ई. में ही भारत में सिनेमा का आगमन हो जाता है लेकिन सन् 1913 ई. में फिल्म ‘राजा हरिश्चंद्र’ से भारतीय सिनेमा का शुरूआत होती है। अब तक जिस भारत में एक मात्र रंगमंच ही मनोरंजन का साधन या आवाम की आवाज़ हुआ करती थी तब से वहाँ सिनेमा ने भी अपना हाथ बँटाना शुरू कर दिया।

1.3. भारतीय मूक सिनेमा कालीन हिंदी रंगमंच

भारतीय मूक सिनेमा काल से हमारा तात्पर्य है सन् 1913 से सन् 1930 ई. लेकिन जैसा कि हमें ज्ञात है कि सन् 1896 ई. में ‘लुमियर बंधु’ द्वारा भारत में सिनेमा का आगमन हुआ। भारत में पहली बार फिल्मों का प्रदर्शन बंबई के वॉटसन होटल में हुआ जिसका श्रेय लुमियर बंधु को जाता है। भारत में फिल्म के प्रथम प्रदर्शन के गवाह रह चुके ‘हरिश्चंद्र सखाराम भाडवेडकर’ ने सन् 1897 से ही ‘लुमियर बंधु’ के तर्ज़ पर फिल्में बनानी शुरू कर दी थी लेकिन भारतीय सिनेमा का अस्तित्व ‘दादा साहब फाल्के’ द्वारा बनाई गई फिल्म ‘राजा हरिश्चंद्र’ से मानी जाती है जिसका सन् 1913 ई. में प्रथम प्रदर्शन हुआ था और इसे भारतीय सिनेमा का पहला मूक सिनेमा भी कहते है।

---

[27] http://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/66384/1/Unit11.pdf -पृष्ठ-57

हालांकि कुछ सिनेमा विद्वान, मूक सिनेमा काल की अवधि सन् 1896 ई. से 1930 ई. तक मानते है। काल विभाजन में जो भी सटीक हो ये तो एक बात हो गई लेकिन यहाँ मुख्य बात यह रही कि सिनेमा के आ जाने से दर्शकों का बँटवारा होने लगा। एक ओर रंगमंच तो दूसरी ओर सिनेमा। सिनेमा के शुरूआती दौर में टिकट दर अधिक होने के कारण यह उच्च तबके के लोगों या रईस लोगों के मनोरंजन का साधन हुआ करती थी लेकिन बहुत ही जल्द यह आम लोगों के बीच भी अपना जगह बनाने में सफल रही।

भारत के धरती पर सिनेमा का आगमन उस समय होता है जिस समय भारतीय, अंग्रेजों की गुलामी से तंग आ चुके थे और स्वतंत्रता आंदोलन की चिंगारी आग के रूप मे तब्दील होती दिख रही थी। इस समय सिनेमा ने लोगों के मानसिक तनाव को कम करने में बखूबी अपनी भूमिका निभाई। लेकिन वही सिनेमा रंग प्रेमियों के लिए, उन्हें उनकी सौतन की भाँति प्रतीत हुआ। कारण स्पष्ट था कि जिस दर्शक के पास अब तक अपने मनोरंजन या मानसिक तनाव दूर करने के लिए एक मात्र रंगमंच ही सहारा था अब वहाँ सिनेमा भी आ पहुँचा। अब दर्शक अपने इच्छानुसार पसंद कर सकते हैं कि उन्हें रंगमंच का दर्शक होना है या सिनेमा का। दर्शक, कलाकार का आकर्षण होता है वो कलाकार को अपनी ओर आकर्षित करता है ताकि वो अपने कला के हुनर से दर्शकों के दिलों पर राज़ कर सकें और यह भी एक कारण रहा कि भारत में सिनेमा के आ जाने के बाद रंगमंच कलाकार सिनेमा के ओर अग्रसर होने लगें।

उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में भारतीय रंगमंच में एक नए युग की शुरूआत होती है जिसे 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है। भारत में सिनेमा का आगमन

काल हिंदी रंगमंच के लिए वो दौर था जब रंगमंच के दृष्टी से 'भारतेंदु काल' अपनी अंतिम साँसें ले रहा था और द्विवेदी काल का उदय हो रहा था। हालांकि यह एक और बात है कि जितनी जल्दी सिनेमा उच्च श्रेणी के लोगों से होकर आम लोगों तक आ पहुँचा था उतनी ही जल्दी रंगमंच के दृष्टी से द्विवेदी युग का अंत और प्रसाद युग का उदय भी हो गया था। डॉ. अज्ञात ने अपने पुस्तक 'भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास' में काल विभाजन को समाझाते हुए सन् 1896 ई. से सन् 1915 ई. को 'द्विवेदी युग' न कहकर 'बेताब युग' कहना ज्यादा उचित समझा है। अधिकांश विद्वानों ने भारतीय या हिंदी रंगमंच के दृष्टि से इसे 'द्विवेदी युग' ही माना है। "प्रो. तारक नाथ वाली ने अवधी - निरधार्ण के बिना नाटक के संपूर्ण इतिहास को चार कालों में बाँटा है। भारतेंदु काल, द्विवेदी काल, प्रसाद काल और प्रसादोत्तर काल। डॉ. प्रेम शंकर ने भी लगभग इसी विभाजन को माना है।"[28] इस समय काल में हिंदी रंगमंच बस अपनी साँसे ले रहा था। जिस जोश, उम्मीद और मकसद के साथ भारतेंदु ने हिंदी रंगमंच की नींव डाली थी वो सारे के सारे जोश, उम्मीद और मकसद पर उनके मृत्यु के बाद धुँध पड़ जाती हैं या यूं कह सकते हैं कि इस काल में हिंदी रंगमंच के क्षेत्र में कोई ऐसा विद्वान हुआ ही नहीं कि भारतेंदु के जगह ले सके। कारण जो भी रहा हो अंततः इस काल में हिंदी रंगमंच सिर्फ अपने अस्तित्व को बचाने में सफल रही है। जिस रंगमंच को पारसी रंगमंच का नाम दिया गया और जिसे वर्षों पहले हिंदी प्रेमियों द्वारा नकारा गया था वो इस काल में हिंदी भाषा में अपनी नाटकों की प्रस्तुति कर लोगों का ध्यान आकर्षण का

---

[28] डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-184

केंद्र बना रहा लेकिन इसके बावजूद भी उसे हिंदी रंगमंच में कोई स्थान प्राप्त नहीं है। अब धीरे-धीरे पारसी रंगमंच के दर्शक भी सिनेमा की ओर बढ़ने लगे थे। सन् 1915 ई. तक हिंदी रंगमंच के किसी भी अंग में कोई वृद्धि नहीं देखने को मिलती है। यहाँ तक कि भारतेंदु युग में नाट्य रचना पर जो विशेष ध्यान दिया गया था वो भी न के बराबर देखने को मिलता है। हाँ, एक बात अवश्य है कि इस काल में भी सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, प्रेम प्रधान, प्रहसन आदि पक्ष को रखते हुए नाटक की रचना हुई लेकिन ये सारे पहले से हिंदी रंगमंच को बढ़ावा देने के लिए काफी सिद्ध नहीं हुआ। आसिया बेगम के अनुसार, "नाट्य - रचना के क्षेत्र में भारतेंदु काल के रचनाकारों ने जो कार्य किया था उसका सर्वागीन विकास तो द्विवेदी काल में नहीं हुआ, किंतु नाट्य रचना की परंपरा निरंतर विकसित होती रही।"[29] नाटक के कम्रिक विकास को लेकर अनेकों प्रयास भी किये गये लेकिन वो कोशिश भी कोई खास असर नहीं दिखा पाया। द्विवेदी युग नाट्य साहित्य की दृष्टि से सबसे कम समृद्ध है। इस काल में मौलिक नाटकों के सृजन में कमी आई। ऐसा लगता है कि नाटकीय गतिविधि धीरे-धीरे काफ़ी कम हो गई थीं। भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय में जो नाटक मंडलियाँ थीं, वे व्यावसायिक तो थीं नहीं, इसलिए समय के साथ वे काल के गाल में समा गईं। इस युग के प्रसिद्ध रंगकर्मी एवं उच्च कोटि के अभिनेता माधव शुक्ल ने अव्यवसायिक रंगमंच को फिर से जिन्दा करने की कोशिश की।[30] इस समय मुख्य रूप से दो तरह के रंगमंच हो रहे थे। एक शौकिया या साहित्यिक और दूसरा मनोरंजन पूरक या व्यावसायिक। मनोरंजन से तात्पर्य है जो

[29] बेगम, आसिया, सोठात्तर युगीन नाटक और जगदीश चंद्र माथुर, अध्याय-2, पृष्ठ-56

[30] https://bharatdiscovery.org/india/द्विवेदी_युग

व्यावसायिक पारसी रंगमंच वर्षो से चली आ रही थी और शौकिया या साहित्यिक रंगमंच वो रंगमंच जो भारतेंदु के बताये मार्ग पर चलने कि कोशिश में तत्पर्य थे जिसने हिंदी रंगमंच को बचाये रखने का कार्य भी किया। इस नाट्य को बढ़ावा देने के उद्देश्य से द्विवेदी युग में 'रामलीला नाटक मंडली', 'नागरी नाटक मंडली', 'नवयुवक समिति' आदि संस्थाओं का गठन भी हुआ। 'पं. माधव शुक्ल' 'रामलीला नाटक मंडली' के संस्थापक थे। जो खुद एक रंगकर्मी और अभिनेता रह चुके हैं।

अंततः भारतेंदु के मृत्यु साल से 1910 ई. को 'महावीर प्रसाद द्विवेदी' के समय काल से देखे तो कह सकते हैं कि यह हिंदी रंगमंच के लिए अंधकार युग के रूप में था। हिंदी नाटक के जिस साहित्यिक पक्ष का बोलबाला भारतेंदु काल में देखने को मिलता है वो इस समय बिल्कुल ही नगण्य हो जाता है। 'महावीर प्रसाद द्विवेदी', 'राम नारायण मिश्र', 'ब्रज चंद वल्लभ', 'गंगा प्रसाद', 'गिरधर लाल', 'नारायण सहाय',' 'रमगुलाल लाल' 'शिव नंदन', 'बृज नंदन सहाय', 'महावीर सिंह', 'गौर चरण गोस्वामी', 'सुदर्शनाचार्य', 'कुशी राम', 'बाँके बिहारी लाल', 'बिंदेश्वरी दत्त शुक्ल', 'लक्ष्मी प्रसाद', 'हनुमंत सिंह क्षत्री,' 'शिवनंदन मिश्र', 'बद्री नाथ भट्ट' आदि जैसे कुछ साहित्यकार हिंदी नाट्य साहित्य में अपना योगदान देते हैं लेकिन वो पहले से चली / बनी आ रही हिंदी नाट्य साहित्य के लिए काफी नहीं होता है कि उसके दम पर हिंदी रंगमंच अपनी साँसें ले सके। वहीं अगर हम डॉ. सोमनाथ गुप्त कृत पुस्तक 'हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास' को देखे तो उन्होंने इस समयावधि को 'बेताब युग' नाम दिया है जो हिंदी रंगमंच में अंधकार युग आने नहीं दिया। जिस पारसी रंगमंच को अधिकांश हिंदी रंग प्रेमियों द्वारा नकारा गया। उसी पारसी-हिंदी मंडलियों के रंगमंच ने अपने नाटक के दम पर हिंदी रंगमंच के गरिमा

को बनाये रखा। अगर कोई भी नाट्य या रंगमंच सिर्फ साहित्य तक ही सीमित रहता है तो फिर उसे सिर्फ साहित्य कहना ज्यदा उचित होगा। और यही स्थिति 'द्विवेदी' काल में होता है। हिंदी रंग साहित्य के प्रमाण तो मिलते है लेकिन वहीं नाट्य प्रस्तुतियों का अध्ययन करें तो बिल्कुल न के बराबर आकड़ा प्राप्त होता है। द्विवेदी युग में संख्या की दृष्टि से नाटक अधिक लिखे गये लेकिन प्रतिभाशाली नाटककारों का अभाव ही रहा है। इस काल में नाटकीय शैली एवं शिल्प-विधान में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हुआ।[31] इस काल में 'रामलीला नाटक मंडली', 'नागरी नाटक मंडली', 'नवयुवक समिति' आदि जैसे कुछ संस्थाएं हिंदी नाट्य प्रस्तुतियों का खाना-पूर्ति करती दिखती हैं। वो भी उत्तरप्रदेश तथा इसके आस-पास के इलाकों में जहाँ पहले से हिंदी भाषा/रंगमंच का बोलबाला रहा है लेकिन इसी काल को 'बेताब युग' कि दृष्टि से देखा जाये अर्थात पारसी हिंदी नाट्य मंडलियों कि बात की जाये तो उसने पारसी शैली में ही सही लेकिन उन्होंने हिंदी रंगमंच की निरंतर प्रस्तुति करते आये हैं और उन्होंने हिंदी नाट्य की प्रस्तुति उन क्षेत्रों जैसे महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, पंजाब आदि में भी दिये जहाँ हिंदी भाषा प्रचलन में न थी। "...बेताब युग के प्रायः सभी मौलिक एवं अनुदित नाटक व्यवसायिक दृष्टि से मंचस्थ किये गयें। इसका श्रेय बंबई और कलकत्ते की पारसी हिंदी नाटक मंडलियों अथवा उनके अनुकरण पर बनी गुजरात, उत्तरप्रदेश और पंजाब की नाटक मंडलियों को है, जिन्होंने अपने मुख्यालयों के अतिरिक्त समस्त उत्तरी भारत में घूम-घूम कर हिंदी नाटक

---

[31] http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97169/7/07_chapter-2.pdf (द्वितीय अध्याय, आधुनिक हिंदी नाटक का विकास, पृष्ठ-45)

दिखलाये।"[32] सही मायने में भारतेंदु के मृत्यु के बाद पारसी-हिंदी नाटक मंडलियों ने हिंदी रंगमंच को बचाये रखने का कार्य किया या 'प्रसाद' तक पहुँचाने का कार्य किया। नाटक के साहित्यिक पक्ष के अलावा नाटक के अन्य अंग की स्थिति इस काल में भारतेंदु काल की भांति ही बनी रही। यहाँ तक भारतेंदु काल में नाटक के साहित्यिक पक्ष जो अपने को मजबूत किये था, वो भी इस काल में कमजोर पड़ जाता है। चाहे हम अभिनय की बात करें या निर्देशन की, सज्जा की बात करें या फिर दर्शक की। हर क्षेत्र में किसी प्रकार का कोई विकास देखने को नहीं मिलता है। प्रयोग की दृष्टि से देखे तो इस काल में मंच प्रकाश हेतु फिल्मों की भांति बिजली का प्रयोग किया जाने लगा था।

हिंदी नाटक में विकास की दृष्टि से भारतीय मूक सिनेमा का आरंभिक काल अर्थात सन् 1913 ई. सार्थक साबित हुआ। सन् 1910 ई. के बाद हिंदी नाट्य क्षेत्र में एक विशेष नाम उभर कर आता है। जिन्होंने अपनी रचना के दम पर हिंदी नाटक को पुनः दुरुस्त किया। 'जय-शंकर प्रसाद' कि पहली पहचान या साहित्य रचना का शुभारंभ एक कवि के तौर पर हुई बाद में इन्होंने खुद को हिंदी नाटक से जोड़ने का कार्य किया। प्रसाद वेद-पुराण, इतिहास, धर्म, दर्शन आदि का विशेष रूप से जानकार व्यक्ति थें और यही सब कारण रहा कि वो भारतीय संस्कृति के प्रति अपनी सोच को प्रबल बना सके। डॉ. सोमनाथ गुप्त अपनी पुस्तक 'हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास' में प्रसाद के बारे में लिखते है - "भाषा, भाव, विचार, अन्वेषन, अध्ययन आदि सभी आवश्यक ज्ञान संबंधी

---

[32] डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-259

मान्यताओं से सुसज्जित होकर प्रसाद ने नाटक भूमि में प्रवेश किया।"[33] जय-शंकर प्रसाद ने पुनः हिंदी रंगमंच को एक नए अवतार में लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया। यह भी सत्य है कि अनेक आलोचकों ने प्रसाद के नाटक को मंच के दृष्टि से नहीं बल्कि साहित्य के दृष्टि से अपनाया है। उनके अनुसार प्रसाद ने जो नाटक रचे हैं वो साहित्य तक तो सही हैं लेकिन जैसे ही उसकी प्रस्तुति/मंचन की बात आती है तो वह सार्थक साबित नहीं होती हैं। हालांकि इस विषय को लेकर जयशंकर जी ने एक बात स्पष्ट की है कि रंगमंच के लिए नाटक नहीं बल्कि नाटक के लिए रंगमंच होना चाहिए अर्थात हमारे पास जो नाट्यशाला उपलब्ध होती है उसी को आधार मानकर नाटककार नाटकों की रचना करते हैं लेकिन प्रसाद जी का मानना था कि हमें अपने कल्पना शक्ति का पूर्ण इस्तेमाल कर नाटक रचना चाहिए उस समय नाट्यशालाएं बीच में किसी प्रकार के कोई बाधा न बन जाये। जब इस नाट्य की प्रस्तुति होगी तो इसके हिसाब से नाट्यशालाओं की रचना की जाये। प्रसाद जी ने अपने नाटकों के माध्यम से ऐतिहासिक, सामाजिक, दार्शनिक, राष्ट्रीय आदि पक्षों पर बल देने का प्रयास किया है। उनके नाटकों को हिंदी में सबसे अग्रणी माना जाता है। उनमें से अधिकांश प्राचीन भारत की ऐतिहासिक कहानियों के इर्द-गिर्द घूमती हैं। उनमें से कुछ पौराणिक भूखंडों पर भी आधारित थे। प्रसाद ने लगभग तेरह नाटकों की रचना की जो निम्न हैं: 'सज्जन', 'प्रायश्चित', 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'ध्रुव स्वामिनी', 'आजातशत्रु', 'विशाख', 'जन्मेजय का नागयज्ञ', 'राजश्री', 'एक घूंट', 'अग्नि मित्र' आदि। इन नाटकों के सूक्ष्म अध्ययन से प्रसाद जी के गवेषणा और नाट्य शक्ति का पता चलता है। प्रसाद के नाटक पूर्ववर्ती नाटकों की तुलना में अधिक गहरे और

---

[33] गुप्त, सोमनाथ, हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास,

गंभीर चिंतन को रेखांकित करने वाले हैं। नेमिचंद्र जैन के शब्दों में 'अपनी इस विशेष युगीन स्थिति और उससे उत्पन्न भाव तिव्रता में प्रसाद निसंदेह भारतेंदु से आगे हैं।[34] प्रसाद के समकालीन नाटककार 'मैथली शरण गुप्त', 'विश्वंभर नाथ शर्मा कौशिक', 'शिवनंदन मिश्र', 'द्वारिका प्रसाद गुप्त', 'बद्रीनाथ भट्ट', 'सुदर्शन', 'बलदेव प्रसादमिश्र', 'गोविंद वल्लभ पंत', 'कामताप्रसाद' आदि भी हुए लेकिन प्रसाद जी के नाटक के तीव्रता के आगे उनके नाटक लुप्त से मालूम पड़ते है। हालांकि इनमें भी 'बद्रीनाथ भट्ट', 'सुदर्शन', 'गोविंद वल्लभ पंत' के नाटक, नाट्य साहित्य कि दृष्टि से उपयोगी है।

हिंदी रंगमंच के सहित्यिक पक्ष को छोड़ दे तो इस अवाक् सिनेमा काल में भी हिंदी रंगमंच में कोई खास बदलाव देखने को नहीं मिलता है। निर्देशन, अभिनय, सज्जा आदि के जिस पद्धति को लेकर हिंदी रंगमंच अपने अस्तित्व में आया था वही पद्धति इस समय में बनी रही। प्रकाश सज्जा में कुछ प्रयोग देखने को मिलते हैं। पहले के नाटकों में गैस लाईट, लालटेन आदि का इस्तेमाल होता था वहीं अब गैस लाईट, लालटेन आदि के अलावा इलेक्ट्रिक प्रकाश भी इस्तेमाल में लिया जाने लगा। भारतीय अवाक् सिनेमा काल में रंगमंच के प्रति लोगों का झुकाव बढ़ा अर्थात रंगकर्म करने के लिए लोगों की भीड़ उमड़ी। कारण स्पष्ट था- फिल्म कलाकार बनने की लालसा। 'दादा साहब फाल्के के ऊपर बनी बायोपिक फिल्म 'हरिश्चंद्रराची फैक्ट्री' से हमें ज्ञात होता है कि भारत की पहली फिचर फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' के बनने कि बात आयी तो उसमें अभिनेताओं के चयन के लिए ऑडिशन रखें गये थे इस हेतु एक विज्ञापन जारी किया गया था जिसे

---

[34] http://shodhganga.inflibnet.ac.in/jspui/bitstream/10603/122612/9/09_chapter%203.pdf ,

अध्याय - तीन, पृष्ठ-198

देखकर हर वो व्यक्ति आ पहुंचा जिसके पास इस ऑडिशन की खबर मात्र पहुँची थी। बाद में 'दादा साहब फाल्के' ने ऑडिशन ख़बर में संशोधन कर उसे पुनः प्रकाशित करवाया। अंततः राजा हरिशचंद्र तथा अन्य पात्रों की भूमिका के लिए जिन अभिनेताओं का चयन किया गया उसमें अधिकांश रंगमंच कलाकार ही रहें। इन सब के बाद भी एक बात ध्यान देने योग्य है कि चाहे वो हिंदी रंगमंच हो या भारतीय फिल्म दोनों में स्त्रियों को अब तक कोई स्थान प्राप्त नहीं था। नाट्य या फिल्म साहित्यों में तो स्त्रियों पर बहुत लिखे गये लेकिन जहाँ प्रस्तुति की बात आती तो भारतीय संस्कृति उस पर रोक लगा देती। और यहीं कारण रहा कि इस समय के हिंदी नाटकों में स्त्री पात्रों की भूमिका पुरूष पात्र निभाते रहे। इतना ही नहीं भारत की पहली फिचर फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' में भी स्त्री पात्र की भूमिका भी एक पुरूष पात्र द्वारा निभाई गई थी। इस समय अव्यवसायिक रूप से रंगमंच हेतु 'भारतेंदु नाटक मंडली' को पुनः प्रयोग लायक बनाया गया। बीच-बीच में 'वीर-अभिमन्यु', 'प्रहलाद', 'शाहजहाँ', 'महाभार' आदि नाटक खेले गये। डॉ अज्ञात इस संदर्भ में लिखते है, "...इसी मंडली ने सर्वप्रथम जय-शंकर प्रसाद के 'चंद्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक अभिनीत किये।"[35] इस युग में रंगमंच के प्रमुख कलाकार के रूप में 'गोविंद शास्त्री दुवेकर', 'केशवराम टंडन', 'डॉ. विरेंद्र नाथ दाम', 'कुँवर कृष्ण कौल', 'बेनी प्रसाद गुप्त', 'बिरेश्वर बनर्जी', 'डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा', 'रायकृष्ण दास', 'महेंद्र लाल', 'राजाराम मल्होत्रा', 'हरिनाथ व्यास', 'द्वारका दास', 'जगमोहन दास साह', 'शिवप्रसाद', 'गोवर्धन दास', 'रघुनाट सिंह', 'बनारसी दास', 'आनंद प्रसाद कपूर', 'दूर्गाप्राद खत्री' आदि रहें। जो हिंदी नाटकों में अपनी प्रस्तुति देते आयें।

[35] डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-274

अंततः यह कहा जा सकता है कि इस काल में भी भारतेंदु के काल के भाँति हिंदी नाटक के साहित्यिक पक्ष को ही बल मिला। जिस मोड़ पर भारतेंदु ने नाटक को छोड़ा था उसे एक नया रूप देकर प्रसाद ने आगे बढ़ाया और नाट्य मंडलियों ने युग के हिसाब से मंच सज्जा और प्रकाश में नए उपकरणों का इस्तेमाल किया। अभिनय पद्धति पहले की ही भाँति बनी रही।

भारतीय अवाक् सिनेमा काल की समयावधि भी लगभग प्रसाद युग तक ही रही। सन् 1931 ई. में भारत में पहली सवाक् सिनेमा की प्रस्तुति होती है। जो मनोरंजन जगत् में एक भुचाल ला खड़ा करती है। सिनेमा तो अपने अस्तित्व में आने के बाद से ही लोगों का आकर्षण का केंद्र रही। कभी-क-बार दर्शकों में उतार-चढ़ाव देखने को मिलते हैं लेकिन सवाक् सिनेमा के आग़मन के बाद पुनः सिनेमा एक नए रूप में लोगों को जबरन अपनी ओर आकर्षित करने पर मजबूर करती है। वहीं दूसरी ओर हिंदी रंगमंच क्षेत्र में अनेक विद्वान अपने को ला खड़ा करते हैं। हिंदी रंगमंच को प्रस्तुति के दृष्टि से देखें तो सवाक् सिनेमा काल में हिंदी रंगमंच के रंगमंचनियता में अनेक प्रकार के प्रयोग देखने को मिलते हैं।

1.4. भारतीय सवाक् सिनेमा कालिन हिंदी रंगमंच आरंभ से 2019 तक

भारतीय सवाक सिनेमा का आरंभिक काल राजनैतिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का एक विशेष काल रहा है। इस समय देश के हर कोने में पनपी स्वतंत्रता आंदोलन की मुहिम अपने चरम पर पहुँच रही थी। हर कोई अपने-अपने क्षेत्र से स्वतंत्रता आंदोलन की मुहिम में योगदान दे रहे थे। जनसंचार का इतना बड़ा माध्यम

नाटक, इसमें कैसे पीछे रहता? हिंदी नाटककारों ने अपने नाटक के माध्यम से जनता में एक आंदोलन भरने का कार्य करने के साथ ही उनके मनोबल को मजबूत करने का भी कार्य किया। वहीं आजादी के बाद नवनिर्माण में भी बखूबी साथ निभाया। स्वतंत्रता के पूर्व जहाँ साहित्यकारों ने राष्ट्रीय चेतना पर बल दिया, वहाँ स्वातंत्र्योत्तर साहित्य में नवनिर्माण पर बल दिया। हिंदी-नाटक रंगमंच और जीवन के यथार्थ से जुड़कर नई दिशा की ओर उन्नमुख हुआ।[36] हिंदी नाट्य साहित्य की दुनिया में जय-शंकर प्रसाद के बाद मुख्य रूप से दो नाम उभर कर आते हैं। एक 'लक्ष्मीनारायण मिश्र' और दूसरा 'उपेन्द्रनाथ अश्क'। डॉ अवधेश चंद्र गुप्त के अनुसार, "उपेन्द्र अश्क़ और लक्ष्मीनारायण मिश्र आरम्भ में तो प्रसाद जी से प्रभावित रहें, परन्तु कालांतर में इन दोनों नाटक कारों ने हिंदी नाटक को रोमांस से मुक्त कर आधुनिक भावबोध के साथ समपृक्त किया। अश्क कृत 'जय-पराजय' तो पूर्णयता प्रसाद जी से प्रभावित है, परन्तु आपके अन्य नाटक समसामयिक परिवेश से प्रभावित होकर रंगमंच को आधुनिक यथार्थ से जोड़ने में सफल रहे। अश्क की भाँति लक्ष्मी नारायण मिश्र भी 'अशोक' नाटक के उपरांत समसामयिक समस्याओं को आधार बनाकर नाट्य सृजन करने लगे।"[37] प्रसाद के बाद हिंदी नाटककारों की एक अलग भूमिका रहीं। इस समय के नाटककारों ने मौजूदा स्थिति को अपने लेखन के माध्यम से आम जन तक पहुँचाने के कार्य में तत्यपर्य दिखते है। उसे अपने खुद को अपने हक के लिए आवाज उठाने के जुनून को भरते दिखते है। 'वृन्दावन लाल वर्मा', 'पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र', 'सेठ गोविंद दास', 'हरिकृष्ण प्रेमी' आदि ने हिंदी नाटक लेखन

---

[36] http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97169/7/07_chapter-2.pdf, पृष्ठ-52)

[37] गुप्त, डॉ. अवधेश चंद्र, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक: विचार-तत्व, पृष्ठ-51-52

के जरिये सामाजिक यथार्थ और राष्ट्रीय जीवन को उजागर किया। आसिया बेगम लिखती है, “विश्वयुद्धों के कारण मानवता कराह उठी थी इसलिए इस काल के नाटककारों ने साम्राज्यवाद, शोषण और असमानता के विरूद्ध अपने नाटकों में चरित्रों को सृजन किया। नारी जागरण का नया दौर भी इसी काल में दिखाई देता है। अनमेल विवाह, वेश्या समस्या, विधवा समस्या आदि से संदर्भित विषयों को आधार बनाकर भी इसी काल में नाटकों की रचना की गई।”[38]

नाट्य प्रदर्शन के क्षेत्र में अब व्यावसायिक मंडलियां भी धीमी पड़ने लगी। उनके व्यवसाय में मुनाफ़ा न के बराबर रह गया। मनोरंजन की इस दुनिया में विज्ञान ने अपने नविनतम खोज से मनोरंजन का एक नया साधन ‘सिनेमा’ को आमजनों के बीच ला रखा था, जो अब लोगों के दिलों पर राज करना सीख गया था। सन् 1931 ईं. में भारतीय सिनेमा में अवाज अर्थात सवाक् सिनेमा के आ जाने से दर्शकों का एक बहुत बड़ा जत्था पुनः सिनेमा के प्रति आकर्षित हुआ और दर्शकों के चाह रखने वाले रंगकर्मी का एक बहुत बड़ा जत्था भी सिनेमा की ओर। इसका सीधा असर नाट्य प्रदर्शन कला पर पड़ा। कुछ समय के लिए नाट्य प्रदर्शन मानो थम सा गया था। अनेक नाटक मंडलियां अपने को सिनेमा उद्योग में ला खड़ा किया। उनसे जुड़े कलाकार भी खुद को सिनेमा के लिए तैयार करने में लग गये। कुछ रंग प्रेमी कलाकार जो रंगमंच का दामन थामे हुए स्वयं व्यावसायिक नाट्य प्रदर्शन शुरू किये। पहले से चली आ रही कुछ अव्यावसायिक नाटक मंडलियां एक तरफ बंद पर गयी तो दूसरी तरफ कुछ नाटक मंडलियां खुद के अस्तित्व

[38] बेगम, आसिया, सोठात्तर युगीन नाटक और जगदीश चंद्र माथुर, अध्याय-2, पृष्ठ-74

बचाने हेतु अपना जी-जान लगाने लगी। प्रसाद युग की अव्यावसायिक नाट्य संस्थाएँ बनारस, कानपुर, कलकत्ता आदि नगरों में किसी न किसी प्रकार सक्रिय बनी रही। इसके अनुकरण पर कुछ अन्य संस्थाएँ भी बनी, किन्तु वह दिर्घजीवी न हो सकी।[39] बीसवीं शताब्दी का तीसरा दशक से न सिर्फ भारत के लिए बल्कि पूरे विश्व के लिए संघर्ष भरा दौर रहा। विश्व के हर कोने में युद्ध, आज़ादी, पुनर्निर्माण आदि जैसे स्वर गुंज रहे थे। इस गुंज में राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय नाटक ने अपना बखूबी योगदान निभाया। चौथी-पाँचवीं दशक में अनेक नाटक मंडलियाँ आंदोलन में सहयोग देने के मकसद से खोली गई। जिसमें इप्टा का नाम सर्वोच्च है। इप्टा (इंडियन पीपल थियेटर एसोशियेशन) की शुरूआत द्वितीय विश्व युद्ध और बंगाल अकाल के चरम पर सन् 1941-1943 में हुई। यह भारत में सर्वप्रथम राष्ट्रीय स्तर का रंगमंच आंदोलन था। इसका असली मकसद लोगो के बीच जनवादी रंगमंच को पहुंचाना और लोगों के भीतर अपने देश के संस्कृति को जागृत करना था। इस मकसद से इप्टा ने भारत देश के हर क्षेत्र के उनके अपने भाषा में रंगमंच की शुरूआत की। इप्टा लोगों के भीतर भारत स्वतंत्रता के स्वर भरने के साथ ही भारतीय संस्कृति को भी बचाने के कार्य में तत्पर्य रही। भारत के विभिन्न भाग में अपने शखाएं खोलकर अन्य भाषाओं के रंगमंच के साथ ही अहिंन्दी भाषी क्षेत्र में हिंदी रंगमंच को भी सशक्त बनाने का कार्य किया। इसी के आधार पर सन् 1944 ई. में 'पृथ्वी थियेटर' का श्री गणेश हुआ। इसके संस्थापक फिल्म और रंग जगत के जाने माने कलाकार 'पृथ्वी राज कपूर' रहें। डॉ अज्ञात के अनुसार, "पृथ्वी थियेटर ने समस्त उत्तरी

---

[39] डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, पृष्ठ-361

भारत में अपने नाटक घूम-घूम कर दिखाएं और इस प्रकार नई नाट्य संस्थाओं और नए नाटककारों के लिए प्रेरणा स्रोत बनकर हिंदी के नव नाट्य आंदोलन को सबल प्रदान किया।"[40] पांचवे दशक से नाटकों में बड़े पैमाने पर नवीनतम प्रयोग होने शुरू हो गये। सन् 1850 ई. से लगभग 1950 ई. तक नाट्य प्रस्तुति में ज्यादा बदलाव देखने को नहीं मिलते हैं लेकिन भारत के स्वतंत्रता के बाद लगभग एक दशक तक हिंदी नाट्य प्रदर्शन के क्षेत्र में बहुत जोर-शोर से प्रयोग हुए जो भविष्य के लिए सार्थक साबित हुआ। सन् 1850 ई. से लगभग 1950 ई. तक के हिंदी नाटक को साहित्य, रचना की दृष्टि देखे तो ज्ञात होता है कि हिंदी नाटक में अनेक उतार-चढ़ाव होते हुए भी हिंदी नाटक अपने को एक उच्च स्थान तक पहुंचाने में सफल साबित हुआ लेकिन वही इस काल में हिंदी नाट्य प्रस्तुति की बात की जाये तो हिंदी नाटक आज भी पिछड़ा हुआ था। सन् 1950 ई. से 1960 ई. के रची गई कुछ प्रमुख नाटक जो हिंदी नाट्य प्रस्तुति के क्षेत्र में भी धमाल मचा दी। "इसी दशक (1950-1960) में रचित चार नाटक ही आगे के नाटकों के विकास के बीज बने रहें। सन् 1951 ई. में रचित जगदीश चंद्र माथुर का 'कोणार्क', सन् 1954 ई. में रचित धर्मवीर भारती का 'अंधायुग', सन् 1958 में मोहन राकेश कृत 'आषाढ़ का एक दिन' और सन् 1959 में लक्ष्मीनारायण लाल रचित 'मादा कैक्टस'। 'कोणार्क' तथा 'आषाढ़ का एक दिन' से ऐतिहासिक पौराणिक नाटकों की नई परंपरा शुरू होती है तो 'अंधायुग' से काव्य नाटकों की और 'मादा कैक्टस' से यथार्थवादी सामाजिक नाटकों

---

[40] वहीं, पृष्ठ-362

की।"[41] इन नाटकों ने न सिर्फ नाट्य साहित्य की दुनिया में बल्कि प्रस्तुति के क्षेत्र में भी लोगों को आकर्षण करता आ रहा है। भारत स्वतंत्रता के बाद हिंदी नाटक के विकास की गति में अनेक मुनाफ़ा हुआ। अब सिर्फ नाट्य संस्थाएं ही नहीं वरन भारत सरकार भी इस पर ध्यान देने लगी। आजादी के बाद भारत सरकार ने प्रदर्शनकारी कलाओं के प्रचार-प्रसार तथा भारतीय कलाओं के संयोजन हेतु दिल्ली में 'संगीत नाट्य अकादमी' की स्थापना सन् 1954 ई. में की और हिंदी नाट्य के क्षेत्र में सबसे बड़ा कार्य 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली' की स्थापना थी, जो सन् 1959 ई. में हुई थी। ये भी भारत सरकार की देन रहीं। 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली' नाटक का पहला शिक्षा केंद्र रहा। इसके बाद धीरे-धीरे शिक्षा के क्षेत्र में भी नाटक को शामिल किया जाने लगा। न कि सिर्फ नाट्य विद्यालय या संस्थाओं तक बल्कि महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों तक भी। इस संबंध में एस.जे. नैर लिखते है, "स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत केंद्रीय तथा राज्य सरकार की ओर से प्रायः नाट्य महोत्सव होने लगे। मुख्यतः हिंदी क्षेत्र में उसके प्रतिनिधि नगरों जैसे- दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, पटना, जबलपुर, इलाहाबाद आदि में अनेकों नाट्य संस्थाएं बनीं। क्रमशः भारत देश के अंतराष्ट्रीय संबंधों में अधिक गति आयी तो सांस्कृतिक स्तर से भी यह संपर्क उपयोगी बन गया।"[42]

---

41 नैर, एस. जनार्धनन, साठोत्तर हिंदी नाटकों में वस्तुगत तथा रंगमंचीय विकास का अध्ययन मोहन राकेश और लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों के संदर्भ में, अध्याय-एक, पृष्ठ-1

42 वही, पेज-83

इस युग के प्रमुख नाटककारों में 'जगदीश चंद्र माथुर', 'विष्णु प्रभाकर', 'नरेश मेहता', 'विनोद रस्तोगी', 'डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल', 'डॉ. शंकर शेष', 'मोहन राकेश', 'धर्मवीर भारती' आदि नाम विशेष उल्लेखनिय है। इनके नाटकों ने हिंदी नाटक के समीकरण को एक नई राह दी। आज भी हिंदी नाटक इनके मार्ग को अपनाएं हुए हैं। इस काल में एक तरफ पहले के नाटककार 'उपेन्द्रनाथ अश्क', 'पृथ्वीनाथ शर्मा', 'जगदीशचंद्र माथुर', 'मोहन राकेश', 'विष्णु प्रभाकर', 'धर्मवीर भारती', 'लक्ष्मीनारायण लाल,' 'शंकर शेष' आदि नाट्यकला के क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे थे तो दूसरी तरफ 'भीष्म साहनी', 'रमेश बक्षी', 'सुरेंद्र वर्मा', 'ज्ञानदेव अग्निहोत्री', 'विपीन अग्रवाल', 'ब्रज मोहन साह', 'मणि मधुकर', 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेना', 'मुद्राराक्षस', 'गिरीराज किशोर', 'हमीदुल्ला' आदि जैसे नए नाटककार ने अपना सफर शुरू किया। आठवें और नवें दशक में अपनी पहचान बनाने वाले नए नाटककारों डॉ विनय, नरेंद्र कोहली, कुसुम कुमार, मृणाल पांडेय, मन्नु भंडारी, नरेंद्र मोहन, राम कुमार वर्मा, गोविंद चातक, सुशील कुमार सिंह, डॉ. चंद्र, सुदर्शन मजिठीया, मृदुला गर्ग, ललित कुमार सहगल, दया प्रकाश सिन्हा, शरद जोशी, गिरीश रस्तोगी आदि उल्लेखनिय है।[43] सही मायने में देखा जाये तो इसी काल में हिंदी नाटक, रंगमंच से जुड़ पाया। सातवें दशक से हिंदी रंगमंच में अनेकों दिग्गज विद्वान हुए जिन्होंने अपने निर्देशन कला के माध्यम से देश-दुनिया का ध्यान हिंदी रंगमंच की ओर आकर्षित करने पर मजबूर कियें। उन नामों में से 'ब. व. करांत', 'इब्राहिम अल्काजी',

---

43 http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97169/7/07_chapter-2.pdf (द्वितीय अध्याय,पृष्ठ-63)

'ब्रजमोहन शाह', 'सत्यदेव दुबे', 'एम. के. रैना', 'राजेन्द्र नाथ', 'शामानंद जालान' आदि उल्लेखनिय है। इन्होंने न सिर्फ हिंदी नाट्य लेखन को ही रंगमंच पर उतारा बल्कि भारत के सभी प्रांतों से हिंदी को जोड़ने के लिए अहिंदी भाषी नाटकों को अनुवाद के माध्यम से उसे मंच पर उतारने का कार्य भी किये। 'गरीश कर्नाद', 'बादल सरकार', 'विजय तेंदुलकर', 'हबीब तनवीर' आदि जैसे अनेकों नाटककार के अनुवादित नाटक हिंदी रंगमंच को एक मजबूत राह दिया। साथ ही उपर्युक्त निर्देशकों ने हिंदी नाटक को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर खेलकर इसे एक उच्च मुकाम तक पहुंचाया। इससे अंतरराष्ट्रीय संस्कृति के साथ हमारी संस्कृति का आदान-प्रदान बढ़ा। जिसके फलस्वरूप हम अपनी संस्कृति को और बेहतर तरीके से समझ सकें, और सही मायने में नाटक के प्रति यह जान सकें भारतीय नाटक के लिए रंगमंच का कितना अभाव है। एस.जे. नैर के अनुसार, "सन् साठ के पहले तक समीक्षकों के ये शब्द इसका नमूना भी है- 'हिंदी रंगमंच' यह शब्द पुस्तकों में ही पाया जाता है। इसका कोई साकार या क्रियात्मक रूप अब तक स्थापित नहीं हो सका है। हिंदी रंगमंच के नाम पर जो भी नाटक खेले गये या उसके लिए लिखे गये वह नाटक साहित्य का इतिहास न होकर केवल नाटक मंडलियों का इतिहास है और इन मंडलियों में से किसी का भी स्थायी रंगमंच या प्रेक्षागृह नहीं था। केवल नाटक खेलने के समय रंगमंच का निर्माण कर लिया जाता था। अब यह समस्या हमारे सामने चुनौती बनकर खड़ी हो गई। एक ऐसी भारतीय रंगमंच की आवश्यकता महशूस हुई जिसका प्रतिनिधित्व हिंदी कर सके। क्योंकि हिंदी ही इस नए प्रजातंत्र की राष्ट्र भाषा थी। 'संगीत नाटक अकादमी' और 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय' के पीछे यही दृष्टि विद्यमान थी।"[44]

---

[44] नैर, एस. जनार्धनन, साठोत्तर हिंदी नाटकों में वस्तुगत तथा रंगमंचीय विकास का अध्ययन मोहन

सत्तर के दशक के बाद नाट्य विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर अनेक रंगमंच छात्र अपने-अपने क्षेत्र में रंगमंच को विस्तार करने में जुड़ गये। 'सुधा', 'ओम शिवपुरी', 'एम. के. रैना', 'बलराज साहनी', 'मोहन महर्षि', 'राम गोपाल बजाज', 'सुरेखा सिकरी' आदि जैसे गुनी रंगमंच कलाकार रंगमंच में अपना योगदान देने लगे। इतना ही नहीं इन्होंने अपनी कलाओं के माध्यम से भारतीय फिल्म जगत में भी एक उत्तम स्थान बनाया तथा भारतीय सिनेमा को एक नई दिशा दी। भारतीय फिल्म शुरू से ही रंगमंच से आदान-प्रदान करती रही है लेकिन सत्तर-अस्सी दशक के बाद यह सिलसिला और बढ़ गया। फ़िल्मकारों ने भी रंगमंच कलाकारों के साथ एक अलग दिशा में फिल्में बनानी शुरू की। जो भारतीय फिल्म जगत को एक नई पहचान दे सका। साथ ही रंगमंच कलाकारों ने भी इस फिल्म तथा फिल्मी जगत से बहुत कुछ अपनाया तथा उसके माध्यम से रंगमंच को और बेहतर बनाने का प्रयास किये।

जिस विज्ञान के सहारे सिनेमा ने बहुत ही कम समय में एक मुकाम हासिल किया। उस विज्ञान के दौर में नाटक ने भी विज्ञान का भरपूर फायदा उठाया। जिस तरह फिल्मों में फ़िल्मकार ध्वनि, प्रकाश, सेट डिज़ाइन, शॉट आदि के लिए विज्ञान पर निर्भर रहा करते थे। उतना नहीं लेकिन उनके बराबर ज़रूर रहा। जैसा कि प्रकाश के संदर्भ में बात करें तो पहले के नाट्य प्रस्तुति में प्राकृत प्रकाश फिर गैस, लालटेन आदि जैसे उपकरण इस्तेमाल में लाए जाते थे लेकिन अब मैकनिकल प्रकाश का इस्तेमाल होने लगा। नाटक के दृश्य के जरूरत के हिसाब से प्रकाश का संचालन किया जाने लगा।

राकेश और लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों के संदर्भ में, अध्याय-एक, पृष्ठ-83-84

ध्वनि के क्षेत्र में भी जहां पहले लाइव संगीत का इस्तेमाल किया जाता रहा था वहां अब लाइव संगीत के साथ ही रिकार्डिंग संगीत भी उपयोग में आने लगी। इन सब के मेल से रंगमंच ने फिल्मों से भी कुछ चीज़े लेने की कोशिश की और उसमें सफल भी रही। जैसा कि हम फिल्मों में क्लोज्प शॉट देखते है इस शॉट को रंग प्रस्तुति में देखना असंभव सा लगता था लेकिन आज प्रकाश सज्जा ने उसे भी आसान बना दिया है। इस तरह से आधुनिक नाटक ने अपने प्रस्तुति हेतु विज्ञान के सहारे पहले से और ज्यादा खुद को आकर्षण बनाया है और आज भी विभिन्न प्रकार के उपकरणों के सहारे नाट्य प्रस्तुति को और बेहतर बनाने में प्रयत्न में अनेकों नाट्य कर्मी जुटे हुए हैं।

इक्कसवीं सदी भौतिक और वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत आगे निकल चुका है लेकिन आज के समय में भी हिंदी रंगमंच को वो कमी खल रही है जो शुरूआती समय से चली आ रही है। हिंदी रंगमंच के पास अपना प्रक्षागृह का न होना। हाँ, इतना जरूर कहा जा सकता है कि यह कमी पहले के अपेक्षा कम है लेकिन आज भी अगर कोई नाटक खेलना होता है तो हमें रिहर्सल या प्रस्तुति के लिए किराये पर जगह, प्रेक्षागृह लेना पड़ता है। किसी भी हिंदी क्षेत्र की बात करें तो वहाँ आज जिस संख्या में नाट्य संस्थान मिल जाते है। उसके एक चौथाई भी प्रेक्षागृह नहीं मिल पाते है और जो थोड़े बहुत मिल पाते है उसका प्रतिदिन का किराया सब संस्थाएं या कोई स्वतंत्र कलाकार के बस का नहीं होता। योगेंद्र अग्रवाल के अनुसार, “हिंदी प्रदेशों में रंगमंच अपने लिए एक नई ज़मीन, नए दर्शक तलाशने के जद्दोजहद में है। इसके लिए तरह-तरह के उपाय एवं युक्तियां सोची जा रही है। दिल्ली के मंडीहाउस इलाके में नाटकों के लिए उपर्युक्त सभागारों का एक दिन का किराया ही 20 से 50 हजार रू. के बीच पड़ता है।...इसके अलावा रिहर्सल की

जगहों का संकट। हिंदी के बाकी शहरों में भी स्थितियां बहुत अलग नहीं है।...अतः नाट्य निर्देशक ऐसे नाटकों का चयन करने लगे जिनके लिए किसी खास तरह की रंगशालाएं की आवश्यकता न हो बल्कि किसी भी स्थान पर प्रस्तुति की जा सके।"[45] इस तरह से आज अनेक छोटे-छोटे जगह जैसे- छत, होटल, घर के किसी हॉल, पार्किंग प्लेस आदि जगहों पर नाट्य प्रस्तुतियां देखने को मिल जाती है। अनेक छोटे रंग संस्थान या स्वतंत्र कलाकार ऐसी जगहों को ही अपना रंग सभागार मानते है। इन हालातों से गुज़र कर भी अनेक हिंदी रंग कलाकार देश-दुनिया में अपनी कला के दम पर जाने जा रहे है। हिंदी फिल्मों का समिकरण बदलने का श्रेय भी इन कलाकारों को जाता है। हिरोइज्ज़म को ब्रेक कर एक नई धारा का सिनेमा को दर्शक के लायक बनाने में इन कलाकारों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। 'ओमपूरी', 'नसिरउद्दिन शाह', 'अनुपम खेर', 'इरफ़ान खान', 'नवाजउद्दीन सिद्दीक', 'नीना गुप्ता', 'गिरीश कर्नाड', 'यशपाल शर्मा', 'पंकज कपूर', 'टॉम अल्टर', 'पीयूश मिश्रा', 'शबाना आज़मी', 'परेश रावल' आदि जैसे जाने माने रंगमंच कलाकार को कला फिल्मों के कलाकार के तौर पर भी जाना जाता है। इन्होंने रंगमंच और फिल्मों में न सिर्फ पताका लहराया है बल्कि आज इनकी धड़कन रंगमंच के लिए धड़कती है। आधुनिक समय में अनेक कलाकार हिंदी रंगमंच को लेकर नए-नए प्रयोग कर रहे हैं जो हिंदी रंगमंच को विकसित करने में सार्थक साबित हुई हैं और हो रही हैं। इन सब के बीच भी अनेक कमियाँ हिंदी रंगमंच के विकास के रास्ते में बाधा बनी बैठी हैं।

---

[45] अग्रवाल, योगेंद्र, वर्तमान हिंदी रंगमंच में विभिन्न पक्षों की प्रयोगवादिता एवं रंगमंच पर उसका प्रभाव, पृष्ठ-3

निष्कर्ष

भारत में रंगमंच के शुरूआत से लेकर आधुनिक समय के हिंदी रंगमंच को देखे तो पाते हैं कि हिंदी रंगमंच को अपने ही हिंदुस्तान में (जहाँ हिंदी को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है) उसे वो स्थान नहीं प्राप्त है जो अन्य मनोरंजन के अन्य साधन को प्राप्त हैं। भारतेंदु काल से हिंदी रंगमंच को अस्तित्व में लाने का प्रयास जारी है लेकिन तब से सौ वर्षों के इतिहास पर गौर करें तो पाते है कि हिंदी रंगमंच को अस्तित्व में लाने का जिक्र साहित्य तक ही सीमित रहा है। वो कभी फिल्ड पर नहीं आ पाया। कभी-कभार व्यवहारिक स्तर पर लाया भी गया तो अपने संस्था, खुद या अपने साहित्य को उच्च स्थान दिलवाने के लिए। ऐसा नहीं की हिंदी रंग जगत में कोई विद्वान नहीं हुआ लेकिन वो खुद को साहित्य तक ही सीमित रखे। देखा जाये तो हकीक़त तौर पर हिंदी रंगमंच बीसवीं सदी के छठे दशक उपरांत व्यवहारिक स्तर पर अपना करिश्मा दिखाना शुरू किया है। आधुनिक हिंदी रंगमंच का आज जो चेहरा है वो लगभग पचास-साठ वर्ष ही पुराना है। व्यवसाय की दृष्टि से हो या फिल्म में जाने की लालसा से, कला को संयोजने की दृष्टि से हो या हिंदी रंगमंच के प्रति प्रेम से जिस रूप में ही क्यों न हो, आज हिंदी रंगमंच कलाकार हर रूप में हिंदी रंगमंच को अग्रसर करने में लगे है और एक हद तक वो सफलता भी पा रहे है। आज अगर भारतीय रंगमंच में अगुआई की बात करे तो उसमें हिंदी रंगमंच का ही नाम आता है। इतना ही नहीं, अनेक उतार-चढ़ाव और समस्याओं से गुजरते हुए भी हिंदी रंगमंच आज खुद को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने में समर्थ हो सका है।

<u>अध्याय:2</u> साहित्य पुनरावलोकन एवं अनुसंधान कार्य विधि

2.1 साहित्य पुनरावलोकन

2.1.1 शोध थीसिस

1. Kaur, Sarabjit, 21vi shatapdi ke hindi natak aur rangmanch ke Badalta swarup, Department of Hindi, Kurukshetra University.

   इस शोध पत्र में हिंदी नाटक के उत्पत्ति काल से लेकर आधुनिक काल के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है।

2. http://hdl.handle.net/10603/257284 (Joshi, Priyanka, Films And History: A Critical Study Of Select Hindi Films (1950-2008), Department of History, University of Pune, 2013, Chapter 3 & 4)

   उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या तीन और चार में भारतीय अवाक सिनेमा काल से लेकर सवाक् सिनेमा काल, गोल्डन एरा, सुपरस्टार, कला सिनेमा आदि के इतिहास की संक्षिप्त जानकारी दी गई है।

3. http://hdl.handle.net/10603/73621 तोंडे, रामदास नारायण, आधुनिक हिंदी साहित्य और फिल्मांकनः स्वरूप एवं समस्याएँ, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्याल, औरंगाबाद, 2014, द्वितीय अध्याय

   उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या दो में सिनेमा के उद्भव पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इसमें भारतीय सिनेमा के इतिहास का परिचय देते हुए भारत के आज़ादी के बाद से इक्कीसवीं शदी के हिन्दी सिनेमा तथा उसके कुछ प्रमुख

बिंदुओं को उजागर किया गया है।

4. http://hdl.handle.net/10603/9204 (खिल्लन, पूजा, समांतर सिनेमा का भाषिक और सामाजिक अध्ययन (विशेष संदर्भ नसीरूद्दीन शाह अभिनीत फिल्में), दिल्ली विश्वविद्यालय, 2012, अध्याय एक)

    उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या एक में भारतीय समानांतर सिनेमा का इतिहास, उसके नये रूप और समानांतर सिनेमा में पत्र-पत्रिकाओं के योगदान का उल्लेख किया गया है।

5. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/73621/9/09_chapter%203.pdf (अध्याय तीन - सिनेमा और समाज का संबंध)

    उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या तीन में भारतीय सिनेमा का समाज से कैसे और किस प्रकार का संबंध है, तथा सिनेमा ने खुद को समाज से जोड़ने के लिए किस-किस प्रकार से सामाजिक विषयों को उठाया है? इस विषय पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है।

6. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/17176/6/06_chapter%202.pdf (द्वितीय अध्याय- हिंदी सिनेमा और हिंदी साहित्यकार)

    उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या दो में मुख्य रूप से हिंदी सिनेमा का विकास क्रम इतिहास, हिन्दी सिनेमा का वैश्विक संबंध तथा हिंदी सिनेमा उद्योग में हिंदी साहित्यकारों के रूप और कार्य का उल्लेख किया गया है।

7. http://hdl.handle.net/10603/1706 (पोतुराजु, रेड्डी वेंकट, हिंदी नाटक: परिवर्तन

के विविध आयाम (1950 से 2000 तक), हैदराबाद विश्व-विद्यालय, 2003, अध्याय चार)

उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या चार में मुख्य रूप से हिंदी नाटक को केंद्र में रखते हुए नाटक के अंग - मंच, सज्जा, अभिनय, निर्देशन, ध्वनि, दर्शक आदि जैसे विषयों के महत्व को समझाया गया है।

8. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97988/5/05_chapter%202.pdf (द्वितीय अध्याय-हिंदी नाटकः विविध चरण एवं प्रवृत्तियां)

उपर्युक्त शोध पत्र के अध्याय संख्या दो में हिंदी रंगमंच साहित्यिक पक्ष का उद्भव, उसके क्रमागत विकास तथा विकास में मुख्य भूमिका निभाने वाले नाट्य साहित्यकार का योगदान आदि का विशेष रूप से शोध किया गया है।

9. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97169/7/07_chapter-2.pdf (द्वितीय अध्याय, आधुनिक हिंदी नाटक का विकास)

इस शोध अध्याय में नाटक के आरंभ से जिक्र करते हुए हिन्दी रंगमंच पर विशेष बल दिया गया है। जिसमें हिंदी रंगमंच के विभिन्न युग पर प्रकाश डाला गया है साथ ही गोविंद चातक के नाटकीय कार्य पर भी प्रकाश डाला गया है।

10. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/jspui/bitstream/10603/122612/9/09_chapter%203.pdf (हिंदी रंगमंच काल विभाजन, अध्याय - तीन)

उपर्युक्त अध्याय में हिंदी रंगमंच के काल विभाजन पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें हिंदी रंगमंच के भारतेंदु युग से आधुनिक युग तक के रंगमंच पर विशेष

बल दिया गया है। अलग-अलग युग के हिंदी नाटककार, लेखक, संस्था आदि पर बल दिया गया है।

11. http://hdl.handle.net/10603/152462 बेगम, आसिया, सोठात्तर युगीन नाटक और जगदीश चंद्र माथुर, विर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, पीएच. डी. शोध प्रबंध, 2017, अध्याय-2

हिंदी नाटक के आरंभ से मिश्र युग के हिंदी नाटकों पर इस अध्याय को लिखा गया है। जिसमें भारतेंदु युग और प्रसाद युग को विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। इस अध्याय में हिंदी नाटक के रचनात्मक पक्ष अथवा साहित्यिक पक्ष को जागर किया गया है। भारतेंदु युग से मिश्र युग तक हिंदी नाटकों की रचना करने वाले विशेष नाटक रचयिता का उल्लेख है।

12. http://hdl.handle.net/10603/168385 नैर, एस. जनार्धनन, साठोत्तर हिन्दी नाटकों में वस्तुगत तथा रंगमंचीय विकास का अध्ययन मोहन राकेश और लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों के संदर्भ में, केरला विश्वविद्यालय, 1995, अध्याय-एक

प्रस्तुत शोध अध्याय में हिंदी नाटक के आरंभिक समय, 1850 ई. से सन् 1950 ई. के हिंदी रंगमंच के इतिहास को उजागर किया गया है। साथ ही मुख्य रूप से साठ के बाद के हिंदी नाटकों पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें हिंदी नाटक के शैली तथा नाटक रचना के विषय वार पहलिओं को उजागर किया गया है।

2.1.2 हिंदी पुस्तकें

1. मिश्र, डॉ ब्रजवल्लभ., भरत और उनका नाट्यशास्त्र, प्रकाशन इलाहाबाद एन. सी. जेड. सी. सी., 1988

   इस पुस्तक में भारतीय रंगमंच के मुख्य साक्ष्य नाट्य शास्त्र के समस्त अध्याय तथा उसके आविष्कार का संक्षिप्त रूप में व्याख्या किया गया है। इस पुस्तक में नाट्य शास्त्र के अनुसार अभिनय, मंच, रस, भाव आदि को सरल भाषा में समझाने कि कोशिश की गई है।

2. श्रीनेत, दिनेश, पश्चिम और सिनेमा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012

   इस पुस्तक में विश्व सिनेमा के उद्भव से लेकर विश्व के अलग-अलग देशों के सिनेमा का विवरण दिया गया है। साथ में सिनेमा के जॉनर के बारे में बताया गया है।

3. अंकूर, डॉ चंद्रभूषण गुप्त, सिनेमा और इतिहास, प्रकाशक, शशि प्रकाशन गाज़ियाबाद, 2012

   इस पुस्तक में भारतीय सिनेमा समय का इतिहास के साथ राजनैतिक, समाजिक, जाति आदि को भारतीय सिनेमा ने किस प्रकार अपनाया है। उस पर चर्चा किया गया है।

4. विप्लव, विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, प्रकाशक, प्रभात पेपर बैक, नई दिल्ली, 2013

   इस पुस्तक में सन् 1896 से आधुनिक हिंदी सिनेमा के संक्षिप्त इतिहास

के साथ ही एक सौ पचास लोकप्रिय कलाकारों के संक्षिप्त जीवन परिचय तथा उनके कार्यों का विवरण दिया गया है।

5. दिलचस्प, हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास, प्रकाशक, भारतीय पुस्तक परिषद, नई दिल्ली, 2014

इस पुस्तक में भारतीय सिनेमा विशेष कर हिंदी सिनेमा के इतिहास का संक्षक्षिप्त परिचय दिया गया है। भारतीय सिनेमा के शुरूआत वर्ष 1896 से लेकर संपूर्ण बीसवीं शताब्दी के प्रत्येक वर्ष में, भारतीय सिनेमा में क्या खास हुआ उसे एक-दो वाक्यों में लिखा गया है।

6. झा, वंदना, भारतीय सिनेमा का शताब्दी वर्ष पहचान और प्रतिरोध, प्रकाशक, प्रतिश्रुति प्रकाशन, कोलकाता, 2016

उपर्युक्त शीर्षक पुस्तक में भारतीय सिनेमा ने अपने 1913 ई० से अपने सौ वर्ष के काल में किस तरह से भारतीय समाज, उससे जुड़े कहानियों को प्रस्तुत किया है। इस पर अनेक विद्वानों ने अपने-अपने शीर्षक देकर अपने मत को उजागर किया है।

7. हसन, डॉ रयाज़, सिनेमा का उद्भव एवं विकास, प्रकाशक ज्ञात नहीं

विश्व में सिनेमा का आइडिया किस तरह से आया। उसके पिछे किस तरह और किन लोगों के द्वारा मेहनत किया गया। किस तरह टेक्नोलॉजी का आविष्कार तथा आविष्कार हुए टेक्नोलॉजी का सिनेमा में इस्तेमाल किया गया। मूक सिनेमा, सवाक (भारतीय एवं विश्व) सिनेमा के इतिहास आदि का उल्लेख इस पुस्तक में

किया गया है।

8. चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टी, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976, अध्याय-11

उपर्युक्त पुस्तक के अध्याय संख्या ग्यारह में भारत में हिंदी रंगमंच के उद्भव, लोक नाट्य से लेकर भारतेंदु काल के हिंदी रंगमंच को पारसी रंगमंच से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है तथा आधुनिक हिंदी रंगमंच के कमियों को उजागर किया गया है। साथ ही उन कमियों को दूर करने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से मार्ग भी दिखाया गया है।

9. शर्मा, विश्वनाथ डॉ, हिन्दी रंगमंच का उद्भव और विकास, उषा पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली

भारत में संस्कृत रंगमंच के बाद से लेकर आधुनिक समय तक लोक के सहारे हिंदी रंगमंच का उद्भव तथा उसके क्रमागत विकास के इतिहास को उजागर किया गया है।

10. ओझा, दशरथ डॉ, हिन्दी नाटक का उद्भव और विकास, प्रकाशक राजपाल एंड सन्स

इस पुस्तक में हिंदी के आरंभ एवं उसके विकास को क्रमगत रूप से दिखाया गया है। हिंदी नाटक के महान विद्वानों का हिंदी नाटक क्षेत्र में क्या योगदान रहा है उसका उल्लेख भी इस पुस्तक में देखने को मिलता है। जिसे दशरथ ओझा ने अपने मतानुसार दर्शाया है।

11. भार्गव, अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, सिने साहित्य प्रकाशन, जयपुर

इस पुस्तक में भारत में सिनेमा आगमन से लेकर 2015 तक की इतिहास (सिनेमा, अभिनेता, निर्देशक, संगीत आदि) के साथ-साथ भारत के विभिन्न प्रांत मे बोली जाने वाली बोली और भाषाओं में बनी फिल्मों के प्रारंभ एवं इतिहास पर प्रकाश डाला गया है।

12. सिंह, डॉ. देवेंद्रनाथ, यादव, डॉ. विरेंद्र सिंह, भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा एक मूल्यांकन, पैसिफिक पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2012

इस पुस्तक में भारतीय सिनेमा के इतिहास के साथ ही साथ उसके तकनीकी पक्ष पर भी विशेष बल दिया गया है। आधुनिक भारत में, विश्व में सबसे ज्यादा फिल्म भारत में बनती है। इस पक्ष को ध्यान में रखते हुए भारतीय फिल्म बजार का एक अनुमानित आकलन भी किया गया है।

13. चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टि, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली

उपर्युक्त पुस्तक में पाश्चात्य, एशियाई, भारतीय तथा हिंदी रंगमंच के संक्षिप्त विवेचेनात्मक इतिहास देकने को मिलता है। साथ ही रंगमंच के अनेक पहलु जैसे अभिनय, रूप-स्वरूप आदि पर प्रकाश डाला गया है।

14. दुबे, डॉ. चंदुलाल, हिंदी रंगमंच का इतिहास, पहला भाग, प्रकाशन कुजबिहार पचौरी, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा

प्रस्तुत पुस्तक में हिंदी रंगमंच के आरंभ का उल्लेख करते हुए उसके इतिकास पर प्रकाश डाला गया है। मुख्य रूप से भारत के जिन-जिन क्षेत्रों में हिंदी

भाषा का चलन है तथा जहाँ हिंदी रंगमंच खेले जाते रहे है वहाँ के मंडलियों तथा रंगमंच कार्य को विशेषरूप से प्रकाश डाला गया है। जिसमें बिहार, उत्तरप्रदेश, राकस्थान, मध्यप्रदेश, दिल्ली के साथ ही बंगाल, महाराष्ट्र, आंध्रा आदि राज्य के हिंदी रंगमंच का भी वर्णन किया गया है।

15. लाल, डॉ. लक्ष्मीनारायण, पारसी हिन्दी रंगमंच, प्रकाशन राजपाल एंड सन्स, दिल्ली-1973

उपर्युक्त शीर्षक पुस्तक में पारसी द्वारा किया जाने वाला हिंदी रंगमंच का वर्णन है। साथ ही हिंदी रंगमंच और पारसी रंगमंच के विभिन्न कलात्मक पहलुओं तथा विषयों को उल्लेख है। पारसी नाटककार, जिन्होंने अपना योगदान हिंदी रंगमंच में भी बखुबी निभाया उनका भी जिक्र इसमें देखने को मिलता है।

16. शर्मा, रामविलास, मित्र संवाद, पत्रिका, परिमल प्रकाशन इलाहाबाद, 1992

इस पुस्तक में केदारनाथ अग्रवाल और रामविलाश शर्मा द्वारा किये गये पत्र संवाद का संकलन है। जिसमें मुख्य रूप से हिंदी रंगमंच और साहित्य तथा हिंदी के विद्वानों का उल्लेख है।

17. डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, प्रकाशन- पुस्तक संस्थान, कानपुर, 1978

उपर्युक्त पुस्तक में भारतीय रंगमंच विशेष रूप से हिंदी रंगमंच के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। भारतेंदु युग से लेकर आधुनिक युग तक के हिंदी रंगमंच के क्षेत्र में कार्य करने वाले विद्वानों का जिक्र एवं उनके योगदान का उल्लेख किया

गया है। साथ ही हिंदी रंगमंच हेतु उद्‌घटित रंगमंच संस्थाओं तथा उनमें कार्य करने वाले कलाकारों का उल्लेख देखने को मिलता है।

18. गुप्त, सोमनाथ, हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास, प्रकाशक - इंद्र चंद्र नारंग, हिंदी भवन, रानी मंडी, इलाहाबाद

प्रस्तुत पुस्तक में हिंदी रंगमंच के साहित्यिक पक्ष पर बल दिया गया है। आरंभ से हिंदी नाट्य साहित्य में लिखे जा रहे विभिन्न विषय जैसे सामाजिक, राजनैतिक, प्रेम आदि पर के नाटक का विवरण और लेखक के योगदान का ल्लेख किया गया है।

19. गुप्त, डॉ. अवधेश चंद्र, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक: विचार-तत्व

इस पुस्तक में हिंदी नाटक के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें भारत के आजादी के बाद हिंदी रंगमंच की स्थिती को उजागर किया गया है। आजादी के बाद के मुख्य-मुख्य हिंदी रंगमंच कलाकर द्‌वारा किये गये कार्यो का भी उल्लेख है।

20. पुरी, नंदिता सी., असाधारण नायक ओम पुरी, प्रकाशन-हिंदी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2010

ओम पुरी की पत्नि नंदिता पुरी द्‌वारा लिखी गई इस पुस्तक, ओम पुरी के जीवन पर है। ओम पुरी के जन्म से लेकर उनके सफलता, विफलता आदि का ताना बाना बुना हुआ इस पुस्तक में भारत के एक मशहूर कलाकार ओम पुरी के जीवन, उनके कार्य आदि का उल्लेख है।

21. विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, प्रकाशन प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2013

इस पुस्तक में बॉलिवुड सिनेमा के 150 कलाकारों का जीवन परिचय तथा उनके सफलता की कहानी का उल्लेख है। साथ ही इस पुस्तक के शुरूआत में भारतीय सिनेमा के संक्षेप इतिहास पर भी प्रकाश डाला गया है।

22. शाह, नसीरउद्दीन शाह, और फिर एक दिन... कुछ यादें, प्रकाशन-पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया प्रा. लि. गुड़गाँव, हरियाणा, 2019

नसीरउद्दीन शाह द्वारा लिखा गया इस पुस्तक में उन्होंने अपने जीवन के जन्म से लेकर इक्कसवीं सदी के दूसरे दशक तक के सफर पर प्रकाश डाला है। उनके अपने परिवार, कार्य, अन्य कुछ मुख्य जानकारियों का संग्रह इस पुस्तक में देखने को मिलता है।

2.1.3 अंग्रेजी पुस्तकें

1. Saran, Renu, History of Indian Cinema, Publisher, Diamond Pocket Books (P) Ltd. New Delhi, 2018

इस पुस्तक में मुख्य रूप से आधुनिक भारतीय सिनेमा के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। विशेष रूप से बॉलिवुड सिनेमा को केंद्रित कर उसके विकास तथा सिनेमा में उसके योगदान का उल्लेख किया गया है।

2. Gulzar, Nilhani, Govind, Chatterjee Saibal, Encyclopaedia of Hindi Cinema, Published by Encyclopaedia Britannica (India) Pvt. Ltd. New

Delhi

भारत में सिनेमा आगमन से लेकर इक्किसवीं शदी के बॉलिवुड सिनेमा के इतिहास तथा उसमें हुए उतार-चढ़ाव का विवरण दिया गया है। साथ ही इस पुस्तक में 193 जाने-माने भारतीय फिल्मीं सितारों के संक्षिप्त जीवन परिचय का उल्लेख किया गया है।

3. Saran Renu, Encyclopedia of Bollywood- Film Actors, Published by Diamond Pocket Books Pvt. Ltd., 2010

   इस पुस्तक में एक सौ तीरानवें जाने-माने भारतीय सिनेमा कलाकार के संक्षिप्त जीवन परिचय दिया गया है।

4. Rakesh Mohan, One Day in the Session of Rain, Published by Penguin Books Limited, 24 April 2015

   इस पुस्तक में नाटक आषाढ़ के एक दिन में कार्य करने वाले मुख्य कालाकार का जिक्र है, जिसमें ओम शिवपुरी जी का नाम भी बड़े आदर से सम्मलित है तथा उनके द्वारा किये गये कुछ अन्य नाट्य गतिविधियों का उल्लेख है।

5. Satchidanandan, K., Authors Speek, Sahitya Acadmy, New Delhi, 2006

   उपर्युक्त पुस्तक में रंगमंच के मशहूर कलाकर मुख्य रूप से लेखक के बारे में लिखा गया है। जो उनके द्वारा स्वयं का जीवन परिचय और उनके कार्य का उल्लेख है।

2.1.4 लेख

1. भारतीय सिनेमा का इतिहास, निर्मल्य सामंत, दिल्ली विश्वविद्यालय

    इस लेख में भारतीय सिनेमा के इतिहास को मूक सिनेमा, सवाक सिनेमा, फिल्म उद्योग का विकास, आज़ादी के बाद का सिनेमा भाग में खंड करते हुए उस पर प्रकाश डाला गया है।

2. हिंदी सिनेमा की भाषा तब और अब, डॉ जय कौशल, कदम

    यह लेख भारतीय सिनेमा की भाषा मुख्य रूप से हिंदी भाषा के सिनेमा के जरिये प्रचार-प्रसार पर केंद्रित है।

3. Film and Television Institute of India, Puna, Prospects-2020

    यह FTII Pune का 2020 का ऑनलाइन प्रोस्पेक्टस है। जिसमें FTII Pune के बारे में तथा उसमें नामांकन के सारी जानकारी दी गई हैं।

4. Harris, Jordan, Scott, From Bombay to Bollywood: 50 Years of Indian Cinema, Article, NW Film center, rogerebert.com

    इस पत्र में भारतीय हिंदी सिनेमा के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है तथा आरंभ से अब तक की विश्व विख्यात मदर इंडिया, प्यासा, शोले आदि जैसे भारतीय फिल्मों के बारे में विस्तार से लिखा गया है तथा हॉलिवुड सिनेमा के बराबर बताया गया है।

5. Guru, Dr. B.P. Mahesh Chandra, Sapna, Dr. M.S., Prabhudev, M., Kumar, Mr. M.Dileep, History of Indian Cinema, International Journal of Business and Administration Research Review, Vol. 2, Issue.11, July-Sep, 2015, ISSN: 2348-0653

इस शोध पत्र में भारतीय सिनेमा का इतिहास के बारे में लिखा गया है जिसका उप शीर्षक अवाक, सवाक, भारत के आजादि के बाद आदि दिया गया है। इसमें आधुनिक हिंदी सिनेमा अर्थात इक्कसवीं सदी के सिनेमा के बारे में भी जानकारी दी गई है।

6. http://oldror.lbp.world/UploadedData/9057.pdf अग्रवाल, योगेंद्र, वर्तमान हिंदी रंगमंच में विभिन्न पक्षों की प्रयोगवादिता एवं रंगमंच पर उसका प्रभाव, रिव्यहू ऑफ रिसर्च, ISSN:2248-894X, Vol.-8, Issue-9, June-2019

प्रस्तुत लेख में आधुनिक समय में हो रहे हिंदी रंगमंच में विभिन्न विषयों तथा टेक्निकल पक्ष पर प्रकाश डाला गया है। हिंदी रंगमंच वर्तमान समय में किस तरह से यथार्थ को अपना कर खुद को विकास की ओर अग्रसर कर रहा है। इसके कुछ पहलुओं को उजागर किया गया है।

7. Durai, D.J.Naganatha, GIRISH KARNAD HIS GRAND WORKS, International Journal of Multidisciplinary Research Review, ISSN - 2395-1877, Vol.1, Issue -33, November-2017

इस शोध में गिरीश कर्नाद द्वारा किये गये मुख्य कार्यों का वर्णन है। मुख्य रूप से उनके रंगमंचीय कार्य पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही उनके जीवन परिचय का भी उल्लेख है।

2.2 शोध अंतराल

रंगमंच का सिनेमा में प्रभाव विषय पर विद्वानों, शिक्षकों, प्रशंसकों आदि द्वारा लेख, शोध पत्र आदि लिखे गये है। जिसमें विशेष रूप से सिनेमा पर प्रकाश डाला गया है। इसके विपरीत अगर रंगमंच की बात की जाए तो उपर्युक्त प्रस्तुत शीर्षक के ऊपर अभी कार्य नहीं किया गया है। हाँ, इस बात का जिक्र अवश्य पाया जाता है की रंगमंच के कलाकार सिनेमा की ओर रूख करते आये हैं या कर रहे हैं लेकिन इसका रंगमंच पर क्या प्रभाव है? या जो कलाकार रंगमंच से सिनेमा की ओर रूख करते हैं उन कलाकारों द्वारा रंगमंच के क्षेत्र में किये गये योगदान का जिक्र नहीं पाया जाता है।

2.3 शोध का उद्देश्य

(1) हिंदी सिनेमा के प्रारंभिक समय से वर्तमान समय तक हिन्दी रंगमंच के इतिहास का अध्ययन करना

(2) सिनेमा में जाने के पूर्व तथा पश्चात चयनित प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा हिन्दी रंगमंच के क्षेत्र में किये गये कार्यों का अध्ययन करना

(3) चयनित प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा स्वयं को रंगमंच के माध्यम से सिनेमा में स्थान बनाने के अनुभव को उजागर करना

(4) सिनेमा उद्योग एवं चयनित प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा रंग क्षेत्र के विस्तार की

संभावना और प्रणाली को उजागर करना

2.4 उपकल्पना

(1) हिंदी रंगमंच ने अभिनेताओं के अभिनय से सिनेमा में यथार्थ चित्रण को मजबूती दी।

(2) अभिनेताओं द्वारा हिंदी रंगमंच के प्रशिक्षण और अभ्यास ने सिनेमा को विश्वसनीय, लोकप्रिय, प्रभावी और आर्थिक रुप से सशक्त बनाया है।

(3) हिंदी रंगमंच के विकास के लिए मिल रहा सरकारी सहयोग और प्रशिक्षण नाकाफी है, रंगमंच से निकले प्रख्यात सिनेमा अभिनेताओं को रंगमंच के प्रति अपने फर्ज (कर्ज अदायगी) निभाने की आवश्यकता है।

2.5 सीमांकन

प्रस्तुत शोध की सीमा भारतीय सिनेमा के उद्भव काल से लेकर 2019 ई. तक सीमित है। जिसमें उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा हिंदी रंगमंच तथा सिनेमा में किये गये कार्यों और इनके द्वारा हिंदी रंगमंच तथा सिनेमा को दिये गये समयावधि को मुख्य रूप से प्राथमिकता दी जायेगी।

2.6 शोध प्रविधि

इस शोध के लिए संकलित प्राथमिक और द्वितीयक आकड़ों को अंतर्वस्तु विधि के द्वारा विश्लेषित करते हुए निष्कर्ष तक पहुँचा जायेगा।

प्राथमिक और द्वितीयक आंकड़े निम्न प्रकार से संकलित किये जाएंगे-

प्राथमिक आंकड़ा-

i. प्रख्यात सिनेमा अभिनेताओं का साक्षात्कार।

ii. विडियोग्राफी: वर्तमान में हो रहे हिंदी रंगमंच, जिसमें प्रख्यात सिनेमा अभिनेताओं की भूमिका हो।

iii. प्रख्यात सिनेमा अभिनेताओं द्वारा किये गये कार्यों के साक्षी रहे व्यक्तियों का साक्षात्कार।

द्वितीयक आंकड़ा-

i. शोध विषय से जुड़े पुस्तक, पत्रिका, लेख, समाचार पत्र, ब्लॉग आदि के माध्यम से आकड़ों का संकलन।

ii. शोध विषय से संबंधित साक्षात्कार, प्रमोशन, समाचार, विडियो आदि के माध्यम से आकड़ों का संकलन।

2.7 निदर्शन

किसी भी शोध के लिए निदर्शन का आकार न तो अत्यधिक बड़ा होना चाहिए और न ही अत्यधिक कम होना चाहिए। निदर्शन का कितना आकार/मात्रा/संख्या, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक हो सकता है, इसी आधार पर निदर्शन किया जाना चाहिए। निदर्शन का आकार समग्र की प्रकृति, अनुसंधान की प्रकृति, इकाईयों की प्रकृति, अध्ययन पद्धति एवं तकनीक, निदर्शन पद्धति, उपलब्ध साधन इत्यादि को सामने रखकर निर्धारित किया जाना आवश्यक है। इन तथ्यों का ध्यान रखते हुए इस शोध के लिए 14 प्रख्यात सिनेमा अभिनेताओं का चयन सरल यादृच्छिक नमूनाकरण (Simple Random Sampling) विधि से किया गया है।

<u>अध्याय:3</u> भारतीय सिनेमा का इतिहास: अभिनेताओं के संदर्भ में

3.1. भारतीय सिनेमा का इतिहास: मूक सिनेमा (आरंभ से 1930 ई. तक)

इस अध्याय को अनिल भार्गव द्वारा रचित पुस्तक 'भारतीय सिनेमा का इतिहास' के आधार पर दस वर्ष के काल विभाजन में लिखा गया है।

3.1.1. आरंभ से 1912 ई. तक

भारतीय सिनेमा का प्रारंभिक वर्ष 1913 ई. से सन् 1930 ई. तक भारत में मूक सिनेमा का यूग रहा है। सन् 1931 ई. में भारत में पहली बार सवाक अर्थात बोलती फिल्म का प्रदर्शन हुआ था। आरंभ अर्थात भारत में सिनेमा आगमन के समय से ही भारत के सिनेमा दर्शक, प्रेमी, व्यवसायी आदि सिनेमा को अपने यहाँ जगह दिये तथा इसे अपना बनाने के लिए भिन्न-भिन्न राहों पर भिन्न-भिन्न तरीकों से कार्य करने लगें। जिसके परिणाम स्वरूप आज विश्व में सबसे ज्यादा सिनेमा बनाने वाला देश में भारत पहले स्थान पर है। जैसा कि हम सभी को ज्ञात है कि 7 जुलाई 1896 ई. में पहली बार भारत में सिनेमा का प्रदर्शन हुआ था। इससे प्रभावित होकर भारत में सर्वप्रथम हरिश्चंद्र सखाराम भाटवेडकर उर्फ सावेदादा ने सन् 1898 में "बंदर नचाता मंदारी" और सन् 1899 ई. में "कुस्ती खेल" नामक फिल्म बनाई थी, लेकिन इसे मूल रूप से भारतीय सिनेमा नहीं कहा जा सकता है। इसके अनेक कारण है जिसमें एक तो विदेशी कलाकारों का अत्यधिक भागीदारी भी है। विप्लव वोनोद के अनुसार, "हिंदी फिल्म निर्माण की जो शुरुआत मराठी भाषी घुंडिराज गोविंद फाल्के ने की थी, उस कड़ी में जुड़ने के लिए कई और निर्माता और

निर्देशक मैदान में आ गए, जिनमें धिरेन गांगुली तथा बाबू राव पेंटर प्रमुख थे।"[1] भारतीय सिनेमा की नीव सन् 1913 में दादा साहेब फाल्के द्वारा बनायी गयी फिल्म "राजा हरिश्चंद्र" से मानी जाती है।

सिनेमा की इतिहास की बात की जाए तो इसका श्री गणेश उन्नीसवीं शताब्दी के उतरार्ध में हुआ। इसका शुरुआत मोशन पिक्चर से हुआ। डॉ रयाज़ हसन के अनुसार, "एडवर्ड मेब्रिज ने सन् 1878 ई. में एक महत्वपूर्ण खोज की 'एनालोजिकल मोशन एक्सपेरिमेंट'। इस खोज द्वारा न केवल गतिशील अवस्थाओं के अध्ययन में सहायता मिली वरन गतिशील वस्तुओं की फोटोग्राफिक रिकार्डिंग को भी संभव बनाया।"[2] सन् 1894 ई. में अमेरिका ने पहली बार व्यवसायिक रूप से सिनेमा का प्रदर्शन करवाया था। सिनेमा के इतिहास में ल्यूमियर बंधु का नाम विश्वप्रसिद्ध है। जिन्होंने व्यवसाय के मकसद से विश्व के अलग-अलग देशों में सिनेमा का प्रचार-प्रसार किया। भारत में सिनेमा आगमन का श्रेय ल्यूमियर बंधुओं को जाता है। जिन्होंने दिसंबर 1895 ई. में पेरिस में सिनेमा का प्रदर्शन कर इसके लगभग छह महीने बाद दिनांक 7 जुलाई 1896 ई. में भारत के बंबई (आधुनिक नाम मुंबई) शहर के वाटसन होटल में सिनेमा का प्रदर्शन करवाकर भारत में सिनेमा का श्री गणेश किया। डॉ रयाज़ हसन द्वारा लिखित पुस्तक सिनेमा के उद्भव एवं विकास के अनुसार भारत में सिनेमा प्रदर्शन के पूर्व इसके प्रचार-प्रसार के लिए विज्ञापन जारी किया गया था। जिसमें समय 6, 7, 9, और 10 बजे तथा टिकट दर एक रूपया लिखा था।

[1] विप्लव, विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारें, पृष्ठ-5,

[2] हसन, डॉ रयाज़, सिनेमा का उद्भव एवं विकास, पृष्ठ-8

टाइम्स ऑफ इंडिया ने पहली बार प्रदर्शन के प्रथम शो का विज्ञापन में छापा था- 'एक शक्तिशाली लालटेन की मदद द्वारा असली जीवन से मिलते-जुलते बहुत से सीन पर्दे पर दिखाए गये। भारतीय इतिहास में स्वर्णिम अध्याय के रूप में 7 जुलाई 1896 ई. का दिन अंकित है- जब बंबई का 'वाटसन थियेटर' इस सर्वप्रथम प्रिमियर का गवाह बना। इसे प्रदर्शन करने का शुरुआत का श्रेय 'लुमियर ब्रदर्स' नामक दो फ्रांसीसी बंधुओं को जाता है।[3] 7 जुलाई 1896 ई. को ल्यूमियर बंधुओं द्वारा छह चलचित्रों का प्रदर्शन करवाया गया था। जिसमें से कुछ सिनेमा के नाम अराइवल ऑफ दी ट्रेन, द सी बर्ड, लिविंग द फैक्ट्री, लेडिज सोल्जरस् ऑफ द वीर इत्यादि है। इस प्रदर्शन पूर्व इसके लिए अखबार में विज्ञापन जारी किया गया था। *(चित्र संख्या-1 लुमियर ब्रदरस के द्वारा दिखाये गये सिनेमा का अखबार 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में छपा विज्ञापन)* लुमियर बंधुओं द्वारा बनाई गई ये फिल्में एक प्रकार से यथार्थवादी फिल्में थीं क्योंकि इसमें रोजमर्रा की आम जिंदगी आदि को हु-बहु कैमरे से रिकार्ड किया गया था। इसमें न तो कोई कहानी का जिक्र था, ना ही किसी प्रकार की नाटकीय तत्वों का और ना ही किसी अभिनय पक्ष का। जैसे फिल्म 'अराइवल ऑफ दी ट्रेन' में स्टेशन पर आता हुआ एक रेलगाड़ी को फ्रंट साइड से फिल्माया गया था।, फिल्म 'लिविंग द फैक्ट्री' में फैक्ट्री से निकलते हुए मजदूर को फिल्माया गया था। इत्यादि। निर्देशक परेश मोकशी द्वारा सन् 2010 में दादा साहब फाल्के के ऊपर बनाई गई मराठी फिल्म 'हरिश्चंद्राची फैक्ट्री' के अनुसार जब बंबई के वाटसन होटल में लुमियर बंधुओं द्वारा पर्दे पर फिल्म दिखाया गया तो दर्शकों ने इसका खुब आनंद लिया तो वहीं शुरूआत में

---

[3] सिंह देवेन्द्र नाथ डॉ., यादव वीरेन्द्र सिंह डॉ., भारतीय हिंन्दी सिनेमा की विकास यात्रा एक मूल्यांकन, सम्पादकीय, पेज-x

फिल्म 'अराइवल ऑफ दी ट्रेन' देखकर भय का माहौल भी बना। इस संदर्भ में प्रसुन सिन्हा लिखते है, "उस दिन 'अराइवल ऑफ दी ट्रेन' के प्रदर्शन के दौरान लोगों को अजीब रोमांचकारी अनुभव हुआ। पलभर को तो उन्हें लगा जैसे ट्रेन उस होटल के अंदर आ गई हो और वह उनके ऊपर से निकल जाएगी। कुछ लोग तो इस भय से घबराकर अपनी जगह से उठकर बाहर की ओर भागने लगे। उन लोगो के लिए भी यह रोमांचकारी अनुभव सर्वथा नया और अनोखा था।"[4] किसे पता था कि जिस भारत में व्यवसाय के मकसद से सिनेमा ने अपना कदम रखा है। आगे चलकर वही भारत विश्व स्तर पर सिनेमा बनाने के क्षेत्र में अव्वल दर्जे पर खड़ा होगा।

भारतीय सिनेमा बनाने के क्षेत्र में मुख्य रूप से सर्वप्रथम 'हरिश्चंद्र सखाराम भाटवेडकर' उर्फ 'सावे दादा' का नाम आता है। 15 मार्च 1868 को जन्मे एच.एस. भाटवेडकर मुंबई (बॉम्बे) के निवासी थे। वे पेशे से एक पोर्ट्रेट फोटोग्राफर थें। भाटवेडकर सन् 1896 ई. में मुंबई में लुमियर ब्रदर्स द्वारा दिखाया गया फिल्म शो के पहले गवाह थे। उन्होंने 1897 ई. में ही लंदन से एक फिल्म कैमरा और एक प्रोजेक्टर हासिल कर लिया और शहर के दिन-प्रतिदिन के जीवन को फिल्माने के साथ-साथ कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम भी किए। सिनेमा बनाने के प्रति उनके दिल में जो उत्साह और प्यार था, वो लुमियर ब्रदर्स से प्रभावित था। बंबई शहर के वाटसन होटल में प्रदर्शित हुई फिल्म के नियमित दर्शक रह चुके हरिश्चंद्र सखाराम भाटवेडकर ने फिल्म बनाने का विचार को सकार करने हेतु उन्होंने विदेश से कैमरा मंगवाकर लुमियर बंधु की भाँति यथार्थवादी फिल्में, सन् 1898 ई. में

---

[4] सिन्हा, प्रसून, भारतीय सिनेमा एक अनंत यात्रा, पृष्ठ-21

'बंदर नचाता मंदारी' और सन् 1899 ई. में 'कुस्ती खेल' नामक फिल्म बनाकर लोगों के समक्ष प्रस्तुत करने लगें। इन फिल्मों की प्रोसेसिंग लंदन में हुई थी। डॉ रयाज़ हसन के अनुसार, "सन् 1897 ई. में सावे दादा ने इक्कीस गिन्नी मूल्य का एक फिल्म कैमरा लंदन से मंगवाया। इससे उन्होंने छोटी-छोटी फिल्में फिल्मांकर उन्हें प्रोसेसिंग के लिए लंदन भेजा। सन् 1901 में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के भारतीय छात्र ने गणित में सर्वाधिक अंक प्राप्त किए। सावे दादा ने बंबई पहुँचने पर उनके स्वागत का फिल्मांकन किया। इस फिल्म को भारत के पहली समाचार व डॉक्युमरंट्री फिल्म के रूप में जाना जाता है।"[5]

भारत में फिल्म के पहले निर्देशक के तौर पर सावे दादा का जिक्र होता है। सावे दादा ने बतौर निर्देशक 'बंदर नचाता मंदारी' (1898), 'कुस्ती खेल' (1899), 'अताश बेहराम' (1901), 'लॉर्ड कर्जन का दिल्ली दरबार' (1903) आदि फिल्मों का निर्माण किया। इन सब फिल्मों का फिल्मांकन एक यथार्थ रूप में किया गया था। हक़िकत में हो रहे या घट रही घटनायें; इसके लिए कोई सेट, लाइट, कॉस्ट्यूम, अभिनेता आदि का चयन नहीं किया गया था। फिल्म 'जोन ऑफ आर्क' भारत की पहली सबसे लंबी फिल्म थी। जिसे 1901 ई. में प्रदर्शित हुई थी। प्राकृत और यथार्थ दृश्यों को फिल्माने के दौर के बाद उस समय हो रहे रंगमंच नाटक को फिल्माने की होर लगी और बाद में फिल्माये गये नाटक को दर्शकों के सामने प्रदर्शित किया जाता था। यहाँ से हम कह सकते है कि अप्रत्क्ष रूप से फिल्मों में अभिनेता की आवश्यकता पड़ने लगी।

---

[5] हसन, डॉ रयाज़, सिनेमा का उद्भव एवं विकास, पृष्ठ-52

एक तरफ भारत के पश्चिमी भाग बंबई में सावे दादा तो दूसरी तरफ पूर्वी भाग कलकत्ता में हीरालाल सेन (जन्म-1866, मृत्यु-1917) क्लासिकल थियेटर में खेले जाने वाले नाटकों को फिल्माकर लोगों के समक्ष रखना प्रारंभ किया। हीरालाल सेन पेशे से फोटोग्राफर थे लेकिन सन् 1898 ई. में इन्होंने 'द रॉयल बाइस्कोप' नामक कंपनी की नीव डाली और क्लासिकल थियेटर में फिल्माये गयें नाटकों का प्रदर्शन करना शुरू किया। फ्रांसिसी कंपनी 'पाथे कंपनी' के साथ काम करने के कुछ समय बाद हीरा लाल सेन ने स्वयं फिल्मों के निर्माण में जुट गयें। इन्होंने सन् 1906 ई. में बंगाल विभाजन को लेकर एक वृत्त चित्र भी बनाया। इसी समकालीन समय में थियेटर के शौकिन तथा एलिफिस्टल थियेटर कंपनी और न्यू अलफ्रेड थियेट्रिकल कंपनी के मालिक 'जमशेदजी मदन' जिनका जन्म बंबई के पारसी परिवार में हुआ था, ने अपनी थियेटर कंपनी में हो रहे नाटकों को फिल्माना शरू कर दिया था। ये फिल्म वितरण व्यवसाय का कार्य करने के साथ-साथ फिल्म प्रदर्शन करवाने का कार्य भी करते थें। भारतीय सिनेमा को अस्तित्व में लाने हेतु 'जमशेदजी मदन' का बखूबी योगदान रहा है। इन्होंने ही सन् 1907 ई. में भारत में प्रथम सिनेमा थियेटर की स्थापना की। रेणु सरण के अनुसार, "Jamshedji Framjee Madan, started showing movies show in tents in 1902, who later on went on to established India's first Permanent cinema house - Elphinstone Picture Palace, which is now known by the name of Chaplin."[6]

---

[6] Saran, Renu, Encyclopedia of Bollywood - Film Actors, Page-43

भारत की पहली ड्रामैटिक मूक फिल्मों में फिल्म ‘पुंडलिक’ का नाम आता है, जो 18 मई 1912 ई. को एक हॉलीवुड मूक फिल्म ‘ए डेड मैन्स चाइल्ड’ के साथ, मुंबई के कोरोनेशन थियेटर में प्रदर्शित हुई थी। *(चित्र संख्या-2 रामचंद्र गोपाल तोरने के द्वारा निर्देशित ‘पुंडलिक’ फिल्म का विज्ञापन)* हिंदू संत भक्त पुंडलिक की भक्ति फिल्म वास्तव में मंचन थी। जो रामराव कीर्तिकर द्वारा नासिक के श्रीपाद संगीत मंडली द्वारा मराठी नाटक के रूप में प्रस्तुत किया गया था। बंबई के ग्रांट रोड के पास मंगलदास वाडी में एक विदेशी फिल्मकार ‘जॉनसन’ के द्वारा फिल्म पुंडलिक को फिल्माया गया था। फिल्म ‘पुंडलिक’ को फिल्माये जाने के बाद इसे प्रोसेसिंग के लिए लंदन भेजा गया था। एक सप्ताह बाद 25 मई 1912 ई. को ‘द टाइम्स ऑफ इंडिया’ अखबार द्वारा इसकी समीक्षा की गई थी जहां समीक्षक ने लिखा: ‘पुंडलिक हिंदुओं का ध्यान आकर्षित करने की शक्ति रखता है।’ फिल्म ‘पुंडलिक’ के निर्देशक रामचंद्र गोपाल तोरने (आर. जी. तोरने) एवं नारायण गोविंद चित्रे (एन. जी. चित्रे) थे। एन. जी. चित्रे जो कोरोनेशन सिनेमैटोग्राफ प्रबंधक थे, और आर. जी. तोरने ने नाटक की शूटिंग स्क्रिप्ट लिखने का कार्य भी किया। रेणु सरण के अनुसार “First dramatic full length film was made by R.G. Torney and N.G. Chitre, in collaboration with the British, was titled ‘Pundalik’, which was a movie about a Maharashtriyan saint. This film was released on May 18, 1912, at Coronation cinema in Bombay.”[7] इसके बाद टॉर्ने ने ‘सरस्वती सिनेटोन’ नामक, अपना खुद का स्टूडियो स्थापित किया, जिसमें ‘राजा गोपीचंद’ और ‘आठ

---

[7] वही, पृष्ठ - 44

घाट का राजा’ आदि जैसी फिल्में बनाई थी। फिल्म ‘पुंडलिक’ भारत कि पहली ड्रामैटिक फिल्म होने के बाद भी, भारतीय फिल्म इतिहास में पहली भारतीय फिल्म के रूप में दादा साहब फाल्के द्वारा निर्देशित फिल्म ‘राजा हरिश्चंद्र’ का नाम आता है। फिल्म ‘पुंडलिक’ फिल्म की कहानी न होकर दृश्यावली थी।... फिल्म में 80 प्रतिशत सहयोग विदेशी निर्माता का ही रहा। अतः इसे इंडिया की मूल फीचर फिल्म नहीं माना गया।[8]

दिलचस्प के द्वारा लिखित पुस्तक हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास के अनुसार भारत में फिल्म आरंभ से सन् 1912 ई. तक मूख्य रूप से ‘ट्रेन एराविंग एट बॉम्बे स्टेशन’(1898), ‘पूना रेसेस 1898'(1898), ‘द रेसलर्स’(1899), ‘लोकल सींसेस कोलकत्ता’(1899), ‘सींस फॉम द प्लेग’(1901), ‘वरमार’(1901), ‘अलीबाबा’(1901), ‘सर वेंगल’(1902), ‘देलही दरबार’(1903), ‘द ग्रेट पार्टिशन मूवमेंट’(1904), ‘ओपनिंग एंड क्लोजिंग हावड़ा ब्रिज’(1905), ‘तिलक की कलकत्ता यात्रा’(1906), ‘जुलूस’(1906), ‘हावड़ा से अलीपुर की यात्र’(1907), ‘द टेरिबल हैदराबाद फ्लड’(1908), ‘ए मोहर्रम फेस्टीवल एट देल्ही’(1910), ‘फ्लाइट टू दार्जिलिंग’(1910), ‘किरची दरबार एवं कोरोनेशन’(1911), ‘डियर मेजेस्टिज इन बाम्बे’(1911), ग्रेट देल्ही दरबार’(1911), ‘ग्रेट देल्ही कोरोनेशन’(1912), ‘अराइवल एट हावड़ा’(1912), ‘गणपति फेस्टिवल’(1912), ‘बनारस एवं काशी’(1912), ‘पुंडलिक’(1912), ‘पुरम’(1912), ‘सावित्री’(1912), ‘रामायण’(1912) आदि फिल्मों के सहारे अपनी जड़े मजबूत करता रहा और अंततः सन् 1913 ई. में भारत की पहली स्वदेशी फिल्म ‘राजा हरिश्चंद्र’ के रिलिज के साथ भारतीय सिनेमा कि नीव पड़ी। इस समय में

[8] दिलचस्प, हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ - 17-14

बन रही फिल्मों में किसी प्रकार के अभिनेता कि आवश्यकता नहीं होती थी क्योंकि इस समय यथार्थ में हो रही घटना या किसी प्राकृत चिजों को फिल्माया जाता था। उपर्युक्त फिल्मों के नाम से ये बात स्पष्ट झलकती है। भारतीय फिल्म के इतिहास में आर. जे. तोर्णे द्वारा बनी फिल्म 'पुंडलिक' में पहली बार अभिनेता की आवश्यकता हुई। इसी फिल्म से भारतीय फिल्मों में अभिनेता की जरूरत महसूस होने लगी।

3.1.2. 1913 ई. से 1930 ई. तक

भारतीय मूक सिनेमा का युग सन् 1913 ई. से सन् 1930 ई. तक माना जाता है। इसके पहले बनने वाली फिल्म भी मूक हुआ करती थी लेकिन उसे भारतीय सिनेमा का दर्जा प्राप्त नहीं था। ऐसा नहीं की सन् 1930 ई. में मुक सिनेमा पूर्ण रूप से बंद हो गया था लेकिन हाँ इसके बाद से जो मूक सिनेमा का ग्राफ नीचे की ओर बढ़ा, वो फिर कभी ऊपर न उठ पाया और एक समय आने पर मुक सिनेमा हमारे बीच मनोरंजन के स्थान पर इतिहास बनकर रह गया। सन् 1931 ई. में प्रथम भारतीय सवाक फिल्म 'आलम आरा' के रिलिज होने के बाद से धीरे-धीरे दर्शकों को अब सवाक अर्थात संवाद वाली फिल्में ज्यादा भाने लगी। जिससे मूक फिल्मकारों और व्यवसायिओं को हानि होने लगी। इसके बाद इन्होंने या तो फिल्म बनाना बंद कर दिया या फिर सवाक फिल्मों की तरफ रूख किये। कुछ लोगों ने सवाक फिल्मों का विरोध भी किया। कुछ का कहना था कि सवाक फिल्में हमारी एकता को भाषा के आधार पर बाँट रही है। जिस मूक फिल्मों का प्रदर्शन किसी भी भाषा क्षेत्र के लोग कर सकते है अब उसमें भाषा/संवाद आ जाने से सिर्फ उस भाषा के लोग ही उस फिल्म का आनंद ले पायेंगे जिस भाषा में वो फिल्म बनी हो या जिस क्षेत्र में

वो भाषा बोली जाती है। अब भला उगते सूरज को कौन रोक सकता है! इतने विरोध के बाद भी फिल्में बनती रही और उगते हुए सूरज के प्रकाश की भाँति अपने क्षेत्र में विस्तार करती रही और ज्यादा से ज्यादा लोगों को उसमें समेटती रही।

भारत में फिल्मों के प्रवर्तक के रूप में दादा साहब फाल्के जिनका पूरा नाम थूण्डी राज गोविंद फाल्के था, का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भारतीय फिल्म के जनक कहलाये जाने वाले दादा साहब फाल्के ने सन् 1912 ई. में फिल्म 'राजा हरिश´चंद्र' बनाकर मुंबई के कोरोनेशन थियेटर में 3 मई 1913 ई. को लोगो के समक्ष प्रस्तुत किया था। *(चित्र संख्या-3 दादा साहब फाल्के के द्वारा निर्देशित फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का विज्ञापन)* यह फिल्म 3700 फीट लंबी थी। फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का पहला प्रदर्शन 21 अप्रैल 1913 ई. में मुंबई के ओलंपिया सिनेमा में किया गया था। जिसमें कुछ नामी गीने-चुने लोग मौज़ूद थे। इस फिल्म के प्रदर्शन के साथ ही भारतीय फिल्म का जन्म होता है। यह भारत की पहली फिचर फिल्म थी जिसे बनाने में पूर्ण रूप से स्वदेशी कलाकारों का हाथ रहा। विप्लव विनोद अपने ए पुस्तक में लिखते है, "भारत में सिनेमा की शुरूआत का श्रेय दादा साहेब फाल्के को जाता है। उन्होंने 1912 ई. में 'राजा हरिश्चंद्र' फिल्म बनाकर भारत में सिनेमा का श्रीगणेश किया। कुल 3700 फीट लंबी यह फिल्म 3 मई 1913 को बंबई के कोरोनेशन सिनेमा घर में प्रदर्शित हुई तो वहाँ दर्शकों की भारी भीड़ उमड़ पड़ी।"[9]

दिनांक 25 सितंबर 2019 को अखबार दैनिक जागरण जोश ऑनलाइन में प्रकाशित इंट्रेसटींग फैक्ट ऑफ दादा साहब फाल्के के अनुसार दादा साहब फाल्के एक महान भारतीय

---

[9] विनोद, विप्लव, हिंदी सिनेमा के 150 सितारें, पेज-1

फिल्म निर्माता, निर्देशक, फिल्म लेखक, कहानीकार, सेट डिजाइनर, ड्रेस डिजाइनर, संपादक, वितरक आदि थे। उन्हें 'भारतीय सिनेमा के पिता' के रूप में जाना जाता है क्योंकि उन्होंने भारत के लोगों को सिनेमाई अनुभव की सुंदरता से परिचिय कराया और दुनिया में सबसे बड़ा मनोरंजन उद्योग कि नीव डाली। दादा साहब फाल्के का जन्म 30 अप्रैल, 1870 को महाराष्ट्र के नासिक जिले के पास त्र्यंबकेश्वर शहर में हुआ था। उन्होंने अपनी प्राथमिक शिक्षा सर जे.जे. स्कूल ऑफ़ आर्ट्स, मुंबई में पूरी करने के बाद सन् 1890 ई. में वे ड्रॉइंग, पेंटिंग और फोटोग्राफी के बारे में अध्ययन करने के लिए गुजरात चले गए। स्कूल के समय से ही उन्हे जादू-टोने में दिलचस्पी थी। दादा साहब फाल्के ने एक फोटोग्राफर के रूप में अपना करियर शुरू किया, लेकिन प्लेग के प्रकोप के कारण अपनी पहली पत्नी और बच्चे की मृत्यु के बाद, उन्होंने फोटोग्राफी का काम छोड़ दिया था। पुनः अपने कार्य को नई तकनीकों के साथ शुरु करने के विचार से तकनीकि ज्ञान प्राप्त करने हेतु वे जर्मनी का रूख किए। जर्मनी में उन्हें 'कार्ल हर्ट्ज' नामक एक जादूगर से मुलाकात हुई। दादा साहब फाल्के ने उनके साथ काम भी किया। कुछ समय बाद उन्हें भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण में ड्राफ्ट्समैन के रूप में काम करने का मौका मिला लेकिन रुचि न होने के कारण उन्होंने नौकरी छोड़ दी और वापस महाराष्ट्र आ गए। वहां, उन्होंने अपनी प्रिंटिंग प्रेस का व्यवसाय शुरू किया। जब उन्होंने 'फर्डिनेंड ज़ेका' द्वारा बनाई गयी मूक फिल्म 'द लाइफ ऑफ क्राइस्ट' देखी तो उन्हें सिनेमा से इस कदर लगाव हुआ कि उन्होंने खुद सिनेमा बनाने को ठान लिया। अपने इस सपने कि शुरूआत दादा साहब फाल्के ने भारत की पहली पूर्ण लंबाई वाली मूक फीचर फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' बनाकर किया। इस फिल्म में इनकी धर्मपत्नि का बहुत बड़ा योगदान रहा था।

किसी फिल्म के निर्माण हेतु जिस तरह सिनेमा में ऑन स्क्रिन कलाकारों की आवश्यकता होती है उसी तरह ऑफ स्क्रिन कलाकारों की भी भूमिका अहम होती है। भारतीय सिनेमा के शुरूआत से ही अभिनेताओं की आवश्यकता अहम रही है। भारत की पहली फिचर फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' में भी अभिनेताओं की पूर्ति के लिए विज्ञापित जारी किया गया था। यह विज्ञापन भारतीय फिल्म इतिहास कि पहली ऐसी विज्ञापन रही जिसमें फिल्म में काम करने हेतु अभिनेता की आवश्यकता का जिक्र था। आज भी किसी फिल्म निर्माण से पहले अभिनेताओं का चयन अति आवश्यक होता है। यहाँ तक कि आज इसके लिए अलग से कास्टिंग निर्देशक भी रखा जाता है। फिल्म 'राजा हरिशचंद्र' बनाने के लिए फाल्के के सामने अभिनेताओं कि बहुत परेशानी रही थीं। फिल्म 'हरिश्चंद्राची फैक्ट्री' के अनुसार फाल्कें ने जब अभिनेताओं कि पूर्ति हेतु विज्ञापन जारी किया तो उनके सामने ऑडिशन के लिए बहुत लंबी एक ऐसी भीड़ जमा हो गई जो उनके फिल्म में किसी प्रकार कि कोई जरूरत ही नहीं थी। अतः उन्हें विज्ञापन में संशोधन करके पूनः विज्ञापन जारी करना पड़ा। अनेक प्रयासों के बाद पुरूष पात्र कि कमी तो पुरी हुई लेकिन स्त्री पात्र हेतु अभी भी परिश्रम ज़ारी था। अनेक प्रयासों के बाद भी फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' में काम करने हेतु स्त्री पात्रों कि कमी पूरी नहीं हो सकी। इसके अनेक कारण रहें जिसमें सबसे मूख्य बात यह रही कि उस समय स्त्रियां किसी फिल्म में काम करना अपना मान-मर्यादा, गरिमा, इज्जत-संस्कृति आदि के ख़िलाफ समझती थी। अततः फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' में स्त्री पात्र तारामती करैक्टर के लिए 'सालुंके' नामक एक पुरूष पात्र को ही कास्टयूम मेकप आदि करके फिल्माया गया। जागरण जोश में प्रकाशित लेख के अनुसार, "Dada Sahab Phalke played the role of Harishchandra and even his 7 year old son Bhalchandra

Phalke played a major role of Harishchandra's son in the film. Also, a man was selected for the lead role of Taramati as no woman was ready to work in the film that time."[10] उनकी पत्नी ने अभिनेताओं की वेशभूषा, पोस्टर और फिल्म के निर्माण का काम संभाला। दादा साहेब के पूरे परिवार ने फिल्म राजा हरिश्चंद्र बनाने में भाग लिया। दादा साहब फाल्के द्वारा बनाई गई दुसरी फिल्म 'भस्मासुर मोहिनी' थी जिसका प्रदर्शन 27 दिसम्बर 1913 ई., मुंबई के ओलंपिया थियेटर में किया गया था। फिल्म 'भस्मासुर मोहिनी' में कार्य करने हेतु फाल्के के पास दो महिला करैक्टर मिल चुकी थी, जिनका नाम था 'दुर्गाबाई' और 'कमला गोखले'। 'दुर्गाबाई' और 'कमला गोखले' को भारतीय सिने इतिहास में भारत कि पहली सिनेमा अभिनेत्री का दर्जा दिया जाता है। सन् 1912 ई. में ही एस. एन. पाटनकर ने 'मर्डर ऑफ नारायण राव पेशवा' बनाना शुरू किया था जिसका पहला शो सन् 1915 ई. में पुणे के आर्यन थियेटर में किया गया था। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ हिंदी सिनेमा के अनुसार, "An exception was S.N. Patankar and his Friends and Company Films, who strode up in 1915 with a historical Narayanrao Peshwa. Phalke meanwhile made 'Mohini Bhasmasur' and 'Satyavan Savitri' for which he got real females, Durgabai and Kamlabai Gokhle the very first actresses in Indian Cinema."[11] इंडिया टूडे न्यूज (https://www.indiatoday.in/dadasaheb-phalke) के अनुसार' दादा साहब फाल्के ने

---

[10] https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/interesting-and-unknown-facts-about-dadasaheb-phalke-1525077198-1

[11] Gulzar, Nilhani, Govind, Chatterjee Saibal, Encyclopaedia of Hindi Cinema,

अपने जीवन काल में कुल 95 फिल्म और 26 शार्ट फिल्मों का निर्माण किया। दादा साहेब फाल्के की आखिरी मूक फिल्म 'सेतुबंध' सन् 1932 में रिलीज हुई थी और बाद में इसे डबिंग के साथ रिलीज किया गया था। उन्होंने 1936-37 के दौरान अपनी आखिरी फिल्म 'गंगावतरण' का निर्माण किया। उनके द्वारा बनाया गया फिल्म 'लंका दहन' में अभिनेता 'सालुंके' ने एक साथ दो चरित्र (राम-सीता) अभिनीत किया। फाल्के द्वारा निर्मित फिल्म 'श्री कृष्ण जन्म' (24 अगस्त सन् 1918) में 'मंदाकिनी' (फाल्के कि पुत्री) ने बाल कृष्ण कि भूमिका अदा की थी। 16 फरवरी 1944 को नासिक में उनका निधन हो गया। भारत सरकार ने फिल्म उद्योग में दादा साहेब फाल्के के योगदान को देखते हुए भारतीय सिनेमा का सबसे बड़ा पुरस्कार, उन्हें सम्मान देने के लिए उनके नाम पर किया गया। 'द दादा साहब फाल्के अवार्ड'। इस पुरस्कार कि पहली विजेता भारतीय सिनेमा की पहली महिला 'देविका रानी' रहीं। इस पुरस्कार में एक शॉल, लगभग 10 लाख रूपये नकद और एक स्वर्ण कमल से विजेता को सम्मानित किया जाता है। उनके सम्मान में भारतीय पोस्ट ने सन् 1971 ई. में एक डाक टिकट भी जारी किया।

फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' के रिलिज होने के साथ ही भारत में फिल्मकारों कि होड़ सी लग गई। भारत के हर क्षेत्र में सिनेमा प्रेमियों तथा सिनेमा व्यवसायिओं सिनेमा में अपनी-अपनी किस्मत आजमाने लगे। मूख्य रूप से बात कि जाये तो बंगाल में जे. एफ. मदन ने अब रियल शॉट से फिचर फिल्म कि ओर बढ़े और फिल्म 'सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र' बनाकर मार्च 1917 में इसे बंगाल में रिलिज किया। बंगाल की पहली फिचर फिल्म 'बिलवमंगल' का निर्माण 1919 में मदन थिएटर के बैनर तले किया गया था। वहीं मराठी सिनेमा कि बात की जाये तो यह भारत का सबसे पुराना फिल्म उद्योग है। भारत कि

पहली मूक फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र', जिसे मराठी में महाराष्ट्रीयन दादा साहब फाल्के द्वारा बनाया गया था, लेकिन अनेक विद्वानों के अनुसार फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' को हिंदी फिल्म जगत का पहला फिल्म माना जाता है। सन् 1919 में बाबूराव पेंटर ने महाराजा कोल्हापुर के आशीर्वाद से महाराष्ट्र फिल्म कंपनी का गठन किया और 1920 में बालाशाह पवार, कमला देवी और ज़ूनज़ार राव पवार के साथ पहली महत्वपूर्ण ऐतिहासिक फिल्म 'सैरांधरी' को रिलीज़ किया। इस फिल्म में दो स्त्री पात्र 'गुलाब बाई' और 'अंसुईया बाई' थी। इन्हें क्रमशः कमला देवी और सुशीला देवी के नाम भी जाना जाता है। दक्षिण भारत में सिनेमा का इतिहास तमिल सिनेमा से माना जाता है जिसका इतिहास लगभग 1916 से पहले का है। जब नटराज रंगास्वामी मुदलियार ने 'कीचक वधम' नामक फिल्म बनाई थी, जो दक्षिण भारत की पहली मूक फिल्म भी थी। नटराज मुदलियार द्वारा बनाई गई फिल्म 'द्रोपदी वस्त्रहरणम' में स्त्री पात्र भूमिका के लिए दो विदेशी स्त्री मेरीन हिल और वायलेट बेरी को चुना गया था। 'भीष्म प्रतिज्ञा' तेलगु की पहली फिल्म मानी जाती है जिसे आर. एस. प्रकाश ने सन् 1922 में बनाई थी। मलयालम में पहली फीचर फिल्म 'विगाथाकुमारन' 1928 में रिलीज हुई थी। जिसे जे.सी. डेनियल द्वारा निर्मित और निर्देशित किया गया था। जे.सी. डेनियल ने स्वयं इस फिल्म में नायक की भूमिका निभाई थी। इस समय सभी क्षेत्रों में बनने वाली फिल्मों का मूख्य केंद्र धर्म हुआ करती थी किन्तु धर्म से अलग हटकर भी कुछ फिल्मों का निर्माण किया गया। जिसमें सामाजिक, रोमांटिक, ऐतिहासिक आदि उल्लेखनीय है। लेखक विनोद विप्लव के द्वारा लिखि गई पुस्तक हिंदी सिनेमा के 150 सितारे के अनुसार फिल्म 'सती पार्वती' (1920) जो एक सती विषय पर बनने वाली पहली फिल्म थी। ऐसे ही फिल्म 'अशोक'(1922) पहली ऐतिहासिक, फिल्म 'तारा डांसर'(1922)

एवं 'लेडी टीचर'(1922) प्रथम सामाजिक, फिल्म 'इग्लैंड रिटर्न'(1921) पहली मॉडर्न जमाने की समस्या, फिल्म 'लैला मज़नूं' (1922) पहली रोमांटिक फिल्म रही है।

मूक सिनेमा की शूटिंग सूर्य की रौशनी में हस्त चालीत कैमरे से होती थी। कुछ नामी-गीनी बड़ी कंपनियां आर्क लाइट की व्यवस्था करती थी। रात में मूक सिनेमा की शुटिंग की शुरूआत सिनेमा "ख्वाब ए हस्ती" से हुई। सन् 1918 में भारतीय फिल्म के लिए सेंसर लाया गया और इसके बाद किसी भी फील्म का प्रदर्शन करना होता तो उस फिल्म को सेंसर बोर्ड से होकर गुजरना पड़ता था। जो आज के समय में भी देखने को मिलता है। 'कोहिनूर फिल्म कंपनी' द्वारा निर्मित फिल्म 'भक्त विदूर' (सन् 1921 ई.) जिसे माहाभारत के आड़ लेते हुए राजनिति पर वार किया गया था। यह भारतीय फिल्म इतिहास कि प्रथम ऐसी फिल्म रही जिसके प्रदर्शन पर सेंसर बोर्ड ने रोक लगाया था। अनिल भार्गव बताते है कि "कोहिनूर फिल्म कंपनी के संस्थापक द्वारकादास नारायणदास संपत ने सवयं विदूर की भूमिका की थी।..... इसी कंपनी द्वारा निर्मित एक पौराणिक फिल्म 'सती अनसूया' भी इसी वर्ष आई जिसमें एक अभनेत्री सकिना बाई का नग्न नृत्य था। सेंसर इस नृत्य पर कोई आपत्ती नहीं की।"[12] सन् 1921 में बाबू राव पेंटर ने फिल्म 'सुरेखा अभिमन्यु' बनाना शुरू किया था। इस फिल्म में श्री कृष्ण कि भूमिका के लिए बाबू राव पेंटर ने वी शांताराम को कास्ट किया था। बाबू राव पेंटर द्वारा सन् 1921 ई. में प्रदर्शित हुई फिल्म 'सिंहगढ़' में बीस वर्षीय शांताराम ने अस्सी वर्ष के वृद्ध (शेलार मामा) की भूमिका अदा की थी। 'स्टार फिल्म लिमिटेड कंपनी' के संस्थापक आर्देशिर ईरानी एवं बी. एल. दवे ने सन् 1922

---

[12] भार्गव, अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ- 32-33

में 'वीर अभिमन्यु' फिल्म बनाई जिसमें उस समय तक कि बनी फिल्मों में सबसे ज्यादा अभिनेता शामिल थे। इसमें कुरूक्षेत्र के युद्ध के सीन के लिए पाँच हजार लोगो को लेकर फिल्माया गया था। सन् 1925 में 'फ्रेंच आस्टीन' और 'हिमांशु राय' द्वारा निर्देशित फिल्म 'द लाइट ऑफ एशिया' में हिमांशु राय ने खुद महात्मा गौतम बुद्ध का और राने स्मिथ नामक एक स्त्री यशोधरा का किरदार निभाया था। इसी वर्ष 'कृष्णा फिल्म कंपनी' ने 'फॉरचून एंड फूल' नामक फिल्म बनाया जिसमें 'गौहर' नामक एक स्त्री पात्र ने अपना किरदार बखुबी निभायी थी। कोहिनूर फिल्म कंपनी ने भी एक नई होनहार अभिनेत्री 'सुलोचना' उर्फ 'रूबी मेयर्स' को फिल्म 'वीर बाला' में प्रस्तुत किया।[13] कोहिनूर फिल्म कंपनी ने अभिनेत्री 'सुलोचना' उर्फ 'रूबी मेयर्स' को लेकर 'सिनेमा क्विन', 'टेलीफोन गर्ल' आदि जैसी अनेक स्त्री प्रधान फिल्मों का निर्माण किया। सन् 1930 ईं. में 'देवकी बोस' ने धिरेन गांगुली कि फिल्म 'फ्लेम्स ऑफ फ्लैश' से फिल्म अभिनय जगत में अपना कदम रखा जो आगे चलकर फिल्म जगत के निर्देशन क्षेत्र में बहुत ख्याति प्राप्त कियें। सर्वप्रथम होमी मास्टर जिन्हें काला नाग के नाम से भी जाना जाता है ने अभिनेत्री 'गौहर' को पर्दे पर लाया था। होमी वाडिया अपनी अभिनय और निर्देशन के लिए जाने जाते थें। इन्होंने सन् 1931 ई. में अपनी प्रथम अवाक फिल्म 'थंडर वोल्ट (दिलेर डाकु)' बनाया था। जिसमें अभिनेता 'जमशेद वाडिया', 'यशवंत दुबे' और अभिनेत्री 'मुम्ताज़' ने काम किया था।

इस युग के प्रमुख फिल्मकारों में जमशेद जी मदन, धिरेंद्र नाथ गांगुली, बाबुराव पेंटर, द्वारिका दास सम्पत, आर्देशिर एम. इरानी, भोगी लाल, एम. के. दुबे, चंदु लाल जे.

[13] वही, पृष्ठ- 37

साह आदि उल्लेखनीय है। इस समय की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक सिनेमा में आर. जी. तोर्णे की 'पृथ्वी वल्लभ', ग्रेट इस्टन फिल्म कॉरपरेशन की 'अनार कली', प्रभात फिल्म कंपनी पूणा की 'उदय काल', रंजीत मुवी टोन की 'राजपुतानी', ब्रिटिश डोमिनियन कंपनी कलकत्ता की 'चित्तौर की पदमणी' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस युग में बनी सामाजिक फिल्मों की बात करते हुए सर्वप्रथम सन् 1925 ई. में बनी फिल्म 'सावकारी पाश' जिसमें भारतीय किसान की ऋणता ग्रसत्ता तथा रक्त शोशक साहुकार का चित्रण है। ये फिल्म बाबु राव पेंटर ने बनाई थी। इसे मुक युग का सर्वश्रेष्ठ फिल्म माना जाता है। इसी सब के साथ चलते-चलते मूक सिनेमा का दौर समाप्ति कि ओर बढ़ने लगा तथा अब अवाक फिल्मों कि जगह सवाक फिल्मों ने लेना शुरू कर दिया। ऐसा नहीं कि सवाक सिनेमा के अस्तित्व में आने से मूक सिनेमा पूर्ण रूप से बंद हो गया। सन् 1931 ई. में सवाक सिनेमा का दौर शुरू हुआ। दिलचस्प के अनुसार, "सन् 1934 ई. तक में मूक फिल्में बनती रहीं।"[14] लगभग सन् 1940 ई. तक मूक सिनेमा बाजार में चलता रहा। इसके बाद सवाक का पूर्ण रूप से बाजार और दर्शक पर असर रहा। भारतीय मूक सिनेमा काल में सिनेमा कहानियों पर ग़ौर कि जाए तो पाया जाता है कि इस समय बनने वाली अधिकांश फिल्मों का केंद्र भारतीय धार्मिक और पौराणिक कथायें रहीं है। भारतीय सिने अभिनेता/अभिनेत्री के संदर्भ में बात की जाये तो भारतीय सिनेमा के आरंभिक वर्ष सन् 1913 से सवाक फिल्म के आगमन वर्ष सन् 1931 ई. तक 'बाला साहब यादव', 'दुर्गादास बनर्जी', 'राजा सैण्डो', 'नूर मोहम्मद', 'गंगाराम', 'नंदराम', 'मास्टर विठ्ठल', 'खलील अहमद', 'गणपत बाकरे', 'वकिल', 'यकबाल',

[14] दिलचस्प, हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ - 18

आदि अभिनेता तथा 'रूबी मायर्स', 'कमला बाई', 'दुर्गा बाई', 'जुबैदा', 'फातमा बेगम', 'तारा बाई', 'सुल्ताना', 'पेशंस कपूर', 'गौहर', 'जिल्लो बाई', 'पुतली', 'अर्मिलिन', 'सीता देवी', 'गुलाब', 'जमुना' आदि अभिनेत्री फिल्म जगत में प्रसिद्धियाँ प्राप्त कर चुके थे। सवाक फिल्म आने के बाद से अधिकांश फिल्म अभिनेताओं को मुश्किल का सामना करना पड़ा। कारण यह रहा कि कुछ कलाकारों के आवाज दर्शकों को रास नहीं आयी तो सवाक फिल्मों में काम मिलना मुश्किल हो गया और सवाक फिल्मों में अपने-आप को बनाये रखने के लिए उन्हें अब अपने वोकल /आवाज को फिल्म दर्शकों के पसंद के मुताबिक या फिल्म में चलने लायक बनाना पड़ा। इन्हीं सब उतार चढ़ाव से होते हुए भारतीय सिनेमा ने अपना मुक दौर से सन् 1931 ई. में सवाक कि ओर अग्रसर हुआ। इस समय तक भारतीय सिनेमा दुनिया में अपना पाँव पसारने में सफलता पा चुका था। प्रसुन सिन्हा के अनुसार "भारतीय राष्ट्रफिल्म अभिलेखागार के एक आंकड़े के अनुसार सन् 1918 से लेकर सवाक फिल्म के शुरू होने तक कुल छोटी-बड़ी फिल्मों को मिलाकर 1268 मूक फिल्मों का निर्माण भारत में हुआ था।"[15]

3.2. हिंदी सिनेमा का इतिहास: सवाक सिनेमा (सन् 1931 ई. से 2019 तक)

3.2.1. 1931 ई. से 1939 ई. तक

20वीं शताब्दी का चौथा दशक भारतीय सिनेमा जगत के लिए सबसे ज्यादा उल्लेखनीय रहा है इसका कारण यह है कि वर्षों से चली आ रही मूक सिनेमा में

[15] सिन्हा, प्रसून, भारतीय सिनेमा एक अनंत यात्रा, पृष्ठ-34

आवाज/संवाद के सहारे उसे और बेहतर बनाकर इसी काल में एक धमाकेदार एंट्री के साथ भारत में सवाक सिनेमा का जन्म हुआ। 'इंपीरियल फिल्म कंपनी' द्वारा निर्मित और 'आरदेशिर ईरानी' द्वारा निर्देशित भारत की पहली टॉकी फिल्म 'आलम आरा' 14 मार्च 1931 ई. को बॉम्बे के मैजेस्टिक सिनेमा में रिलीज़ किया गया था। यहाँ से भारतीय फिल्म उद्योग में एक क्रांतिकारी बदलाव आया।

बोलती फिल्म के संदर्भ में बात करें तो वार्नर ब्रदर्स की फिल्म 'द जॉज सिंगर' को विश्व कि पहली बोलती फिल्म के रूप में जाना जाता है। जो 6 अक्टूबर 1927 ई. को अमेरिका में प्रदर्शित हुई थी। 14 मार्च 1931 ई. को पहली भारतीय बोलती फिल्म 'आलम आरा' प्रदर्शित पूर्व भारत में दो लघु बोलती फिल्मों का निर्माण हुआ था जिसे सितंबर 1930 ई. में बंबई के 'कृष्णा सिनेमा' में दिखाया गया था। *(चित्र संख्या-4 'आरदेशिर ईरानी' के द्वारा निर्देशित फिल्म 'आलम आरा' का विज्ञापन)* इसके बाद सन् 1931 के फरवरी माह में दो बोलती डॉक्युमेंट्री फिल्म प्रदर्शित की गई थी। जिसे भारत का पहला बोलती डॉक्युमेंट्री फिल्म कहा जा सकता है। इसका श्रेय फिल्म कंपनी कृष्णाटोन और मदानवाल को जाता है। अनिल भार्गव लिखते है, "भारत में पहली बार बोलती फिल्म का निर्माण दो लघु चित्रों के रूप में हुआ था।...... इसके बाद 1931 में दो सवाक वृत्त-चित्र प्रदर्शित किये गयें थें।"[16] भारत कि पहली बोलती फिल्म बनाने का श्रेय आर्दिशिर ईरानी की कंपनी 'इंपीरियल फिल्म कंपनी' को जाता है लेकिन इसके समानांतर भारत के दो और कंपनी बोलती फिल्म बनाने में जुटी थी। एक माणेक लाल पटेल की 'कृष्णा फिल्म कंपनी' और

[16]भार्गव, अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ-50

दूसरा जहाँगीर जमशेद जी की 'मदान कंपनी'। अब्दूलअली यूसूफअली 'जिनका फिल्म 'आलम आरा' के प्रदर्शित करवाने में बड़ा योगदान रहा है' कि मदद से आर्देशिर ईरानी को भारत को पहली बोलती फिल्म बनाने का सम्मान प्राप्त हुआ। अब्दूलअली यूसूफअली ने मुंबई के गिरगाँव स्थित मैजेस्टिक सिनेमाघर में सभी जरूरी सुविधाएँ उपलब्ध करायी। उनके प्रयासों के फलस्वरूप इंपीरियल कंपनी द्वारा निर्मित 'आलम आरा' मुंबई के मैजेस्टिक सिनेमा में 14 मार्च 1931 को सांय तीन बजे प्रदर्शित हुई।[17] आर्देशिर ईरानी का जन्म सन् 1885 ई. में हुआ था। 20 साल की उम्र तक अपनी रोजी-रोटी हेतु आर्देशिर ईरानी इंस्पेक्टर के तौर पर कार्य करते रहें। उसके बाद 1905 ई. से ये फिल्म वितरण का कार्य में लगें। सन् 1922 ई. में फिल्म 'वीर अभिमन्यु' से आर्देशिर ईरानी ने फिल्म बनाने का कार्य शुरू किया। आर्देशिर ईरानी ने अपने जीवन काल अर्थात सन् 1960 ई. तक इंपीरियल फिल्म कंपनी में सौ से अधिक फिल्मों का निर्माण किया। 'रूबी मेयर्स (सुलोचना)' 'जेबुन्निसा', 'मजहर खान' आदि इस कंपनी के साथ कार्य करने वाले स्थाई कलाकार थें।

भारत में सवाक फिल्म (आलम आरा) के शुरूआत से ही भारतीय सिनेमा में संगीत का बोलबाला रहा है। भारत की प्रथम बोलती फिल्म 'आलम आरा' में संवाद के साथ-साथ सात गाने थे। भारतीय सिनेमा के इतिहास में अब तक की सबसे अधिक संगीत प्रयोग होने वाली फिल्म 'इंद्रसभा' है। जिसमें 71 गानें प्रयोग में लाये गये थे। यह फिल्म सन् 1932 ई. में संगीतकार नावर दास के निर्देशन में बनी थी।

[17] वही, पृष्ठ-51

प्रसुन सिन्हा के अनुसार, “आलम आरा 14 मार्च 1931 को मुंबई के मैजेस्टिक थियेटर में रिलीज हुई थी। ‘आलम आरा’ से अर्देशिर ईरानी भारत की पहली सवाक फिल्म के निर्माता बन गए और मास्टर विट्ठल और जुबेदा बने भारत की पहली सवाक फिल्म के नायक और नायिका। ‘आलम आरा’ ने भारत की प्रथम सवाक फिल्म के साथ-साथ गीत नृत्य और संगीत के लिए भी भारत की पहली फिल्म होने का गौरव प्राप्त किया है।”[18] मास्टर विट्ठल और जुबेदा के साथ-साथ भारतीय सिनेमा और रंगमंच के जाने माने कलाकार ‘पृथ्वी राज कपूर’ भी इस फिल्म में बतौर अभिनेता कार्य किये थे। ‘डब्लयू. एम. ख़ान’, ‘जिल्लो बाई’, एलीजर भी इस फिल्म में अभिनय के साथ जुड़े थे।

मूक सिनेमा में आवाज का समावेश होना भारतीय सिनेमा के व्यापार में आँधी आने जैसा था, लेकिन कुछ फिल्मकारों ने सवाक फिल्मों का विरोध भी किया। उनका कहना था कि सवाक फिल्में हमें भाषा के आधार पर अलग करती है। फिल्में सार्वजनिक मनोरंजन के लिए होता है अगर उसमें एक भाषा को शामिल कर दिया जायेगा तो वह सिर्फ एक मात्र भाषा क्षेत्र में बंधकर रह जायेगा। इसके बावज़ूद भी फिल्म ‘आलम आरा’ के प्रदर्शन के कामयाबी के बाद तो मानों फिल्म निर्माताओं में सवाक फिल्म बनाने की होर सी लग गई। कुछ निर्माताओं ने अपने अवाक फिल्मों में साउण्ड जोड़कर फिल्मों का प्रदर्शन करना शुरू किया अर्थात तैयार हो रही मूक सिनेमा को सवाक सिनेमा में बदला। सवाक फिल्म के शुरूआती दौर में सबसे बड़ी समस्या ऑन कैमरा कलाकारों के लिए थी। अब तक जो कलाकार मूक सिनेमा में अपना लोहा मनवाते आये थे यहाँ उनके लिए अब समस्या उत्पन्न

[18] सिन्हा प्रसून, भारतीय सिनेमा एक अनंत यात्र, पृष्ठ-36

होने वाली थी। कारण स्पष्ट था कि मूक सिनेमा में अभिनेताओं कि आवाज कोई मायने नहीं रखती थी। चाहे उनकी आवाज कितनी भी सुरीली, दमदार और भद्दे क्यों ना हो लेकिन सवाक फिल्मों में खुद को बनाये रखने के लिए अभिनेताओं के आवाज का सुरीला और दमदार होना आवश्यक था क्योंकि सवाक फिल्मों में बोले जाने वाले संवाद अभिनेता के द्वारा ही बोले जाते थे और यही कारण रहा कि मूक सिनेमा के अच्छे-अच्छे कलाकार सवाक फिल्म काल में अपने आप को नहीं जमा पायें। जो अभिनेता अपनी संवाद में ठीक-ठाक थें उनके समक्ष भी एक समस्या रही कि जिस अभिनय पद्ति को वो मूक सिनेमा में इस्तमाल करते थे अब उन्हें उसमें बदलाव करना पड़ा तथा शूट के समय माइक्रोफोन का भी बड़ा ख्याल रखना पड़ता था। इस समय रंगमंच अभिनेताओं कि मांग बढ़ने लगी क्योंकि सवाक सिनेमा में एक मात्र आंगिक अभिनय ही नहीं बल्कि वाचिक अभिनय कि भी आवश्यकता महत्वपूर्ण थी और इस हिसाब से रंगमंच कलाकार एक बेहतर विकल्प थे। अच्छे रंगमंच कलाकारों के साथ ही अच्छे संगीत लेखन, गायन और निर्देशन में निपूण कलाकारों को निर्मातायें अपना-अपना प्रस्ताव देने लगें।

इस दशक कि कुछ प्रमुख फिल्म कंपनियाँ जो इस समय अलग-अलग विषयों पर फिल्में बनाने में जुटी थी। सन् 1935 में 'हिमांशु राय' और 'देविका रानी' द्वारा स्थापित फिल्म कंपनी 'बंबई टाक़ीज लिमिटेड' समाज को जाकरूक करने वाली फिल्मों पर ज्यादा धयान दे रही थी। सन् 1930 में स्थापित फिल्म कंपनी 'न्यू थियेटर्स' द्वारा निर्मित फिल्मों में सामाजिक और साहित्यिक कृतियाँ देखने को मिलती है। इसमें संगीत और अभिनय पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था। वी. शांताराम के नाम से मशहूर 'प्रभात फिल्म कंपनी' की नीव सन् 1929 में पड़ी थी। भारतीय फिल्म उद्योग को आगे बढ़ाने में प्रभात कंपनी

और इंपीरियल कंपनी कि खास भूमिका रही है। वी. शांताराम ने प्रभात कंपनी के द्वारा सामाजिक फिल्में बनाने पर ज्यादा जोड़ दिया। प्रसुन सिन्हा लिखते है कि "भारतीय सिनेमा में सामाजिक कथावस्तु पर आधारित फिल्मों के निर्माण को नया आयाम देने के लिए व्ही. शांताराम का नाम सदा अमर रहेगा। मूक फिल्मों से अभिनय से अपना सफर शुरू करके फिल्मों के निर्माण तक के सफर में जो अमिट छाप व्ही. शांताराम ने भारतीय सिनेमा के इतिहास में दर्ज की है वह अभूतपूर्व है। इन्होंने अपनी हर फिल्मों के माध्यम से समाज के रूढ़ीवादी विचारो को कुरेदा है और इसे एक नई दिशा दी है।"[19] सन् 1933 में आयी रंगीन फिल्म 'सैरंध्री' प्रभात फिल्म कंपनी कि ही देन थी। कुछ विद्वान फिल्म 'सैरंध्री' को पहली रंगीन फिल्म मानते हैं लेकिन यह फिल्म जर्मनी में संसाधित और मुद्रित हुई थी। इसलिए इसे भारत की पहली रंगीन फिल्म का दर्जा नहीं मिल पाया। जैसे सन् 1912 में आयी फिल्म 'पुंडलिक' कि गाथा है। 'इम्पिरियल कंपनी' द्वारा सन् 1937 में रिलीज़ हुई फिल्म 'किसन-कन्या' भारत कि पहली रंगीन फिल्म कि श्रेणी में आता है अर्थात यह दशक भारतीय फिल्मों के लिए एक और तरह से खास रही कि अब तक जो फिल्में सिर्फ ब्लैक एंड व्हाइट में निर्मित हो रही थी। अब स्वदेशी रूप से भारत ने भी रंगीन फिल्में बनाना शुरू कर दिया। इस फिल्म को मोती बी गिदवानी द्वारा निर्देशित और अर्देशित ईरानी द्वारा निर्मित किया गया था। यह फिल्म प्रसिद्ध लेखक सआदत हसन मंटो के एक उपन्यास पर आधारित थी। इस फिल्म में 'पद्मादेवी', 'जिलो', 'गुलाम मोहम्मद', 'निसार', 'सैयद अहमद' और 'गनी' ने अभिनय किया था। फिल्म 'सीता' से 'पृथ्वीराज कपूर' और

---

[19]वहीं, पृष्ठ-37

'दूर्गा खोटे' तथा फिल्म 'चंडीदास' से 'के.एल. सहगल' और 'उमा शशि' की जोड़ी मशहूर हुई थी। यह फिल्म क्रमशः 'न्यू थियेटर्स' और 'इस्ट इंडिया फिल्म्स' द्वारा बनाई गई थी। सी. देसाई और एन. पटेल द्वारा मुंबई में सन् 1930 में 'सागर फिल्म कंपनी' की स्थापना की गई। इस कंपनी से जुड़ी मशहूर हस्तियाँ थीं- 'महबूब ख़ान', 'जिया शरहदी' और 'रामचंद्र ठाकुर'। इस कंपनी ने अपने कार्यकाल में लगभग हर तरह कि प्रचलित फिल्में बनाई।[20] मूक सिनेमा काल में बनी कुछ फिल्म कंपनियाँ इस दशक में अपने-आप को नहीं बचा पाई और किसी ना किसी अभाव में कंपनियों के मालिक को अपना कंपनी बंद करनी पड़ी। जैसे 'हिन्दोस्तान फिल्म कंपनी' जिसका श्री गणेश सन् 1917 में हुआ था। इस कंपनी द्वारा निर्मित अंतिम फिल्म 'सेतुबंध' थी। जिसका प्रदर्शन सन् 1932 ई. में हुआ था। इसके अगले वर्ष अर्थात सन् 1933 में इस कंपनी को बंद करना पड़ा। इसी प्रकार सन् 1918 ई. में स्थापित हुई 'कोहिनूर फिल्म कंपनी' जिसके संस्थापक संपत और मणिकलाल पटेल थे, इस कंपनी में भी सन् 1932 में ताला लग गया। 'कृष्णा फिल्म कंपनी' जिसकी शुरूआत सन् 1924 में हुई थी। इस कंपनी को भी सन् 1935 में बंद करना पड़ा। इम्पीरियल और मदान कंपनी भी इस दशक के अंत तक अपने-आप को बचाने में सफल नहीं रही।

सन् 1930 से 1939 तक अपनी अभिनय कला से जाने जाने वालें मूख्य अभिनेताओं में 'पृथ्वीराज कपूर', 'मास्टर निसार', 'सोहराब मोदी',' अशोक कुमार', 'पी.सी. बरूआ', 'मोतीलाल', 'जॉन कावस', कुंदनलाल सहगल', 'पी. जयराज', 'के. सी. डी.' आदि तथा अभिनेत्रियों में 'देविका रानी', 'सुलोचना', 'दुर्गा खोटे', 'नसीम बानो', 'गौहर', 'शोभना समर्थ',

---

[20] तोंडे, नारायण, रामदास, आधुनिक हिंदी साहित्य और फिल्मांकण: स्वरूप एवं समस्यायें, पृष्ठ- 65-66

'उमा शशि', 'वनमाला', 'माधुरी', 'लीला चिटनिस', 'जुवैदा', 'सविता देवी', 'नाडिया', 'मिस बिब्बो' आदि थें। 'मास्टर निसार' और 'जहाँआरा कज्जन' की जोड़ी इस समय काफी लोकप्रिय हुई। इन्होंने एक साथ फिल्म 'शीरीं फरहाद', 'लैला-मजनूं', और 'शाकुंतला' जैसी सफल फिल्मों में अपने अभिनय का लोहा मनवाया तथा इसमें अपने गायकी से भी लोगों के दिल में जगह बनाने में सफलता पायी। अभिनेत्री 'अख़्तरी मुरादाबादी' और 'सैगल कश्मीरी' जिन्हें बाद में 'बेगम अख़्तर' और 'के. एल. सहगल' के नाम से ख्याति प्राप्त हुई। इस समय फिल्म कंपनियों द्वारा अभिनेत्रियों को विशेषण देकर अपने-अपने फिल्मों का प्रचार करने कि प्रथा चली। जैसे इम्पीरीयल कंपनी ने 'सुलोचना' को 'खूबसूरत अभिनेत्री सुलोचना' आदि। अभिनेत्री 'कानन देवी' अपनी कैरियर कि शुरूआत फिल्म 'चार दरवेश' से की। इस फिल्म का निर्माण 'राधा फिल्म कंपनी' के बैनर तले हुआ था। 'व्ही. शांताराम' द्वारा सन् 1934 में बनाई गई फिल्म 'अंमृत मंथन' में अभिनेता 'चंद्रमोहन' ने अपने अभिनय से चार-चांद लगा दिया। इस फिल्म कि एक और खास बात थी कि यह भारत कि पहली वो फिल्म थी जिसमें 'क्लोज़प' और 'ज़ूम' शॉट' का इस्तमाल किया गया था। 'शरतचंद्र बोस' के उपन्यास पर 'पी.सी. बरूआ' द्वारा सन् 1935 में निर्देशित फिल्म 'देवदास' इस समय कि हिट फिल्मों में से एक थी। इस फिल्म में 'के. एल. सहगल' ने अपनी अभिनय से 'देवदास' के चरित्र को पर्दे पर जीवित कर दिया था। इसी प्रकार 'जॉन कावस' और 'नाडिया' ने अपने अभिनय के दम पर फिल्म 'हंटरवाली' को रातों-रात एक सफलता के शिखर पर पहुचां दिया। फिल्म 'जीवन नैया' में 'अशोक कुमार' को पहली बार अपना अभिनय दिखाने का मौका मिला। इसके बाद आई फिल्म 'अछूत कन्या' से 'अशोक कुमार' और 'देविका रानी' की जोड़ी को लोगों का भरपूर प्यार मिला। लोकप्रिय अभिनेत्री

'नरगीस' सन् 1935 में आई फिल्म 'तलाश ए हक़' में पहली बार बाल अभिनेत्री के तौर पर काम किया। इस समय इनका नाम 'बेबी रानी' था। फिल्म 'तलाश ए हक़' का निर्देशन 'बेबी रानी' की माँ 'जद्दनबाई' के द्वारा किया गया था। इस दशक में भारतीय सिने कलाकारों ने भारतीय सिनेमा को दुनिया में अपना एक अलग पहचान दे दिया था। इस समय तक दुनिया भारतीय फिल्म का लोहा मानने लगी थी। अनिल भार्गव बताते है "21 अप्रैल 1938 को भारतीय सिने उद्योग ने अपने 25 साल पूरे किये। इन 25 वर्षों के सफ़र को पूरा करके यह भारत के उद्योग में चौथे नंबर पर पहुंच गया था।... पूरे देश में लगभग 75 निर्माता, 250 वितरक और 1496 सिनेमाघर (500 टुरिंग सिनेमा सहित) थे।"[21]

इस काल के हिट फिल्मों में फिल्म 'आलम आरा', 'शीरीं फरहाद', 'लैला मजनूं', 'अयोध्या का राजा', 'चंडीदास', 'बिल्वा मंगल', 'इंद्रसभा', 'लाल-ए-यमन', 'पूरन भगत', 'यहूदि की लड़की', 'भाग्यचक्र', 'गुनहगार', 'हरिजन', 'अमृत मंथन', 'चंडीदास', 'देवदास', 'हंटरवाली', 'धूप-छाव', 'जीवन नैया', 'अछूत कन्या', 'अमत ज्योति', 'दुनिया न माने', 'विद्यापति', 'जागीरदार', 'स्ट्रीट सिंगर', 'धरतीमाता', 'गोपाल कृष्ण', 'जेलर', 'ब्रह्मचार, 'आदमी', 'दुश्मन', 'कंगन', 'ब्रांडी की बोतल', 'ठोकर', आदि का नाम आता है। इस सवाक फिल्म के दौर में जहाँ सभी निर्देशक, निर्माता भरपूर गानों के साथ फिल्में बनाने में लगें थें वहीं 'वाडिया ब्रदर्स' ने अपने द्वारा बनाया गया फिल्म 'नौजवान' में एक भी गीत का प्रयोग नहीं किया था। यह फिल्म सन् 1937 में बनी थी।

[21] भार्गव अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ-65

3.2.2. 1940 ई. से 1949 ई. तक

इस दशक में भारतीय सिनेमा का ग्राफ नीचे की ओर रहा। इसके निम्न कारण थे। दशक कि शुरूआत के पहले से ही अर्थात सन् 1939 से और मध्य सन् 1945 तक द्वितीय विश्वयुद्ध का होना। फिर भारतीय स्वतंत्रा की लड़ाई और अंत में भारत-पाकिस्तान विभाजन। इन सब ने मिलकर बड़ी तेजी से बढ़ रही भारतीय सिनेमा की ग्राफ में रूकावट का काम किया। इस समय भारतीय सिनेमा अपने मूक दौर से बाहर निकलकर सवाक के दौर में चलना सीख रहा था अर्थात भारतीय टॉकी सिनेमा उदय हो रहा था, विश्व में अपनी पहचान बना रहा था। अब भी भारतीय फिल्म कंपनियां फिल्म तैयार करने के लिए कच्चे माल के आयात के लिए विदेशों पर निर्भर थी। जब द्वितीय विश्वयुद्ध कि शुरूआत हुई तो कुछ समय बाद अन्य चीजों के भाँति ही फिल्मों के कच्चे माल भी महंगे हो गये। सेंसरशिप पहले से ज्यादा सख्त कर दी गई। विदेशों में भारतीय फिल्म प्रदर्शन कि मांग में गिरावट आ गई। महेंद्र मित्तल के अनुसार "सन् 1942 तक आते-आते कच्ची फिल्मों कि उपलब्धि में अत्यधिक कठनाई पड़ने लगी। सरकार ने फिल्मों कि लंबाई 11000 फुट निश्चित कर दी। यह कठिनाई विशेष रूप से 1942 से दिसंबर 1945 तक अत्यधिक विषम रूप से धारण किये रही। किंतु द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यह पाबंदी धीरे-धीरे हटा ली गई।"[22] इस प्रकार से युद्ध वर्षों के दौरान भारतीय फिल्म का उत्पादन बहुत गिर गया। ब्रिटिश सरकार ने सन् 1940 में 'फिल्म एडवाइज़री बोर्ड' की स्थापना कर दी। इसका एकमात्र उद्देश्य था कि विश्वयुद्ध के फेवर में फिल्मों का निर्माण किया जाये। इधर

[22] मित्तल, महेंद्र, भारतीय चलचित्र, पृष्ठ- 39

ब्रिटिश सरकार ने फिल्म कंपनियों को भी आदेश दिया कि युद्ध के फेवर में फिल्मों का निर्माण करे। कुछ फिल्म निर्मातायें तथा कंपनियाँ युद्ध से संबंधित फिल्में बनाने में भी जुट गयी तो कुछ कंपनियाँ इन सब से हटकर फिल्म के माध्यम से अब सामाज के तबके की आवाज बनने लगी, समाज को जागरूक करने लगी। सन् 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध के समाप्त होते ही फिल्मों पर लगे अनेक प्रकार के प्रतिबंध को हटाया गया इसके बाद फिल्म निर्माताओं ने अगले एक ही वर्ष में फिल्मों का ढ़ेर लगा दिया। संख्यात्मक रूप बनी यह फिल्में सिर्फ और सिर्फ पैसा कमाने के मकसद से बनाया गया था क्योंकि इन फिल्म निर्माताओं को इससे पहले फिल्मों से कोई लेना-देना नहीं था। इस समय कि बनी फिल्मों में कहानी, पटकथा आदि का कोई खास महत्व नहीं रह गया था। इस समय के फिल्मों में फुहरपन भी देखने को मिल जाता है। हालांकि यह काल भारतीय फिल्म के लिए साकारात्मक पक्ष भी रहा कि भारतीय सिनेमा में अब संगीत पक्ष पर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा था। सन् 1943 में संगीत को विशेष ध्यान रखते हुए फिल्मों का निर्माण हुआ। यह वर्ष सांगीतिक विशेष रूप से फिल्मों के लिए जाना जाता है। दशक के मध्य सन् 1945 में विश्वयुद्ध समाप्त होते ही एक ओर अब आर्थिक तंगी ने देश को जकड़ लिया तो दूसरी ओर भारत के स्वतंत्रा कि लड़ाई भी ज़ोर-शोर से ऊपर उठने लगी थी। इस लड़ाई का देश के हर पहलुओं पर असर पड़ने लगा था चाहे वो राजनैतिक, सामाजाकि, आर्थिक आदि ही क्यों ना हो। भारत कि स्वतंत्रा लड़ाई में शामिल बड़े-बड़े लोगो को बंदी बना लिया गया। जिसके फलस्वरूप लोगों ने अहिंसा, भ्रष्टाचार, कालाबाजार आदि का रास्ता अपनाने पर मज़बूर होने लगे। इधर फिल्मों के निर्माण में भी पहले से ज्यादा बजट का समावेश होने लगा। अभिनेताओं ने भी अपनी फीस पहले के अपेक्षा लगभग 5 से 7 गुणा बढ़ा दिया।

महेंद्र मित्तल के अनुसार, “उस समय मंहगाई, कालाबाज़ारी, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदि की दूषित मनोवृतियां इतनी तीव्रता से बढ़ी थी कि सामान्य जीवन अशांत हो उठा। ऐसे अशांत समय में विशेष रूप से मध्यवर्गीय समाज ही पीसता रहा। किंतु सामाजिक जीवन के इस विषम स्वरूप का चित्रण निर्माताओं ने नहीं किया।”[23] लेकिन इनती मुश्किलों के बाद भी ‘प्रभात फिल्म कंपनी’, ‘न्यू थियेटरस’, ‘बॉम्बे टॉकि’ आदि जैसी कुछ फिल्म कंपनियां इस दौर में भी भारतीय फिल्म के मान-मर्यादा को बचाये रखने में सफल रही।

इतनी चोट सहने के बाद भी इस दशक ने भारतीय सिनेमा को बहुत कुछ दिया। जैसे भविष्य में अपने कला के माध्यम से दुनिया को लोहा मनवाने वाले कलाकार ‘दिलिप कुमार', ‘देवानंद’, ‘मधुबाला’, ‘नरगीस’, ‘विमल राय’ आदि ने इसी दशक में फिल्मी शुरूआत की। दशक कि लोकप्रिय अभिनय कलाकारों में ‘नरगिस’, ‘दिलीप कुमार’, ‘देवानन्द’, ‘राजकपूर’, ‘नूतन’, ’गीताबाली’, ‘मधुबाला’, ‘मीना कुमारी’, ‘उषा किरण’, ‘निरूपा राय’, ‘मीरा’, ‘नूरजहाँ’, ‘इंदुमती’, ‘पृथ्वीराज कपूर’, ‘शम्मि’, ‘नसीर खान’, आदि का नाम शामिल है। भारतीय सिनेमा के मशहूर चरित्र अभिनेता ‘प्राण’ ने फिल्म ‘यमला जट’ (1940) से फिल्म में प्रवेश कियें। इससे पहले वो एक फोटोग्राफर थे। सन् 1942 में इप्टा (इंडियन पिपुल्स थियेटर एशोशियेसन) का गठन हुआ, जिसका अपने नाटकों के माध्यम से भारतीय स्वतंत्रा में खुब योगदान रहा है। दशक के उतरार्ध में सिनेमा को आगे बढ़ाने में इप्टा का भी विशेष योगदान रहा। इस आर्थिक संकट में रंगमंच कलाकारों ने कम पैसों में फिल्मों में काम करना शुरू किया और लोगों ने उनकी अभिनय कला को सराहा भी। ‘शंभू मित्रा’,

---

[23] वही, पृष्ठ - 40-41

'त्रिपती मित्रा', 'बलराज सहानी' आदि जैसे रंगमंच कलाकार फिल्मों में काम करना आरंभ किया। यहीं से अब थियेटर कलाकारों का रूझान फिल्मों के प्रति बढ़ने लगा। लोग थियेटर को फिल्म में जाने का जरिया समझने लगें। इस दशक में बनी भारतीय सिनेमा का मुख्य केंद्र द्वितीय विश्वयुद्ध, भारतीय स्वतंत्रता, भारत-पाकिस्तान विभाजन और सामाजिक रही है। इनके अलावा भी फिल्म कंपनियाँ एवं निर्माताओं ने नये-नये कलाकारों को लेकर फिल्म निर्माण में जुड़े थें। जिनका विषय सामाज के नई -नई समस्याएं, घटनाएं या फिर प्रेम कथायें रही। सन् 1940 से सन् 1949 में बनी कुछ उल्लेखनीय फिल्में रहीं - 'बांबे टॉकी' द्वारा 'झूला', 'किस्मत', 'ज्वार भाटा' (दिलीप कुमार ने अपनी फिल्मी कैरियर की शुरूआत इसी फिल्म से की), 'प्रभात कंपनी' की 'पड़ोसी', 'न्यू थियेटरस' की 'मिनाक्षी', 'सौगंध', 'हमराही', 'मिनर्वा मूवि टोन' की 'सिकंदर' (इस फिल्म में अभिनेता पृथ्वीराज कपूर ने अपने अभिनय से लोगो को मंत्रमुग्ध कर दिया इस फिल्म ने 'पृथ्वीराज कपूर' को रातों-रात सितारा बना दिया।), फिल्म 'रोटी', 'गरीब', 'रामराज्य', 'शकुंतला', 'औरत', 'रतन', 'विलेज गर्ल', 'धरती के लाल', 'अनमोल घड़ी', 'जुगनू' (फिल्म जुगनू से 'दिलिप कुमार' की एक अलग पहचान बनी), 'नीलकमल' (इस फिल्म में 'राजकपूर' और 'मधुबाला' की जोड़ी ने लोगो के दिलों में घर कर गई। यह इनदोनों के लिए अभिनय क्षेत्र में प्रथम फिल्म थी।), 'चंद्रलेखा' (यह उस समय तक कि सबसे ज्यादा लागत वाली फिल्म रही।), 'जिद्दी' (भारत के सुपर स्टार 'देवानंद' की पहली सुपरहीट फिल्म रही इसमें अभिनेत्री 'सुरैया' ने अपने अभिनय का जलवा बिखेरा था।) , 'अंदाज' (इस फिल्म में अभिनय के लिए 'राज कपूर', 'दिलीप कुमार', एवं 'नरगिस' को चुना गया था।) आदि।

दशक के अंत में देश बंटवारा ने फिल्म और फिल्मी कलाकारों को भी जात, धर्म, क्षेत्र आदि के नाम पर बाँट दिया। अब कलाकारों में हिन्दुस्तान-पाकिस्तान, हिंदु-मुस्लमान आदि की भावना जागृत होने लगी। निर्देशकों ने भी इसे अपने फिल्मों का विषय बनाना शुरू किया। महेंद्र मित्तल अपनी पुस्तक में लिखते है, “विभाजन से पूर्व भारत में लगभग 60 स्टुडियो थे। विभाजन के बाद पाकिस्तान में 4 तथा भारत में 56 स्टुडियो रह गयें। लगभग 2202 सिनेमा घरों में से 230 पाकिस्तान में चले गयें शेष यहीं रह गये। इसके अतिरिक्त प्रदर्शन क्षेत्र सिमित हो गये और कलाकार बिखर गये। कुछ पाकिस्तान चले गये। इस तरह सिनेमा उद्योग बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो गया।”[24]

3.2.3. 1950 ई. से 1959 ई. तक

भारतीय सिनेमा का वो सुनहरा वक्त जिसे हम स्वर्णयुग के नाम से जानते है उसकी शुरूआत इसी दशक में हुई थी। सन् 1947 में आजादी और फिर देश विभाजन के मार से चोट खाई भारतीय जनता अपने एवं अपने परिवार को संभालने में लगी थी। कईयों को अपने रैन-बसेरा से बिछड़ने का दुःख तो कईयों के उनके अपनों का साथ नहीं रह जाने ग़म, कईयों को देश आजादी कि खुशी तो कईयों को देश विभाजन पर गुस्सा आदि भावों को साथ लेकर अपने भविष्य को बेहतर बनाने में जुटी इस भारतीय जनता के लिए एक ओर सिनेमा ने उनका खूब साथ निभाया तो दूसरी ओर नीचे गिरती हुई सिनेमा स्तर को ऊपर उठाने में लोगों ने सिनेमा का। जिन कलाकारों ने चालिस के दशक में फिल्मों की

[24] वही, पृष्ठ - 42

शुरूआत की थी वे इस पचास के दशक में लोगों के समक्ष एक पर एक बेहतरीन फिल्में देकर भारतीय फिल्म के इतिहास के पन्नों में खुद का नाम दर्ज करवाया। इस समय देश के आर्थिक संकट ने देश में भ्रष्टाचार, चोरी, लुट-पाट आदि जैसे मामले को अत्यधिक बढ़ा रखा था, जिसका शिकार चोट खाई जनता हो रही थी। भारतीय सिनेमा ने इन सब हालातों को अपने सिनेमा में उतारने का काम किया तथा उन्हें एक सही सोच, सही राह दिखाने में या कह सकते हैं कि एक मानव को इंसान बनाने में मदद किया। 'दहेज', 'मदर इंडिया', 'शीशमहल', 'दो बिघा जमीन', आदि जैसे फिल्मों ने बखूबी लोगों को अंदर से झकझोर उसे सोचने पर मजबूर कर दिया। फिल्म कंपनियों और निर्देशकों के लिए अब ऐतिहासिक और धार्मिक विषय के अलावा उनके पास फिल्म बनाने के लिए विभाजन, आजादी, जात-धर्म, आम जन कि कहानियाँ, दहेज, नारी, प्रेम प्रसंग, पारिवारिक आदि विषय थी। यहाँ तक कि ब्रिटीश सरकार ने भारतीयों पर किस तरह जूल्म ढ़ाया, उस पर किस तरह अपना अधिकार जमाया सब को फिल्मों में चित्रित किया जाने लगा। इस समय कुछ भारतीय फिल्मकारों ने अपने फिल्मों में अश्लिलता को ज्यादा जगह देने लगें। जिससे भारतीय फिल्म का स्तर निचे गिरने लगा। इस स्तर को ऊपर उठाने और लोगों को सही दिशा में राह दिखाने हेतु सन् 1918 में अंग्रेजो द्वारा बनाया गया सिनेमा एक्ट में परिवर्तन करते हुए भारत सरकार ने सन् 1952 में सेंसेशिप लागू किया। मैग्जिन 'इंडियन टॉकिज़' में प्रकाशित लेख के अनुसार, "भारतीय सिनेमा में व्यापक अश्लिलता को समाप्त करने के लिए दो प्रकार कि प्रमाण-पत्र देने कि योजना क्रियान्वित की गयी। व्यस्कों के लिए 'ए' प्रमाण-पत्र और जिन्हें बच्चे भी देख सके उन्हें 'यू' प्रमाण-पत्र देने कि व्यवस्था की गयी। साथ ही नये संविधान

के स्विकार किये जाने पर फिल्म सेंसर को राज्य सूचि से हटाकर केंद्र का विषय बना दिया गया।"[25]

पचास तथा पचास के पूर्व दशक से ही फिल्मों में कदम रखने वाले निर्देशक 'विमल राय', 'गुरूदत्त', 'राज कपूर', 'वी. शांता राम', 'नितिन बोस', 'महबूब खान', 'सत्यजीत राय', 'चेतन आनंद', 'ऋषिकेष मुखर्जी' आदि जैसे महान फिल्मकारों ने इस दशक को भारतीय फिल्म के इतिहास में एक स्वर्णयुग के रूप में गढ़ा। इन्होंने भारतीय फिल्म के भाग्य को परिवर्तित कर अमर बना दिया। ये सभी निर्देशक तीस और चालीस के दशक से फिल्म उद्योग से जुड़े थे और उनकी आंखों ने एक राष्ट्र परिवर्तन की वास्तविकता को देखी थी। उन्होंने भीषण विभाजन और दर्दनाक अकाल को देखा था। वे एक ऐसी दुनिया के नागरिक थे जो फासीवाद और एक देश के खिलाफ युद्ध लड़ रहा था जो अपने औपनिवेशिक शासकों के खिलाफ लड़ रहा था। इन्होंने अपने फिल्मों में उसे उतारा और लोगों के समक्ष रखा। इनके द्वारा बनाई गई फिल्म भारतीय जनता को मनोरंजन के साथ ही साथ उनके ज़मीर को जगृत करने का भी कार्य करती रही है। बंगाल फिल्म इंडस्ट्री के प्रसिद्ध फिल्मकार 'सत्यजीत राय' ने भारतीय सिनेमा को एक अलग ही रूप दिया। इन्होंने भारत में सामानांतर सिनेमा की शुरूआत सन् 1955 में फिल्म 'पाथेर पांचाली' के प्रदर्शन से किया। इस फिल्म ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय फिल्म को ख्याति दिलवाई। "भारत में कला फिल्म की शुरूआत बंग्ला फिल्म 'पाथेर पांचाली' (1955) से मानी जाती है, जिसके निर्देशक सत्यजित राय थे। इसी तरह हिंदी में समानांतर सिनेमा की शुरूआत 'भुवन सोम' (1969) से मानी

---

[25] Magazine, Indian Talkie (1931-1956), Page - 195

जाती है, जिसका निर्देशन मृणाल सेन ने किया था। बात सत्यजित राय (1921-1992) से शुरू करें तो उनका विश्व सिनेमा में कोई सानी नहीं है। उनकी कालजयी फिल्मों - 'पाथेर पांचाली', 'अपराजितो', 'जलसा घर', 'कंचनजंघा', 'चारूलता', 'अशनि संकेत', 'घरे बाइरे', 'पारस पाथर', 'देवी', 'तीन कन्या', 'प्रतिद्वंदी', 'गणशत्रु', 'आगंतुक' को देखकर आज भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है। राय ने छोटी-बड़ी कुल 37 फिल्मों का निर्देशन किया।[26]

इस दशक को स्वर्णयुग बनाने में इन निर्देशकों के साथ ही 'गुलाम मुहम्मद', 'एस. डी. वर्मण', 'नौशाद', 'शंकर जयकिशन', 'मदन मोहन', आदि जैसे संगीतकार, 'भरत व्यास', 'कैफी आज़मी', 'साहिर लुधियानवी', 'एस. एच. बिहारी', 'हसरत जयपूरी', 'फारूख कैसर' आदि जैसे गीतकार और 'किशोर कुमार', 'मन्ना डे', 'मो. रफी', 'मुकेश कुमार', लता मंगेशकर', 'आशा भोसले', 'समशाद बेगम', 'सुरैया' आदि जैसे गायकों का भी अहम योगदान रहा है। इस काल को भारतीय फिल्म संगीत का स्वर्णकाल भी कहा जाता है। भारत का पहला अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव आई. एफ. एफ. आई. सन् 1952 में मुंबई में आयोजित किया गया था और इसने भारतीय फिल्म उद्योग को एक बहुत ही महत्वपूर्ण मंच दिया।

सन् 1950 से 1959 में बनी भारत की कुछ प्रमुख फिल्मों में 'अवारा', 'अलबेला', 'हम लोग', 'अफसाना, 'बहार', 'आन', 'बैजू बावरा', 'जाल', 'आनंदमठ', 'अनहोनी', 'रत्नदीप', 'परिणीता', 'अनारकली', 'दो बीघा ज़मीन', 'बूट पॉलिश', 'झांसी की रानी', 'आरपार', 'टैक्सी ड्राइवर', 'नागिन', 'नास्तिक', 'नौकरी', 'जागृति', 'श्री 420', 'पाथेर पांचाली', 'मि. एंड मिसेज 55', 'देवदास', 'आजाद', 'इंसानियत', 'उड़न खटोला', 'सीमा', 'गरम कोट', 'जागते रहो',

---

[26] चौबे, कृपाशंकर, समानांतर सिनेमा के सारथी: राय से ऋतुपरण तक,

‘जलदीप’, ‘भाई-भाई’, ‘चोरी-चोरी’, ‘सी आई डी’, ‘बसंत बहार’, ‘तूफन और दिय’, ‘मदर इंडिया’, ‘दो आँखे बारह हाथ’, ‘प्यासा’, ‘नया दौर’, ‘भाभी’, ‘आशा’, तुमसा नहीं देखा’, ‘नौ दो ग्यारह’, साधना’, ‘सोने कि चिड़िया’, ‘यहूदि’, ‘मधुमति’, ‘चलती का नाम गाड़ी’, ‘काग़ज के फूल’, ‘नवरंग’, ‘सुजाता’, ‘अनाड़ी’, ‘धूल का फूल’, ‘उजाला’, ‘हीरा-मोती’, छोटी-बहन’ आदि नाम शामिल है। इनमें से ‘श्री 420’, ‘अवारा’, ‘बूट पॉलिश’, ‘बैजू बावरा’, ‘परिणीता’, ‘पाथेर पांचाली’, ‘मदर इंडिया’, ‘काग़ज के फूल’, ‘जागते रहो’ जैसी फिल्मों ने भारत के अलावा विदेशों में भी अपना धाक जमाया। आज भी फिल्म प्रेमी या छात्र इन फिल्मों को देखने से खुद को नहीं रोक पाते है यहां तक कि फिल्म स्कूल में पढ़ाया भी जाता है।

इस दशक को स्वर्णयुग बनाने में निम्न अभिनेताओं-अभिनेत्रियों का भी खूब योगदान रहा है। इस दशक के फिल्मों में काम करने वालें अभिनेताओं में ‘पृथ्वी राज कपूर’, ‘राज कपूर’, ‘शशि कपूर’, ‘देवानंद’, ‘दुर्गा खोटे’, ‘नरगिस’, ‘लिला चिटनिस’, ‘ललित पवार’, ‘लीला मिश्रा’, ‘नंदा’, ‘गीताबाली’, भगवान दादा’, ‘वैजंतीमाला’, ‘दिलिप कुमार’, ‘नौशाद’, ‘गुरूदत्त’, ‘कल्पना कार्तिक’, ‘मीना कुमारी’, ‘उषा किरण’, ‘अशोक कुमार’, ‘गोपी कृष्ण’, ‘संध्या’, ‘सुचित्रा सेन’, ‘शकीला’, ‘शम्मि कपूर’, ‘नूतन’, ‘किशोर कुमार’, ‘अनुप कुमार’, ‘महमूद’, ‘शुभा’, ‘आशा पारिख’, आदि नाम उल्लेखनिय है। आधुनिक समय में भी फिल्मी छात्र जो अपने कैरियर अभिनय कि दुनिया में बनाना चाहते हैं वो इनके द्वारा किये गये अभिनय को देखकर सिखने का प्रयास करते है तथा उनकी नकल करते है। इनमें पृथ्वी राज कपूर, सोहराब मोदी आदि ये जितना लगाव सिनेमा से रखते थे उतना ही रंगमंच से क्योंकि ये कलाकार सिनेमा में रंगमंच के मंच से उठकर आये थे और ये मानते थे कि इन्हें सिनेमा में एक बुलंदि तक पहुचाने में रंगमंच का बहुत बड़ा हाथ है।

3.2.4. 1960 ई. से 1969 ई. तक

हिंदी सिनेमा का स्वर्णयुग कहा जाने वाला इस दशक में कुछ और महान अभिनेताओं ने भारतीय सिनेमा में कदम रखा। सन् 1964 में प्रदर्शित हुई फिल्म 'कश्मीर की कली' 'शर्मिला टैगोर' ने नायक 'शम्मि कपूर' का साथ बखूबी निभाया था। यहीं से अभिनेत्री 'शर्मिला टैगोर' की फिल्मी सफर शुरू होता है। जो आगे चलकर दर्शकों के दिलों पर राज करती है। सन् 1969 में आई फिल्म 'सात हिंदुस्तानी' से भारत के महानायक कहे जाने वाले 'अमिताभ बच्चन' ने अपनी फिल्मी कैरियर की शुरूआत की। सन् 1966 में 'चेतन आनंद' कि फिल्म 'आखरी खत' में 'राजेश खन्ना' ने पहली बार अभिनय किया था। वे एक थियेटर से जुड़े कलाकार थे। सिनेमा जगत में आने के पूर्व ये रंगमंच में अपने अभिनय कला के बारिकियों को सिखते रहे थे। 'हेमा मालिनी' ने सन् 1968 में आई फिल्म 'सपनों का सौदागर' में पहली बार दिखी। सन् 1960 से 1969 तक भारतीय फिल्म और फिल्म उद्योग को ऊपर उठाने में जिन अभिनेताओं का विशेष हाथ रहा है वो है- 'पृथ्वीराज कपूर', 'राज कपूर', 'देवानंद', 'किशोर कुमार', 'गुरुद्त', 'शम्मि कपुर', 'राजेश खन्ना', 'मीना कुमारी', 'नूतन', 'आशा पारिख', 'अशोक कुमार', 'दिलीप कुमार', 'निरूपा राय', 'वैजंतीमाला', 'संजीव कुमार', 'वहिदा रहमान', 'शायरा बानू', राज कुमार', 'मनोज कुमार', 'तनुजा', शर्मिला टैगोर', 'राजेन्द्र कुमार', 'सुनिल दत्त', 'बलराज सहानी', 'प्रदिप कुमार', 'माला सिन्हा', 'मुमताज', 'हेमा मालिनी', 'प्रेम चोपड़ा', 'प्राण', 'अनवर हुसैन', 'कमल मेहरा', 'धर्मेंद्र', 'शशि कपूर', 'के एन सिंह', 'साधना', 'नंदा', 'पद्मिनी', 'जितेंद्र', 'श्याम कुमार', 'संजय खान', 'मदनपुरी', 'विश्वजीत', 'मनमोहन', 'जॉनी वाकर', 'ओम प्रकाश', 'महमूद', 'किश्टो मुखर्जी', 'शोभा खोटे', 'देवेन वर्मा', 'राजेन्द्र नाथ', 'आगा', 'भारत भूषण', 'पोल्सन', 'सुन्दर', 'मधुमति',

'हेलन', 'पद्मा', 'जयश्री टी', 'ओ. पी. रलहन' आदि। इन अभिनेताओं में से कुछ नायक, कुछ खलनायक, कुछ कॉमेडियन, कुछ डांसर के रूप में बिख्यात जाने जाते रहे है। पचास के दशक के बाद अभिनेतायें अपनी अलग-अलग श्रेणी में बंधते गयें और दर्शकों ने भी उन्हें उसी रूप में स्विकारना शुरू किया। पहले से अपने उच्च श्रेणी पर चले आ रहे कुछ अभिनेताओं के लिए यह आखरी समय रहा। अनिल भार्गव के अनुसार, "इस दशक का अंत आते-आते कई कलाकार रिटायरमेंट की ओर अग्रसर हो चुके थे। राज कपूर और दिलीप कुमार के 'ही डेज़' लद चुके थे। देवानंद भी कगार पर थे। शम्मि कपूर और राजेन्द्र कुमार भी पुराने पड़ते जा रहे थे। अशोक कुमार, भारत भूषण, बलराज साहनी, प्रदीप कुमार, मीना कुमारी, निरूपा रॉय जैसे कलाकार चरित्र भूमिकाएं निभाने लगे थे।"[27]

इस दशाब्दी को स्वर्णयुग बनाने में अभिनेताओं के अलावा निर्देशक, निर्माता, संगीतकार, गीतकार, गायक, पटकथा लेखक, कैरामैन आदि का भी भरपूर योगदान रहा है। साथ ही इस दशक में स्वतंत्रा के बाद भारत में पहली बार फिल्म शिक्षण कि ओर ध्यान दिया गया और इसका परिणाम था कि सन् 1960 में 'फिल्म इंस्ट्यूट ऑफ इंडिया' कि स्थापना हुई। जो भारत सरकार के अंदर थी। फिल्म एंड टेलिविज़न इंस्ट्यूट, पुणे के प्रोस्पेटस के अनुसार "Established as 'Film Institute of India' in 1960 on the erstwhile Prabhat Studio premises at Pune, FTII boasts of a rich legacy of quality education in cinema. The Television Wing, earlier located in New Delhi, was shifted to Pune in the early 70's, bringing together the training

[27] भार्गव अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ-107-108

in film and television under one roof. The Institute was renamed 'Film and Television Institute of India' in 1971. At its inception, the Television wing was concerned mainly with in-service training to personnel from Doordarshan. However, over the years, it has developed into a full-fledged educational department, offering intensive course in Television with core specializations."[28] भारत में 15 सितंबर 1960 में टेलीविजन ने कदम रखा। उस समय इसका एक ही केंद्र था जो दिल्ली में स्थापित किया गया था। डी. डी. नेशनल नामक एक चैनल का प्रसारण किया जाता था। सत्तर के दशक में जब भारत में टेलिविजन ने अपना पाँव पसारना शुरू किया तो धीरे-धीरे अधिकांश मानवों के जीवन का हिस्सा बन गया। शुरूआत में जो टेलिविजन के लिए सिर्फ एक केंद्र बनाया गया था अब उसमें भी बढ़ोत्तरी होने लगी और इससे एक बहुत बड़ा फायदा फिल्म जगत को भी हुआ। अब फिल्मों को टेलिविजन के माध्यम से प्रसारित किया जाने लगा अर्थात अब फिल्में उन आम जन के जीवन का भी हिस्सा बनने लगी जो कभी सिनेमा देखने का सपना देखा करते थें और किसी कारण वश वो सिनेमाघरों तक नहीं पहुंच पाते थे। अगर बात की जाये सिनेमा निर्माण कि जो दर्शकों को भाये तो इस काल के हिंदी फिल्म जगत में 'मृणाल सेन' ने 'भुवन सोम' नामक समानांतर फिल्म बनाकर हिंदी सिनेमा को एक नया रूख दिया। भारतीय फिल्म जगत में सत्यजीत राय ने 1955 में फिल्म 'पाथेर पांचाली' से समानांतर सिनेमा का आगाज कर दिया था, जो बांग्ला भाषा में थी लेकिन 'भूवन शोम' नामक फिल्म

[28] Film and Television Institute of India, Page - 4

से मृणाल सेन ने हिंदी सिने जगत में शुरूआत किया। यह फिल्म सन् 1969 में प्रदर्शित हुई थी अर्थात इस दशक में अब फिल्में दो रूपों में बनने लगी। एक जो वास्तविकता से परे थी काल्पनिक, फैंटसी के रूप में और दूसरी जो वास्तविकता से नज़दीक थी नया सिनेमा के रूप में। इसके लिए दर्शक भी अलग-अलग होते थे कोई फैंटसी फिल्मों से अपना मनोरंजन करता तो कोई समानांतर फिल्मों से। आज भी यह सिलसिला बरकरार है। जो निर्माता, निर्देशक तथा अन्य कलाकार भारतीय फिल्म को कला के रूप में देखते थे उनके लिए भारतीय फिल्म के इतिहास का साक्ष्य होना बहुत मायने रखता था और वो इस पर भी अपना समय, पैसा लगाते थे। इसी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने सन् 1964 में 'राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार' की स्थापना की।

इस दशक के लोकप्रिय निर्देशक जिनके द्वारा बनाये गये फिल्मों ने भारत तो कुछ विदेशों में धूम मचाया। दशक के पहले वर्ष सन् 1960 में आई फिल्म 'मुग़ल ए आज़म' अब तक की सबसे सुरहिट फिल्म रही। 'के. आसिफ' के निर्देशन में बनी इस फिल्म में 'पृथ्वी राज कपूर', 'दिलिप कुमार', 'मधुबाला', 'दुर्गाखोटे', 'जॉनी वारकर', 'जिल्लो' आदि जैसे मंजे अभिनेताओं ने इस फिल्म में किरदार निभाया था। 'जिस देश में गंगा बहती है' फिल्म राज कपूर के निर्देशन में बनाई गयी थी। इस तरह दशक में सुरहिट फिल्म देने वाले निर्देशकों में 'ऋषिकेष मुखर्जी', 'गुरूदत्त', 'एम. सादिक', 'विजय आनंद', 'ऋत्विक घटक', 'मनमोहन देसाई', 'सत्यजित राय', 'एस. यू. सन्नी', 'आर. के. नैयर', 'शांताराम', 'विमल राय', 'मृणाल सेन', 'सुबोध मुखर्जी', 'अमरजीत', 'नासिर हुसैन', 'बी. आर. चोपड़ा', 'अबरार अल्वी', 'फणि मजूमदार', 'महेश कौल', 'ख्वाजा अहमद अब्बास', 'मोनी भट्टयाचार्य', 'बाबू भाई', 'आर. के. राखन', 'विश्राम वेडेकर', 'चेतन आनंद', 'मोहन कुमार', 'विजय भट्ट',

‘ए. भीम सिंह’, ‘राम महेश्वरी’, ‘सूरज प्रकाश’, ‘रामानंद सागर’, ‘वासू भट्टयाचार्य’, ‘अश्रमित सेन’, ‘श्रीधर’, ‘डी. डी. कश्यप’, ‘टी. प्रकाश राव’, ‘राज खोसला’, ‘मनोज कुमार’, ‘एच. एस. रवैल’, ‘राजा नवाथे’, ‘आत्माराम’, ‘गोविंद सरैया’, ‘असित सेन’, देवेंद्र गोयल’ आदि का नाम उल्लेखनीय है।

सन् 1960 से 1969 में बनी प्रमुख फिल्में ‘मुग़ल ए आज़म’, ‘जिस देश में गंगा बहता है’, ‘अनुराधा’, ‘चौदहीं का चांद’, ‘काला बाजार’, बंबई का बाबू’, ‘बरसार की रात’, ‘कोहिनूर’, ‘लव इन शिमला’, ‘गंगा जमूना’, ‘जंगली’, ‘हम दोनो’, ‘जब प्यार किसी से होता है’, ‘ससुराल’, ‘प्यार का सागर’, ‘काबुलीवाला’, ‘शमा’, ‘साहब बीबी और ग़ुलाम’, ‘अनपढ़’, बीस साल बाद’, 'प्रोफेसर’, ‘एक मुसाफिलर एक हसीना’, ' सूरत और सीरत’, ‘किंगकाँग’, ‘शहर और सपना’, ‘मुझे जिने दो’, ‘गुमराह', ‘दिल एक मंदिर’, ‘तेरे घर के सामने’, ‘फिर वही दिल लाया है’, ‘पारसमणि’, ‘ये रास्ते है पयार के’, ‘मेरी सूरत तेरी आँखे’, ‘रूस्तम सोहराब’, ‘संगम', ‘हकिकत’, ‘दूर गगन कि छाव में’, ‘दोस्ती', ‘आई मिलन की बेला’, ‘राजकुमार’, ‘आसमान महल’, ‘छोटी छोटी बातें’, 'शहिद', ‘दि गाइड’, 'हिमालय कि गोद में’, ‘खानदान’, ‘वक्त’, ‘आरजू’, ‘जब-जब फुल खिले’, ‘तीसरी कसम’, ममता’, ‘अम्रपाली', ‘फूल और पत्थर’, ‘तीसरी मंजली’, ‘आखरी ख़त’, ‘बहारें फिर भी आयेंगी’, ‘उपकार’, ‘हमराज’, ‘पत्थर के सनम’, ‘आशिर्वाद’, ‘संघर्ष’, ‘फूलों कि सेज’, ‘आँखें’, ‘कन्यादान’, ‘पड़ोसन’, 'दो कलियाँ’, ‘अराधना’, ‘दो’, रास्ते’, ‘खामोशी’, आदमी और इंसान’, ‘सात हिंदुस्तानी’, ‘भुवन सोम’, ‘कंचनजंगा’, ‘सारा आकाश’, ‘प्रतिद्वंदी’ आदि है।

3.2.5. 1970 ई. से 1979 ई. तक

इस दशक से फिल्मों में एक बहुत बड़ा बदलाव देखने को मिलता है। सत्तर के पहले कि बनी अधिकांश फिल्मों को उनके निर्माता, निर्देशक और कंपनी के नाम से जानी जाती रही है लेकिन अब व्यसायिक फिल्मों को उनके अभिनेता के नाम से जानी जाने लगी। हाँ, नया सिनेमा पर अब भी निर्देशकों का नाम ऊपर रहा लेकिन व्यवसायिक फिल्मों में जो नायक मुख्य भूमिका में होता था दर्शकों के दिलों - जुबान पर उस फिल्म को याद करने के लिए उसके नायक के नाम आता था। जैसे वो फिल्म धर्मेंद्र की है, वो देवानंद की है आदि। ये बदलाव कहीं न कहीं यह दर्शाता है कि किसी फिल्म के लिए अभिनेता किस कदर मायने रखता है। दर्शकों ने भी इस बात को स्विकारना शुरू किया। ऐतिहासिक पौराणिक घटनाओं पर आधारित कहानियों से शुरू हुआ फिल्म इस दशक में वो प्रतिशोध पर आ पहुँचा। जब सन् 1978 में भारत सरकार द्वारा फिल्मों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी गई तब से निर्देशन-निर्माताओं ने मंत्रियों, सरकारी बाबू आदि के कमियों को अपने फिल्मों में उतारने का काम शुरू किया। अब फिल्मों के कहानियों का मुख्य केंद्र या मुख्य नायक कोई गरीब, मज़दूर, बाबू लोगों का सताया हुआ एक असहाय इंसान आदि होने लगा। इसका सबसे बड़ा कारण रहा इस समय देश में भ्रष्टाचार और बड़े लोगों का मनमाना रवैया। जिसे निर्देशकों ने अपने फिल्मों में उतारा। इस तरह के फिल्मों ने ही सन् 1969 से फिल्म दुनिया में कदम रखने वाले अभिनेता 'अमिताभ बच्चन' को एक 'एंग्री यंगमैन' के रूप में दर्शकों के सामने ला खड़ा किया। जॉर्डन हरिश अने एक लेख में लिते है, "In the 1970s, Indian cinema belonged to Amitabh Bachchan. The tall, lanky actor arrived in Mumbai in the late 1960s and by 1973 his star was on the rise with ZANJEER an action adventure film that was a sharp departure from the

romantic, sensitive films that had dominated Indian cinema in the previous decades."[29] सन् 1966 में फिल्म कैरियर शुरू करने वाले 'राजेश खन्ना' को हिंदी फिल्म का पहला सुपर स्टार बना दिया। इसके पीछे अभिनेताओं कि अभिनय के प्रति मेहनत का भी कमाल था। सत्तर के दशक से फिल्म लेखकों ने अभिनेताओं को ध्यान में रखते हुए फिल्म लिखना शुरू किया। एक ओर स्टारडम सिस्टम सामने आ रहा था तो दूसरी ओर समानांतर सिनेमा भी दर्शकों के बीच अपना जगह बना रहा था। इस समय सामानांतर सिनेमा विदेशों में अपना एक अलग दर्शक वर्ग बनाने में जुटा था। समानांतर सिनेमा को आगे बढ़ाने में 'फिल्म वित्त निगम' का बहुत बड़ा हाथ रहा है। यह निगम नये कलाकारों को फिल्म बनाने में आर्थिक मदद करती रही। दशक में आई कुछ महत्वपूर्ण सामानांतर सिनेमा 'अंकूर', 'मंथन', 'भूमिका', 'एक अधूरी कहानी', 'दस्तक', 'दुविधा', 'सारा आकाश', 'अनुभव', 'गर्म हवा', 'उसकी रोटी', 'आविष्कार', 'होली' आदि ने दर्शकों के दिलों पर राज किया। हिस्ट्री ऑफ इंडियन सिनेमा पत्रिका के अनुसार, "In the decade of 1970s, new experiments were conducted by the progressive film makers in India. During this period, India emerged as the top most film producing country. The Government of India also formulated new censorship regulations and placed certain reasonable restrictions on the film makers. A good number of new wave films were produced in the country. The Indian film industry earned international recognition through the creative works of eminent and

---

[29] Harris, Jordan, Scott, From Bombay to Bollywood: 50 Years of Indian Cinema,Page-3

committed film makers like Satyajit Ray, Ritwik Ghatak, Mrunal Sen, Girish Karnad, Puttanna Kanagal, Girish Kasaravally, P.Lankesh, Prema Karanth, B.V.Karanth, Shyam Benagal, Adoor Gopalakrishnan, K.Balachandar, Mahendran, Maniratnam, Dadakondke, Patavardhan, Sumitra Bhavai, Nagabharana, M.S.Satyu and others. In particular, the National Film Development Corporation played a decisive role in promoting parallel cinema in India."[30] दशक में समानांतर फिल्मों के साथ ही बन रही स्टारडम फिल्मों में निर्देशक 'राजकपूर', 'देवानंद', 'रमेश सिप्पी', 'यश चोपड़ा', 'ऋषिकेश मुखर्जी', 'गोबिंद निलहानी', 'सुभास घाई', 'गुलज़ार', 'बासु चटर्जी', 'प्रकाश मेहरा', 'कमल अमरोहि', 'नासीर हुसैन', 'शक्ति सामंत', 'मनमोहन देसाई', 'चंद्र बॉरोट, 'रवि चोपड़ा', 'राजकुमार कोहली',आदि का नाम उल्लेखनीय है। इनके द्वारा बनाये गये फिल्मों ने भी अंतरराष्ट्रीय बाजार में अपना सिक्का जमाने में सफल रहा है। फिल्म संस्था से शिक्षा प्राप्त कर जिन निर्देशकों ने इस दशक में अपना कार्य शुरू किया उनमें से कुछ के नाम अहम है जैसे 'मंजुल सिन्हा', 'प्रकाश झा', 'सईद मिर्जा', 'कुमार वासुदे', 'कुंदन साह', 'अदूर गोपाल कृष्णन', 'जहानु बरूआ', 'गिरीश कासरवल्ली' आदि।

---

[30] Guru, Chandra, B.P.Mahesh, Dr. , Sapna, M.S., Dr., Prabhudev, M., Kumar, M.Dileep, Mr., History of Indian Cinema, International Journal of Business and Administration Research Review, Vol. 2, , Page 183

इस दशक के अभिनेता-अभिनेतत्रियों कि बात कि जाये तो पहले के दशक से फिल्मों में अपना लोहा मनवाते आ रहे 'राज कपूर', 'दिलीप कुमार', 'शम्मि कपूर', 'जॉय मुखर्जी', 'वाहिदा रहमान', 'नूतन', 'राजेंद्र कुमार' 'नंदा', 'वैजंती माला', 'आशा पारिख', 'विश्वजीत' 'देवानंद', 'अशोक कुमार', 'महमूद', आदि ने अपना वर्चस्व कायम रखा। निम्न में से कुछ अभिनेतायें चरित्र भूमिका में अपना योगदान देने लगे तो कुछ ने दशक के उतरार्ध में फिल्मों से अलविदा ले लिया। इनके साथ तथा कुछ समय बाद से फिल्मी कैरियर कि शुरूआत करने वाले 'दिलीप कुमार', 'जितेंद्र', 'राजेश खन्ना', 'अमिताभ बच्चन', 'ऋषि कपूर', 'शशि कपूर', 'फिरोज खान', 'संजीव कुमार', 'मनोज कुमार', 'संजय खान', 'विनोद खन्ना', 'अमोल पालेकर', 'अमरीश पुरी', 'दारा सिंह', 'श्री राम लागू', 'उत्पल दत्त', 'ए. के. हंगल' आदि अभिनेतायें इस दशक से फिल्म तथा दर्शकों के बीच अपना स्थान बनाने में सफल रहें। इसी सब के साथ दशक में अभिनय कला प्रशिक्षण प्राप्त कर नये अभिनेताओं ने फिल्म को आगे बढ़ाने का जिम्मा उठाया। फिल्म संस्थान या रंगमंच संस्थान से अभिनय कला कि बारिकियों का ज्ञान अर्जित कर फिल्मीं दुनिया में प्रवेश करने वाले अभिनेताओं में प्रमुख नाम 'नसीरुद्दीन शाह', 'ओम पुरी', 'शबाना आज़मी', 'डैनी', 'विजय अरोड़ा', 'जया भादुरी', 'राधा सलूजा', 'शत्रुधन सिन्हा', 'रेहाना सुल्ताना', 'असरानी', 'पटेल', 'जरीना बहाव', 'ओम शिवपुरी' आदि है। ये उन कालाकारों कि श्रेणी में आते है जो खुद को कभी किसी एक अभिनय शैली में नहीं बाँधे। इन्होंने किरदार के हिसाब से खुद को ढ़ाला। ये कभी स्टारडम वाली अभिनेता के लिस्ट में नहीं गिने गयें लेकिन इन्होंने खुद एक अलग लिस्ट बनाया। इनका नाम इनके कार्य में झलकता है। इन्होंने अपने अभिनय क्षमता के बदौलत हमेशा अपने दर्शकों के दिलों पर राज करते आये है। दशक में अब चरित्र अभिनेताओं कि

भूमिका के अधिकांश प्रशिक्षित अभिनेताओं को स्विकार किया जाने लगा। यहाँ से अब निर्माता-निर्देशकों को भी लगने लगा कि अभिनय प्रशिक्षण कितना मायने रखता है। 1970 से 1979 के बीच फिल्मीं सफ़र शुरू करने वाले अन्य लोकप्रिय अभिनेताओं में 'मिथुन चकर्वर्ती', 'शशि कपूर', 'हेमा मालिनी', 'रेखा', 'स्मिता पाटिल', 'शर्मिला टैगोर', 'पूनम ढ़िल्लो', 'मौसमी चटर्जी', 'रणधीर कपूर', 'शायरा बानू', 'नितू सिंह', 'रामेश्वरी' आदि नाम शामिल है।

दशाब्दी में बनी फिल्में 'मेरा नाम जोकर', 'दस्तक', 'आनंद', 'द ट्रेन', 'आन मोलो सजना', 'हमजोली', 'पूरब और पश्चिम', 'हीर रांझा', 'दुश्मन', 'हाथी मेरे साथी', 'अंदाज', 'गुड्डी', 'उपहार', अनुभव', 'मधुमालती', 'एक अधीरी कहानी', 'सीता और गीता', 'गोरा और काला', 'शोर', 'पाकींजा', 'कोशिश', 'जंजीर', 'बॉबी', 'अभिमान', 'नमकहराम', 'दाग', 'लोफर', 'गर्म हवा', 'ध्रमा', 'सौगादर', 'दुविधा', 'रोटी कपड़ा और मकान', 'कोरा कागज', 'प्रेम नगर', 'चोर मचाये शोर', 'अंकुर', 'शोले', 'जय संतोषी माँ', 'दीवार', 'आँधी', 'मौसम', 'जूली', 'गीत गाता चल', 'संयासी', 'निशांत', 'लैला मजनू', 'काली चरण', 'दस नंबरी', 'मृग्या', 'मंथन', 'नागिन', 'अमर अकबर एंथनी', 'धर्मवीर', 'परवरिश', 'घरौंदा', 'हम किसी से कम नहीं', 'खट्टा मिठा', शतरंज के खिलाड़ी', 'मुक्कद्दर का सिकंदर', 'गंगा की सौगंध', 'त्रिशूल', 'डॉन', 'मैं तुलसी तेरे आंगन की', 'रंगीला', 'हरे रामा हरे कृष्णा', 'गमन', 'जूनून', 'काला पत्थर', 'मि. नटवरलाल', 'सुहाग', 'आतिश', 'नूरी', 'सरगम', 'मुकाबला', 'जानी दुश्मन', 'गोलमाल' आदि जिसमें से कुछ ने भारतीय फिल्म उद्योग को मुनाफा के शिखर पर ला खड़ा किया तो कुछ ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय फिल्म जगत को श्रेष्ठ बनने का मौका प्रदान किया।

3.2.6. 1980 ई. से 1989 ई. तक

दशक की शुरूआत कला फिल्मों से करना चाहूँगा। इसका मुख्य कारण है कि जिस भारतीय हिंदी कला फिल्मों कि शुरूआत सन् 1969 में 'भूवन शोम' से हुई थी। उस कला फिल्म ने इस दशक में एक तरफ अनेक रंगमंच अभिनेताओं को फिल्म जगत के लिए दरवाजे खोलें तथा उनकी आर्थिक मदद भी की। तो वही दूसरी तरफ कुछ मंजे अभिनेताओं ने कला फिल्मों में काम करना बेहतर समझा। 'नसीरुद्दीन शाह', 'ओमपुरी', 'अमोल पालेकर', 'श्री राम लागू', 'सबाना आजमी', 'गिरीश कर्नाड', 'एम. के. रैना', 'पंकज कपूर', 'नीना गुप्ता', 'फारूख सेख', 'स्मिता पाटिल', 'राकेश पांडये', 'नाना पाटेकर', 'कुलभूषण खरबंदा', 'उत्पल दत्त', आदि इसी श्रेणी में आते हैं। हालांकि यह भी सत्य है कि दशक के उतरार्ध में कला फिल्मों के निर्यात में भारी गिरावट आयी या कह सकते है कि वो अपने अंतिम समय में चल रहा था। 'राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम' ने कला फिल्मों के पक्ष में अनेक कार्य कियें। जो निगम पहले फिल्मों के लिए ऋण मुहैया करवाती थी वो अब खुद फिल्म निर्माण और वितरक का काम संभाल लिया।

इस काल के उतरार्ध आते-आते व्यवसायिक फिल्मों की कहानियों में चली आ रही पौराणिक, ऐतिहासिक, पारिवारीक, रोमांस आदि थीम कि जगह अब प्रतिशोध, आक्रोश, एक्शन, देशप्रेम ने लेना शुरू कर दिया था। 'आक्रोश', 'कुर्बानी', 'शक्ति', 'तेज़ाब', 'लवारिश', 'हमारी जंग', 'हुकुमत', 'डकैत', 'कुर्बानी' आदि नामों से स्पष्ट होता है कि इस काल में फिल्मों कि थीम क्या रही होगी। इन फिल्मों का मकसद फिल्म व्यवसाय से पैसा अर्जित करना था। कह सकते है कि आर्थिक पक्ष को मजबूत बनाना था। इन फिल्मों का दर्शकों

ने भी खूब आनंद उठाया। फिल्म कि कहानियों में खुद को जोड़ने लगे उन्हें ऐसा प्रतित होता कि फिल्म अभिनेताओं कि जगह वो खुद है। और रोचक बातें ये है कि अधिकांश दर्शक अपने को नायक के रूप में ही प्रतीत करता था। इस तरह कि फिल्मों पर पैसा लगाने के अनेक व्यवसायिक लोग फिल्म उद्योग में आयें। हिस्ट्री ऑफ इंडियन सिनेमा पत्रिका के अनुसार, "In the decade of 1980s, the commercial films were produced in large number in order to entertain the masses and generate income. Most of the films glorified sex, romance, violence, dance, music and other ingredients. There was migration of artists and technicians from regional cinema to Hindi cinema. Market forces also controlled the Indian film industry."[31] अनिल भार्गव के पुस्तक 'भारतीय सिनेमा का इतिहास' के अनुसार "फिल्म निर्माताओं कि संख्या में काफी बढ़ोतरी देखने को मिलती है। एक अनुमान के अनुसार उस दौर में फिल्म उद्योग में हर साल 100 नये निर्माताओं ने प्रवेश किया। 1986 में गणना करने पर पाया गया कि सिर्फ मुंबई में ही 2600 पंजीकृत निर्माता थे। मद्रास में इनकी संख्या 5000 थी। इनमें से अधिकांश लोग ऐसे थे जो महज व्यापार के उद्देश से इस क्षेत्र में आये थे, फिल्मों का स्तर उठाने या इनके माध्यम से जन-जागरण करने में इनकी कोई रूचि नहीं थी।"[32] सन् 1982 में विडियो का आना फिल्म उद्योग के लिए एक बहुत बड़ा झटका था। हाँ, यह कहा जा सकता है कि फिल्म दर्शकों कि संख्या में बढ़ोत्तरी हुई लेकिन वो संख्या सिनेमा घरों में ना होकर वीडियो के माध्यम से हुई, फिल्म प्रर्दशन

---

[31] वही, पृष्ठ - 184

[32] भार्गव अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ-145

का वो एक जगह ना होकर लोगों के घर-घर तक हो गई। दशक के अंत में तो अधिकांश लोगों ने इसे अपने जीवन का हिस्सा बना बैठे। इसके अलावा इस दशक से टेलिविजन का भी जबरदस्त असर लोगों के बीच देखने को मिला। अब टेलिविजन पर फिल्म दिखाई जाने लगी। कुल मिलाकर बात कि जाये तो जिन लोगों के पास मनोरंजन के लिए सिर्फ सिनेमा घरों पर निर्भर रहना पड़ता था अब उनके खुद के पास, उनके घरों में मनोरंजन का साधन टेलिविजन और वीडियों मौजूद होने लगा। इसका असर हमारे अभिनेताओं पर भी हुआ। दूरदर्शन ने उत्तम कला फिल्मों का प्रसारण टेलिविजन के माध्यम से शुरू किया था। अब इसमें कार्य करने वाले अभिनेताओं के अभिनय का रस भी आम जन को मिलने लगा। जैसा ऊपर उल्लेख है कि कला फिल्मों में अधिकांशतः रंगमंच अभिनेतायें कार्य किया करते थे। अब इनके अभिनय के माध्यम से लोगों में अभिनय के प्रति आलोचना करने कि शक्ति बढ़ने लगी। वो एक अच्छे-बुरे अभिनय में अब परख को समझने लगे।

इस समयावधि में पहले से फिल्मों में अपने को साबित कर चुके निर्देशकों के साथ 'शेखर कपूर', 'कुंदन शाह', 'मीरा नायर', 'साई प्रानजीप', 'बालू महेन्द्र', 'गोविंद निलहानी', 'गुलजार', 'महेश भट्ट', 'मूज्ज़फर अली', 'मंसूर खान', 'केतन मेहता', 'विधु विनोद चोपड़ा', 'के. बालचंद्र', 'सुभाष घाई', प्रकाश मेहरा', प्रकाश झा', 'यश चोपड़ा', 'रमेश सिप्पी', 'बासु चटर्जी', 'एन. चंद्र', 'सईद अख्तर मिर्ज़ा', 'सुनिल दत्त', 'श्याम बेनेगल', 'फिरोज़ खान', 'हरमेश मलहोत्रा', 'राकेश कुमार', 'राज खोसला', 'भाग्यराज', 'राकेश रौशन', 'मनोज कुमार', 'बी. आर. चोपड़ा', 'टिन्नू आनंद', रवि चोपड़ा' आदि निर्देशकों ने अपनी कला क्षमता के माध्यम से 'आक्रोश', 'क्रांति', 'उमराव जान', 'चिरूथा', 'कर्ज', 'दोस्ताना', 'द बर्निंग ट्रेन', 'इंसाफ का तराज़ू', 'लव स्टोरी', 'प्यासा सावन', 'लावारिश', 'याराना', 'सिलसिला', 'नसीब',

‘कलयुग’, ‘प्रेम रोग’, ‘सनम तेरी कसम’, ‘डिस्को डांसर’, ‘कालिया’, ‘शक्ति’, ‘खुद्दार’, ‘नदिया के पार’, ‘शौक़िन’, ‘बाजार’, ‘आरोहण’, ‘अर्द्ध सत्य’, ‘अर्थ,’ ‘अंधा कानून’, ‘बेताब’, ‘हिम्मत वाला’, ‘अगर तुम ना होते’, ‘जाने भी दो यारो’, ‘मंडी’, ‘तोहफ़ा’, ‘मकसद’, ‘शराबी’, ‘सारांश’, ‘पार’, ‘आज की आवाज’, ‘तरंग’, ‘दामुल’, ‘अनकही’, ‘प्यार जुकता नहीं’, ‘तेरी मेहरबानियां’, ‘मर्द’, ‘मेरी जंग’, ‘तवायफ’, ‘अंकुश’, ‘टार्जन’, ‘अमृत’, 'कर्मा', ‘नागिन’, ‘नाम’, ‘आख़री रास्ता’, ‘जाबाज’, ‘स्वर्ग से सुंदर’, ‘अंजुमन’, ‘हुकुमत’, ‘लोहा’, ‘इंसाफ’, 'खुदगर्ज', ‘मि. इंडिया’, ‘कयामत से कयामत तक’, ‘तेज़ाब’, शहंशाह’, ‘खतरों के खिलाड़ी’, ‘खून भरी मांग’, ‘बीवी हो तो ऐसी’, ‘मैनें प्यार किया’, ‘चांदनी’, ‘त्रिदेव’, ‘राम-लखन’, ‘चालबाज़’ आदि फिल्मों का निर्माण किया। जिसे लोगों ने अपनी सरआँखों पर रखा। भारतीय फिल्म उद्योग के अर्थव्यवस्था को बनाये रखने में सार्थक साबित हुआ। इनमें से कुछ फिल्मों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सराहा एवं सम्मानित भी किया गया। अनिल भार्गव के अनुसार, “इस दशक(1981-1990) में बड़ी संख्या में महिला फिल्मकार सामने आई। विजय मेहता, अपर्णा सेन, कल्पणा लाजमी, मीरा नायर जैसे कई नाम इस दौर में उभरे, जिन्होंने समानांतर सिनेमा को नई ऊंचाई दी।”[33]

उपर्युक्त फिल्मों तथा फिल्म निर्देशकों को ऊपर उठाने में जिन अभिनेता- अभिनेत्रियों का योगदान रहा उनमें ‘अमिताभ बच्चन,’ ‘राजेश खन्ना’, ‘जितेंद्र’, ‘विनोद खन्ना’, ‘कादर खान’, ‘शक्ति कपूर’, ‘अमरीश पुरी’, ‘अनिल कपूर’, ‘अनुपम खेर’, ‘टॉम अल्टर’, ‘परेश रावल’, ‘मिथुन चक्रवर्ती’, ‘जैकी सैराफ, आदि नाम प्रमुख है। मुख्यतः समानांतर फिल्मों

---

[33] वही, पृष्ठ - 143

को अपना श्रम देने वाले अभिनेता में ‘नसीरूद्दीन शाह’, ‘ओम पुरी’, ‘शबाना आज़मी’, ‘नीना गुप्ता’, ‘श्री राम लागू’, ‘स्मिता पाटिल’, ‘अमोल पालेकर’, ‘दिप्ती नवल’, ‘गिरीश कर्नाड’, ‘एम. के. रैना’, ‘पंकज कपूर’, ‘ओम शिवपुरी’, ‘सौरभ शुक्ला’, ‘रत्ना पाठक’, ‘पियूश मिश्रा’, ‘राम गोपाल बजाज’, ‘रघूवीर यादव’, ‘सईद जाफरी’ आदि का नाम शामिल है। इनके अलावा फिल्म जगत के वो सितारें जिन्होंने अपने मेहनत के दम पर नहीं बल्कि अपने पारिवारिक रिश्तों के दम पर फिल्मों में प्रवेश किये। ‘कुणाल कपूर’, ‘राजीव गोस्वामी’, ‘सुनिल आनंद’, ‘आमिर खान’, ‘संजय दत्त’, ‘सलमान ख़ान’, 'संजना’, ‘सनी देओल’, ‘जी. जी.’, ‘शाहनवाज़’, ‘सुहासिनी’, ‘राजीव कपूर’, ‘प्रतिभा’, ‘मोहनीश बहल’, ‘कुणाल गोस्वामी’, ‘प्रदीप खय्याम’ आदि नाम इसी श्रेणी में आते है। हाँ, ये भी सत्य है कि इनमें से ‘आमिर खान’, ‘संजय दत्त’, ‘सलमान खान’ जैसे कुछ अभिनेताओं ने फिल्म में प्रवेश के बाद अपनी मेहनत से खुद को साबित कर दिखाया कि वो इसके काबिल है। इस दशक को अभिनेताओं के दृष्टी से ग़ौर करें तो हम पाते है कि दशक में ज्यादा संख्याओं में रंगमंच अभिनेताओं ने फिल्म में अपना सिक्का जमाया है। यहाँ से एक सिलसिले कि शुरुआत हुई जो आज भी कायम है और वो ये है कि निर्माताओं, निर्देशकों द्वारा रंगमंच अभिनेताओं कि मांग बढ़ी। इस दशक में मूख्य भूमिका के लिए ना सही लेकिन अधिकांश चरित्र भूमिकाओं के लिए इनकी कला को ध्यान में रखा जाने लगा। जो भविष्य में मूख्य भूमिका में बदलने वाला था।

3.2.7. 1990 ई. से 1999 ई. तक

प्रसुन सिन्हा के अनुसार "सन् 1969 से आरम्भ हुए और सन् 1992 तक लगभग समाप्त हो चुके इस नई धारा की समानांतर फिल्मों ने सिनेमा के एक खास दर्शक वर्ग को एक नई और सृजनात्मक सोच अवश्य दी लेकिन सिनेमा की इस नई धारा को प्रतिबद्ध दर्शकों का विशाल समूह कभी नहीं मिल पाया। जिससे अन्ततः यह आन्दोलन एक दूरी तय करकर ठप्प हो गया। व्यवसायिक सिनेमा के एक बड़े वितरक वर्ग को इन फिल्मों के वितरण के प्रति हमेशा उदासीन ही देखा गया।"[34] व्यवसायिक फिल्म निर्माताओं ने अपने फिल्म से अच्छे मुनाफा के लिए फिल्म पर करोड़ो खर्च करने लगें। फिल्मों कि कहानियों में भी आतंकवाद, अंडरवर्ल्ड, गैंगेस्टर जैसी थीम को जगह दिया जाने लगा और संगीत के बढ़ते क्रेज को देखकर फिल्मों में अब धीरे-धीरे आइटम सॉग को जगह दिया जाने जगा जो फिल्म के प्रचार प्रसार और दर्शक वर्ग को इक्ठ्ठा करने में काफी मददगार साबित होने लगा। दर्शकों का एक बड़ा जत्था भी इसीसब के पिछे पागल था। हालांकि दशक में बनी 'दिलवाले दुल्हनियां ले जायेंगे', 'कुछ-कुछ होता है', 'मोहब्बतें', 'हम साथ-साथ है' आदि जैसी पारिवारीक और प्रेम कहानियों वाली फिल्मों ने भी अपना अच्छा-खासा व्यापार किया। इस अवधि के दौरान फिल्मों के रीमेक का एक नया युग शुरू हुआ। अधिकांश फ़िल्में व्यावसायिक फ़िल्में थी जो पैसे कमाने की दृष्टि से बनाई गई थी। पिछले दशक के उतरार्ध से ही समानांतर सिनेमा अपने अंतिम चरण पर चल रहा था। इसके बावज़ूद भी अभिनय में माहिर कलाकार, जो अपनी रंगमंच दुनिया से सिनेमा में स्थान बना रहे थें या बनाना चाहते थे वो अपना ज्यादातर समय सामानांतर सिनेमा को ही देते रहें। सत्तर अस्सी के

---

[34] सिन्हा प्रसून, भारतीय सिनेमा एक अनंत यात्रा, पृष्ठ-138

दशक में फिल्मों में प्रवेश करने वाले ‘ओम पुरी’, ‘गिरीश कर्नाड’, ‘नशीरूद्दीन शाह’, ‘नीना गुप्ता’, ‘श्री राम लागू’, परेश रावल’, ‘शौरभ सुक्ला’ आदि जैसे रंगमंचीय अभिनेता अब समानांतर सिनेमा के साथ ही व्यवसायिक सिनेमा कि ओर अग्रसर हो रहे थे। समानांतर सिनेमा ने कम आयु में ही भारतीय फिल्मों के लिए अनेक द्वार खोल दिये। जिसमें में से एक रंगमंचीय कलाकारों का अधिकांश फिल्मों में जगह मिलना उनके लिए काफी सार्थकता कि बात थी। इतना ही नहीं इसने भारतीय फिल्म को भी एक नया रूप दिया। इस संदर्भ में संजय दुबे लिखते है कि “नवसिनेमा आंदोलन में भले ही अनेक कमियां रही हो और यह समय से पहले ही क्षीण पड़ गया हो फिर भी इसमें संदेह नहीं की भारतीय सिनेमा को बदलने में इसकी ऐतिहासिक भूमिका रही है।”[35]

व्यवसायिक फिल्मों के संदर्भ में 'सरफरोश', ‘तिरंगा’, ‘रोज़ा’, ‘माचिस’, ‘दिल से’, ‘स्वास्तिक’, ‘मोहरा’, ‘दिलजले’, ‘वात्स्व’, ‘नरसिंहा’, ‘सोल्जर’, ‘मैं खिलाड़ी तू अनाड़ी’, ‘जिद्दी’, ‘सत्या’, ‘अग्निपथ’, ’घातक’ आदि जैसे सफल फिल्मों से ज्ञात होता है कि इस दशक में आतंकवाद, अपराधिक जैसी फिल्मों का बोलबाला रहा। साथ ही ‘परदेश’, ‘हम आपके हैं कौन’, ‘दिलवाले दुल्हनिया ले जायेंगे’, ‘आशिकी’,‘जो जीता वही सिकंदे’, ‘अंदाज अपना अपना’, ‘कभी हाँ कभी ना’, ‘कहो ना प्यार है’, ‘साजन’, ‘कुछ कुछ होता है’, ‘सिर्फ तुम’ आदि रोमांटिक प्रेम कथानक फिल्मों ने भी दर्शकों का खूब मनोरंजन किया। इसके अलावा दशक कि ‘हम’, ‘सौदागर’, ‘पैग़ाम’, ‘सड़क’, ‘फूल और काँटें’, ‘दिल है कि मानता नहीं’, ‘सनम बेवफ़ा’, ‘प्रहार’, ‘लम्हें’, ‘बेटा’, ‘हिना’, ‘रूदाली’, ‘ख़ूदा ग़वाह’, ‘बोल राधा बोल’,

---

[35]दुबे, संजय, हिंदी साहित्य और सिनेमा, पृष्ठ-100

‘खिलाड़ी’, ‘खलनायक’, ‘दामिनी’, ‘दिल तो पागल है’, ‘आँखें’, ‘बाजीगर’, ‘1942 ए लव स्टोरी’, ‘गोपी किशन’, ‘दिल’, ‘आशिकी’, ‘स्वर्ग’, ‘राजा बाबू’, ‘दिलवाले’, ‘करन अर्जून’, ‘कुली नं वन’, ‘रंगीला’, ‘बरसात’, ‘राजा हिंदुस्तानी’, ‘बैंडिट क्विन’, 'साजन चले ससुराल’, ‘दिल तो पागल है’, ‘बॉर्डर’, ‘इश्क’, ‘जिद्दी’, ‘गुप्त’, ‘जुदाई’, 'हिरो नं वन’, ‘आस्था’, ‘जुड़वा’, ‘बड़े मिया छोटे मिया’, ‘सोल्जर’, ‘पयार किया तो डरना क्या’, ‘जब प्यार किसी से होता है’, ‘ताल’, ‘हम दिल दे चुके सनम’, ‘कच्चे धागे’, ‘हम आपके दिल में रहते है’, ‘जानवर’, ‘गॉड मदर’ आदि फिल्में हिट फिल्मों कि सूचि में अपना नाम लिखवाने में सफल रहीं।

फिल्मों में मुख्य किरदार के लिए 'ऋषि कपूर’, ‘शाहरूख खान’, ‘माधुरी दीक्षित’, ‘श्रीदेवी’, ‘संजय दत्त’, ‘अजय देवगन’, ‘मनीषा कोइराला’, ‘अक्षय कुमार’, ‘तब्बू’, ‘करीश्मा कपूर’, ‘सलमान खान’, ‘आमिर खान’, ‘गोविंदा’, ‘जैकि श्रॉफ’, ‘ट्विंकल खन्ना’, ‘सुनील सेट्टी’, ‘सैफ अली खान’, ‘महिमा चौधरी’, ‘अक्षय खन्ना’, ‘बॉबी देवल’, ‘काजोल’, ‘रविना टंडन’, ‘सोनाली बेंद्रे’ आदि कलाकारों को मांग रही। चरित्र अभिनेता के रूप में ‘अमरीश पुरी’, ‘प्रेम चोपड़ा’, ‘ओम पुरी’, ‘परेश रावल’, ‘नाना पाटेकर’, ‘नसीरूद्दीन शाह’, ‘प्राण’, ‘कादर खान’, ‘शक्ति कपुर’, ‘कुलभूषण खरबंदा’, ‘डैनी’, ‘अनुपम खेर’ आदि का बोलबाला रहा। ‘अभिषेक बच्चन’, ‘ऐश्वर्या राय’, ‘करीना कपूर’, ‘ऋतिक रौशन’, सुषमिता सेन’, ‘रानी मुखर्जे’, ‘प्रति जींटा’ ने इस दशक से फिल्मी कैरियर कि शुरूआत की। ‘य़शपाल शर्मा’, ‘लिलित दुबे’ जैसे अनेक रंगमंचीय कलाकारों ने भी इस दशक के फिल्मों से अपनी फिल्मी कैरीयर का श्रीगणेश किया।

इधर पिछले दशक से लेकर इस दशक तक प्रवेश करने वाले अभिनेताओं में अधिकांश अपने पारिवारिक संबंध से खुद को फिल्मों में खड़ा कर पाये। और दूसरी तरफ अभिनेता का एक बड़ा समूह 'एन. एस. डी. नई दिल्ली', 'बी. एन. ए. लखनऊ', 'एफ. टी. आई. आई. पुणा' तथा अन्य रंगमंच संस्थाओं के माध्यम से खुद को फिल्म के लिए तैयार कर रहा था। जो अब फिल्मों में उभरकर आने लगा था। रंगमंच अभिनेताओं ने पिछले दशक के अपेक्षा इस दशक में पहले से ज्यादा फिल्म इंडस्ट्री में जगह बनाने में सफलता पाई है। धीरे-धीरे हर चरित्र अभिनय के लिए रंगमंच कलाकारों कि होर लगने लगी। रंगमंच में छात्रों कि संख्या का इज़ाफा होने लगा। अधिकत्तर लोग रंगमंच को फिल्म में जाने का रास्ता बताने लगें।

3.2.8. 2000 ई. से 2009 ई. तक

नया सदी अर्थात 21वीं सदी का पहला दशक के आरंभ से ही बनी फिल्मों से ज्ञात होता है कि इस दशक के फिल्मकारों ने बड़ी गहराई से भारतीय समाज का अध्यन किया है। उन्होंने अपने फिल्मों के माध्यम से भारतीय समाज के उस पहलू और हिस्से को उजागर किया है जहाँ हमारी मानसिकता अमुमन नहीं पहुँच पाती या पहुँचती भी है तो हम उस पर चिंतन नहीं कर पाते। धरवेश कठेरिया के अनुसार, "इक्कसवीं सदी के प्रथम दशक और उसके बाद ऐसी कई महत्वपूर्ण फिल्में बनीं जो हमारी समाजिक ताने-बानें में व्याप्त बुराइयों को उजागर करती है और हमारी व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न खड़ा करती है। यहीं वह सिनेमा है जो हमें झकझोरता है, सोचने पर मजबूर करता है। समाज और देश के प्रति अपने दायित्वों को निभाने के लिए यही सिनेमा एक शक्ति बनकर सामने आता है।

समाजिक ताने-बाने और बुराइयों को उजागर करती अनेक ऐसी फिल्में आयी जिन्होंने समसामयिक दर्शन और सामाजिक व्यवस्था के व्यवहारिक पहलुओं की अमिट छाप छोड़ी। जिसमें - 'लगे रहो मुन्नाभाई', 'गंगाजल', 'अपहरण', 'लज्जा', 'रंग दे बसंती', 'पेज थ्री', 'तारे जमीन पर', 'जेल', 'आरक्षण', 'राजनीति', 'पान सिंह तोमर' आदि।"[36] एक तरफ 'करण जौहर', 'यश चोपड़ा', 'फराह ख़ान', 'संजय लीला भंसाली' आदि जैसे निर्देशक प्रेम से लोतपोत, फैमली ड्रामा, भव्य सेट, सपनों कि दुनिया आदि को 'कल हो ना हो', 'देवसास', 'कभी खुशी कभी ग़म', 'मैं हूँ ना', 'दिल चाहता है', 'कल हो ना हो', 'कभी अलविदा ना कहना' जैसी फिल्मों में उतारकर दर्शकों का मनोरंजन करवाते रहें तो दूसरी तरफ 'हेरा फेरी', 'गोलमाल', 'खोसले का घोसला', चुप चुप के', 'मालामाल विक्ली' जैसे कॉमेडी फिल्में देकर दर्शकों का मन गुदगुदाते रहें। इन सब से परे इसी समय काल में अपने फिल्मों के माध्यम से समाज को आइना दिखाना तथा हिंसा के नये रूप और यथार्थ के आस-पास या उससे जुड़े किस्सों को फिल्मानें का कार्य 'अनुराग कश्यप', 'विशाल भारद्वाज', 'राम गोपाल वर्मा', 'राकेश मेहरा', 'प्रकाश झा' आदि जैसे निर्देशकों ने शुरू किया।

देवेंद्र सिंह के अनुसार, "हिंसा, सेक्स तथा रिश्तों के तनाव हिंदी फिल्मों की मूख्य धारा में कोई नया प्रयोग नहीं है किंतु इन फिल्मकारों के यहाँ इसकी गति अंकन ट्रीटमेंट तथा कोण में नए अर्बन समाज के उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं। नए समाज के चौंकाने की शक्ति का 'शॉक' देने की कला का जो महत्व है वह इन्हें बाकी फिल्मकारों से अलग

---

[36] कठेरिया, धरवेश, सामाजिक परिदृश्य और व्यवहारिक अंतर्मन, पृष्ठ-83

कर देता है।"[37] फिल्म 'शूल', 'हल्ला बोल', 'सरकार', 'गंगाजल', 'डी कंपनी', 'ओमकारा', 'मकबूल', 'वंस अपन ए टाइम इन मुंबई', 'थ्री इडियट', 'तारे जमीन पर' आदि इसी श्रेणी में आते है। ये फिल्में रंगमंच कलाकारों के लिए बड़े फायदे का कार्य किया है। शुरूआत में इन फिल्मों के सिर्फ मुख्य किरदार को छोड़ दे तो पाते है कि बाकि अन्य सभी किरदार के लिए ज्यादा से ज्यादा रंगमंच अभिनेताओं ने अपना लोहा मनवाया है। जैसे सन् 2000 में आई फिल्म 'लगान' में राजेंद्र गुप्ता, रघुविर यादव, कुलभूषण, यशपाल शर्मा, सन् 2007 में आई फिल्म 'तारे ज़मीन पर' में विनोद शर्मा, एम. के रैना, मेघना मलिक आदि। सदि के पहले दशक से ही रंगमंच कलाकारों ने फिल्मों को अपने झोली में डालने लगे। ये वो समय था जहाँ से बड़े पैमाने पर रंगमंच कलाकारों को मुख्य किरदार में रखे जाने का सिलसिला शुरू हुआ। फिल्म 'मालामाल विकली', 'मकबूल', 'भेजा फ्राई', 'खोसले का घोसला', 'अ वेडनेस डे', 'सी कंपनी', 'पिपली लाइव' आदि इसके बेहतर उदाहरण हैं।

दशक के बहु चर्चित चरित्र भूमिका अदा करने वाले अभिनेताओं में 'ओमपुरी, 'नसीरुद्दीन शाह', 'परेश रावल', 'अनुपम खेर', 'मनोज वाजपेयी', 'बोमे इरानी', 'नाना पाटेकर', 'अतुल कुलकर्णी', 'अरशद वारसी', 'उदय चोपड़ा', 'राजपाल यादव', 'फरदीन खान', 'विजय राज', 'पियूश मिश्रा', 'आशुतोष राणा', 'संजय मिश्रा', 'रतना पाठक', 'नीना गुप्ता', 'सतीश कौशिक', 'आशिष विद्यार्थी', अतुल कुलकर्णी', 'विरेंद्र सक्सेना', 'आदिल हुसैन', 'रोहिणी हट्टंगडी' आदि नाम विशेष उल्लेखनिये है। इस दशक में मुख्य भूमिका अदा करने वालों में कुछ नये नाम भी शामिल हुए। जैसे- 'तुषार कपूर', 'अनुष्का शर्मा', 'शाहिद कपूर',

[37] सिंह, देवेंद्रनाथ, डॉ, सिंह, विरेंद्र, डॉ, भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा,पृष्ठ- 306

‘प्रियंका चोपड़ा’, ‘विद्या बालन’, ‘रणवीर कपूर’, ‘विपाशा बसु’, ‘करीना कपूर’, ‘कैटरीना कैफ’, ‘अभिषेक बच्चन’, ‘दिपिका पादिकोण’, ‘ट्विंकल खन्ना’, ‘जॉन अब्राहम’, ‘इमरान हाशमी’, ‘अमृता राव’, ‘सोनम कपूर’, ‘विवेक ऑबराय’, ‘रितेश देशमुख’, ‘मल्लिका शेरावत’, ‘ईशा देवोल’, 'लारा दत्ता’, ‘इरफान खान’, ‘शरमन जोशी’, ‘सोनाक्षी सिन्हा’, ‘कोंकणा सेन’ आदि। इन सब कलाकारों के अलावा पिछले दशक से फिल्म में काम कर रहें ‘आमिर खान’, ‘सनी देवोल’, ‘संजय दत्त’, ‘माधुरी दीक्षित’, ‘ऐश्वर्या राय’, ‘शाहरूख खान’, ‘सलमान खान’, ‘काजोल’, ‘गोविंदा’, ‘अक्षय कुमार’, ‘अमिषा पटेल’, मनीषा कोइराला’, ‘अजय देवगन’, ‘अक्षय खन्ना’, ‘करिश्मा कपूर’, ‘तब्बू’, ‘सुनिल सेट्टी’, ‘सैफ अली खान’, ‘शिल्पा सेट्टी’, ‘महिमा चौधरी’, ‘बॉबी देवोल’, ‘रानी मुखर्जी’, ‘प्रिती जिंटा’ अभिनेताओं का इस दशक पर मुख्य रूप से कब्जा रहा। इस दशक में सत्तर अस्सी दशक के मुख्य अभिनेताओं में ‘अमिताभ बच्चन’ को छोड़कर शेष सभी धीरे-धीरे पर्दे से अलग होते नज़र आते है। अनिल भार्गव अपने पुस्तक में लिखते है कि “इस दशक के अंत तक अमिताभ बच्चन को फिल्मों में आये चालीस से अधिक वर्ष हो गये। उनकी उम्र भी 70 के लगभग हो गई, लेकिन आज भी वे सिने प्रेमियों के सबसे पसंदीदा हीरो हैं। जाहिर है कि यह बीग बी का करिश्मा ही है कि वे हर नए रोल के साथ और लोकप्रिय होकर उभरते हैं। इधर बॉलिवुड के ज्यादातर फिल्मकार अमिताभ बच्चन को पिता के गरिमापूर्ण किरदार में पेश करने के लिए उतावले नजर आयें। अमिताभ ने भी पिता के किरदार को नए-नए रंगों में पेश किया और एकरूपता नहीं आने दी।”[38] अमिताभ के समकालीन जया बच्चन, राखी, जुही चावला, सुष्मिता सेन,

---

[38] भार्गव अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, पृष्ठ-175-176

रेखा, हेमा मालिनी, धर्मेंद्र, शशी कपूर, मिथुन चक्रवर्ती, विनोद खन्ना आदि अभिनेतायें चरित्र किरदार में अपना भूमिका निभाने लगें।

सन् 2000 से 2010 के बीच बनी कुछ महत्वपूर्ण फिल्में 'लगान', 'देवदास', 'गंगाजल', 'मुन्ना भाई एम. बी. बी. एस.', 'कंपनी', 'अ वेडनस डे', 'अब तक छप्पन', 'धमाल', 'गोलमाल', 'थ्री इडियट', ' देव डी', 'भेजा फ्राइ', 'दिल चाहता है', 'स्वदेश', 'खोसले का घोसला', 'जब वीमेट', 'रंग दे बसंती', 'इकबाल', 'भगत सिंह', 'ब्लैक फ्राइडे', 'पीपली लाइव', 'मालामाल विकली', 'चक दे इंडिया', 'एक हसिना थी', 'अपहरण', 'मोहब्बतें', 'विर-ज़ारा', 'चोरी चोरी चुपके चुपके', 'गद्दर: एक प्रम कथा', 'बागबां', 'ओंकारा', 'हेरा फेरी', 'गज़नी', 'लक्ष्य', 'लगे रहों मुन्ना भाई', ओम शांति ओम', 'जब वी मेट', 'आमिर', 'रब ने बना दी जोड़ी', 'कोई... मिल गया', ' भूत', 'इश्किया', 'डॉन', 'पा', 'बिल्लू', 'भुल भूलैया', 'मस्ती', 'सरकार', 'हंगामा', 'फ़ना', 'आँखें' आदि जो इस काल में फिल्म उद्योग को तरक्कि कराने के साथ ही अंतरराषट्रीय बाजार पर भी अपना सिक्का जमाये रखा। बिल्लू, ओंकारा आदि जैसी कई फिल्में नए अभिनेताओं के लिए वरदान साबित हुई।

3.2.9. 2010 ई. से 2019 ई. तक

सदी के दूसरे दशक में फिल्म अभिनय के स्वरूप में अनेक बदलाव आया। हालांकि यह बदलाव सदी के पहले दशक के उतरार्ध में बनी 'अ वेडनस डे', 'पिपली लाइव', 'मकबूल' आदि जैसी फिल्मों से ही देखने को मिलता है लेकिन दूसरे दशक में यह पूर्ण रूप से अपने स्वरूप में आ गया और इसका फायदा सबसे ज्यादा उन अभिनेताओं को हुआ जो रंगमंच के पृष्ठभूमि से जुड़े हुए थें। इसके फलस्वरूप 'नवाजुद्दीन सिद्दकी', 'इरफान खान', 'पंकज

त्रिपाठी', 'मनोज वाजपेयी' जैसे रंगमंच कलाकार दर्शकों कि पहली पंसद बनें। और फिल्मों में इन्हें लीड रोल मिलने लगा। यह वो कलाकार है जो स्टारडम और हीरो की परंपरा को ब्रेक किया। पहले से चली आ रही एक प्रकार के अभिनय को एक नया रूप प्रदान किया। जो सिनेमा हॉल पर्दे पर हीरो की इंट्री होते ही सिटी से गुंज उठता था अब वही गूंज इन कलाकारों के इंट्री पर होने लगी। इन कलाकारों को नज़र में रखकर फिल्म लेखकों का कलम चलना शुरू हुआ। यहाँ तक कि 'गैंग्स वॉफ वासेपुर', 'मांझी', 'मंटों', 'हिंदी मिड्यम', 'लंच बॉक्स', 'मदारी', 'रूख', 'पिंजर', 'मिरजापुर'(सिरीज) आदि जैसी फिल्में खास कर इन्हें मूख्य भुमिका में रख कर लिखी जाने लगी। दर्शकों ने अपनी पहली पसंद के रूप में इन कलाकारों और इनके अभिनय को देखना ज्यादा पसंद किया। इसका एक नकारात्मक बदलाव उन कलाकारों पर भी पड़ा जो पहले से हिरो के श्रेणी में आते थें। जिस हीरो के फिल्म के पिछे दर्शक का पागलों कि भाँति हॉल पर टूटना होता था अब उसी हीरो की फिल्में दर्शकों को रास नहीं आ रही थी और उनकी फिल्में बाक्स ऑफिस पर पिटने लगी। जिसके कारण 'सुनील सेट्टी', 'बॉबी देओल', 'सनी देओल', 'विवेक ऑबराय', 'अभिषेक बच्चन', तुषार कपूर' जैसे अनेकों कलाकार अपने आप को इस समय के साथ ताल में ताल मिलाने में चुक गयें। वहीं 'अजय देवगन', 'अक्षय कुमार', 'आमिर खान', 'शाहरूख खान', 'ऋतिक रौशन', रणवीर कपूर' जैसे कुछ सितारें अपने आप को समय के अनुकूल परिवर्तन कर दर्शकों के पसंदीदा बने रहें। इनके अलावा 'रणवीर सिंह', 'वरूण धवन', 'टाइगर श्रॉफ', 'राजकुमार यादव', 'राहुल बोस', 'सिद्धार्थ मलहोत्रा', 'आलिया भट्ट', 'कंगना रानौर', 'दिपिका पादुकोन', 'करीना कपूर', 'सैफ अली खान', 'परिणीती चोपड़ा', 'राधिका आपटे', 'श्रद्धा कपूर', 'अर्जून कपूर', 'अर्जून रामपाल', 'विद्यूत जामवाल', 'रितेश देशमुख', 'आदित्य राय

कपूर', 'काजल अग्रवाल' आदि कलाकारों ने भी इस दशक पर अपना सिक्का जमा कर रखा। वहीं अगर चरित्र अभिनेता कि बात की जाये तो 'सौरभ शुक्ला', 'पीयूश मिश्रा', 'अनुपम खेर', 'यशपाल शर्मा', 'नसीरूद्दीन शाह', 'परेशरावल', 'बोमन इरानी', 'अनिल कपूर', 'आशुतोष राणा', 'प्रकाश राज', 'मुकेश तिवारी', 'मुरली शर्मा', 'पवन मलहोत्रा', 'प्रदीप सिंह रावत', 'राहुल देव', 'सोनु सूद', 'सरत सक्सेना', 'राहुल देव' आदि कलाकार अपना योगदान देते रहें। अभिनय के इस बदलाव में निर्देशकों का विशेष योगदान रहा है।

अनिल भार्गव के अनुसार, "वर्तमान में अभिषेक कपूर, आदित्य चोपड़ा, आनंद गांधी, अनुभव सिन्हा, अनुराग बसू, अनुराग कश्यप, हंसल मेहता, केतन मेहता, मधुर भंडारकर, मोहित सूरी, नीरज घेवन, निशीकांत कामत प्रकाश झा, राकेश ओमप्रकाश मेहरा, राजकुमार हिरानी, सुभाष कपूर, सुजीत कुमार, तिगमांशु धूलिया, उमंग कुमार, आदि कुछ ऐसे रचनाकार है जो हिंदी सिनेमा को रचनात्मक के नये तेवर और आयाम दे रहे हैं। इन्होंने लीक से हटकर नई थीम और कहानियों पर फिल्म बनाने का साहस किया और सफलता हासिल की। आज खेल और खिलाड़ियों को केंद्र में रखकर बेहतरीन फिल्में बन रही है। सत्य घटनाओं पर अधारित तथा बायोपिक फिल्में बनाई जा रही है। इस प्रकार फिल्मकार जोखिम जरूर उठ रहे हैं, लेकिन दर्शकों कि सकारात्मक प्रतिक्रिया भी देखने को मिल रही है। वो ऐसी फिल्मों को खूब पसंद कर रहे है, जिसमें कुछ नवीनता हो।"[39] इन कलाकारों द्वारा दशक में बनी मूख्य फिल्में 'राजनीति', 'अल्हा के बंदे', 'गैंग्स ऑफ वासेपुर', 'रमन राघव', 'लस्ट स्टोरी', 'मशान', 'बॉबे टॉकिज', 'सुपर 30', 'उड़ता पंजाब', 'हिंदी मिडियम',

---

[39] वहीं, पृष्ठ - 199

‘लाइफ ऑफ पाइ’, 'पान सिंह तोमर’, ‘मंटो’, 'रमन राघव’, ‘ठाकरे', ‘मॉम’, 'सोन चिड़ीया’, 'नाम शबाना’, ‘रूख', ‘सत्याग्रह', ‘स्त्री’, ‘न्यूटन’, ‘सांड़ की आँख' आदि रही, जो दर्शकों के दिलों पर राज़ करने के साथ ही अनेकों पुरस्कार भी प्राप्त किया।

इनके समकालिन चल रहे ‘रोहित सेट्टी’, ‘फराह अख्तर’, ‘संजय लीला भंसाली’, ‘यश चोपड़ा’, 'करन जौहर’, ‘राकेश रौशन’ आदि निर्देशकों ने मनोरंजन के परपस से काल्पनिक, प्यार, मोहब्बत, कॉमेडी आदि थीम पर फिल्मों का निर्माण करते रहें। इन फिल्मों को भी दर्शकों का भारी प्यार मिला। इनके द्वारा बनाई गई फिल्मों में अधिकांश 'अजय देवगन’, ‘अक्षय कुमार', ‘आमिर खान’, ‘सलमान खान’, ‘रणवीर कपूर’, रणवीर सिंह’, ‘टाईगर श्रॉफ’, ‘वरून धवन’, ‘आलिया भट्ट’, ‘आयुशमान खुराना’, ‘श्रद्धा कपूर’, ‘सोनाक्षी सिन्हा’, ‘शाहिद कपूर’, ‘कैटरिना कैफ’, ‘कंगना रनौत’, ‘दिपिका पादुकोन’, ‘प्रियंका चोपड़ा’, ‘सनि लोयोनी’, ‘करीना कपूर’, ‘जैकलिन', ‘काजल अग्रवाल’, ‘सोनम कपूर’, ‘ऋचा चेड्डा’, ‘परिणिती चोपड़ा’, ‘अनिष्का शर्मा’, ‘जेनेलिया’ आदि अभिनेताओं ने मूख्य भूमिका में अपनी कला का प्रदर्शन किया। इस वर्ग में ‘सिंघम’, ‘दबंग’, ‘वेलकम’, ‘गोलमाल’, ‘वार’, ‘इंटरटेंमेंट’, ‘बजरंगी भाईजान’, ‘विक्की डॉन’, ‘द डर्टी पिक्चर’, ‘डॅन टू’, ‘चेन्नई एक्सप्रेस’, ‘आशिकी तू’, ‘रांझना', ‘तन्नू वेडस मन्नू’, ‘स्टूडेंटस ऑफ द ईयर’, ‘बाजी राव मस्तानी', ‘पद्मावत’ ‘मर्दानी’, ‘बैंड बाजा बारात', ' फिल्में बनीं।

निष्कर्ष: उपर्युक्त भारतीय फिल्म इतिहास पर अभिनेता कि दृष्टि से प्रकाश डाला गया तो हम पाते है कि जब से भारतीय सिनेमा ने अपनी फूललेंथ फिल्मों का निर्माण करना शुरू किया है तब से हर सदी में नये अभिनेतायें जुड़ते और उभरते आये है। सदि

के कुछ अभिनेतायें समय के साथ खुद को नहीं भगा पाये जिसके कारण वो पिछे छूटते गयें। कुछ खुद को समय के साथ निखारते गये जिनका असर रहा कि उनमें से अधिकांश अभिनेताओं को अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है तथा उनके बारे में आज हम (फिल्म छात्र/प्रेमी/फिल्मकर्ता आदि) जानना जरूरी समझते है। उनसे कुछ सीखने का प्रयास करते है। अवाक सिनेमा काल से ज्यादा सवाक सिनेमा काल में अभिनेताओं कि मांग बढ़ी। उन्हें निर्माताएँ और कंपनियों ने एग्रीमेंट पर अपना बनाने लगे। साथ ही अवाक समय से सवाक समय में अभिनेताओं कि मेहनत बढ़ गयी। इससे पहले अगर फिल्मों पर ग़ौर किया जाये तो पता चलता है कि फिल्मी बाजार निर्माता, निर्देशक और कंपनी के नाम पर चलती थी लेकिन सवाक फिल्म बाजार ने इसे धीरे-धीरे अभिनेता कि ओर मोड़ दिया। जैसा कि उल्लेख है कि सवाक के दौर में अभिनेताओं के लिए सबसे ज्यादा जरूरी हो गया था उनकी आवाज़। कई बड़े-बड़े मूक अभिनेता अपनी आवाज़ सही नहीं रहने के कारण खुद को सवाक फिल्मों से अलग कर लिए या दर्शकों ने उनकें सवाक फिल्मों को देखना कम कर दिया। प्राकृति का नियम है कि जब एक तरफ अंधेरा होता है तो दूसरी तरफ उजाला। ऐसा हि कुछ इस समय फिल्मी जगत में अभिनेताओं के साथ हुआ। एक तरफ अपनी आवाज़ के कारण मूक सिनेमा दौर के कलाकारों कि मांग घट रही थी तो दूसरी तरफ उसी आवाज़ के कारण अब रंगमंच कलाकारों कि मांग होने लगी। हालांकि मूक सिनेमा दौर से ही रंगमंच कलाकार सिनेमा में जुड़े है लेकिन अब रंगमंच अभिनेतों की मांग बढ़ी। इतना ही नहीं अन्य अभिनेता भी अपनी आवाज़ में सुधार के लिए रंगमंच को समय देने लगें। आगे चलकर सिर्फ आवाज़ ही नहीं अपितु अभिनय, सेट डिज़ाइन, मेकप, कॉस्टयूम आदि जैसे कलाओं के लिए भी रंगमंच ने सिनेमा का साथ दिया है। भारतीय सिनेमा के शुरूआती दौर

से ही जिस रंगमंच कलाकारों ने अपना योगदान देना शुरू किया था वही रंगमंच कलाकारों ने आज भारतीय फिल्म कला को बचाने और सवारने का कार्य कर रही है। उपर्युक्त इतिहास से पता चलता है कि आधुनिक समय में निर्देशकों और निर्माताओं कि पहली पसंद रंगमंच कलाकार है।

भारतीय सिनेमा के वह प्रमुख कलाकार, जिन्होंने रंगमंच से फिल्म तक का सफर किया और दर्शकों के दिल में अपना स्थान बनाने में सफल रहें। उनमें से कुछ के नाम निम्न हैः- पवन मलहोत्रा, निरज साह, राधिका अपटे, निर्मल पाण्डये, राहुल बोस, राज कपूर, रजत कपूर, आलोक नाथ, रजनीकांथ, आमोल पालेकर, रधुविर यादव, राज कुमार राव, बोमन ईरानी, राज ब्बर, राजपाल यादव, राजेंद्र गुप्ता, ऋचा चड्डा, सौरभ शुक्ला, राजेश शर्मा, शम्मी कपूर, सबाना आज़मी, ओम पुरी, रवि झंकाल, शाहरूख खान, रोहिणी हटंगडी, सुप्रिया पाठक, रोयशटन अबेल, उत्पल दत्त, दिपक डोबरियाल, सफी, विनय पाठक, ह्युमा कुरेशी, विरेंद्र सक्सेना, कालकि कोईचलिन, सतिश कौशिक, कंगना रनौत, सीमा आज़मी, ज़ाकिर हुसैन, कुलभूषण खरबंदा, सीमा विश्वास, विनीत कुमार, लिलेट दुबे, शानमुगराजन, विरेंद्र राजदान, मकरंद देश पांड्ये, बी. जयाश्री, रत्ना पाठक, मानव कौल, बी.वी. करनाथ, अंजली पाटिल, मनोज बाजपेयी, बहरूल इस्लाम, अन्नु कपुर, नंदिता दास, दीपा साही, अनुप सोनी, शिवल्लभ व्यास, डॉली अहलुवालिया, हरपाल तिवान, आशिष विद्यार्थी, सुहास जोशी, हेमंत मिश्रा, असरफ़ूल हक़, सुरेका सिकरी, आशुतोष राणा, सवानंद किरकिरे, अतुल कुलकर्णी, आदिल हुसैन, तिगमांशु धुलिया, अमृता सुभाष, तनिष्ठा चटर्जी, अनीत कनवार, निरज काबी, नीना गुप्ता, निमरीत कौर आदि।

<u>अध्याय:4</u> प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का जीवन एवं व्यक्तित्व

अभिनेता, कलाकार या कोई भी व्यक्ति विशेष, किसी विद्या के अस्तित्व व प्रचार-प्रसार का मुख्य अंग होता है। संगीत कला, नाट्य कला, नृत्य कला, काव्य कला, सिनेमा - इन सभी कलाओं का साधक, इन कलाओं को मुख्य रूप देता है। इसलिए उन कलाकारों द्वारा जीवन भर कला के प्रचार-प्रसार हेतु किए गए कार्य का अध्ययन करना अनिवार्य होता है। ताकि उस कला के वास्तविक रूप को समझने के लिए व कालांतर अनुसार होने वाले नये सिद्धांतों, धारणाओं का भी अध्ययन किया जा सके या समझा जा सके।

प्रस्तुत अध्याय में शोध हेतु चयनित प्रमुख अभिनेताओं के जीवन के आरंभिक काल का विवरण दिया गया है, साथ ही यह भी बताया गया है कि एक सामान्य विषय से हटकर वे किस प्रकार रंगमंच की दुनिया में आए।

4.1. पृथ्वीराज कपूर

भारतीय सिनेमा में लगभग 40 वर्ष तक अपना लोहा मनवाने वाले पृथ्वीराज कपूर हिंदी सिनेमा और भारतीय रंगमंच के अग्रणी माने जाते हैं। पृथ्वीराज उन दुर्लभ अभिनेताओं में से एक थे जिनका पहला प्रेम रंगमंच रहा, भले ही वह फिल्म स्क्रीन पर एक लोकप्रिय स्टार बन गए लेकिन उनका दिल हमेशा रंगमंच के लिए धड़कता रहा। 'सिकंदर' और 'मुग़ल-ए-आज़म' जैसी ऐतिहासिक फिल्में देने के बाद भी वो अपनी आखरी साँस तक रंगमंच करते रहे। भारतीय मूक सिनेमा के दौर में इन्होंने बतौर अभिनेता अपना कैरियर शुरू किया था। बुलंद आवाज़ और गहन अभिनय के लिए आज भी पृथ्वीराज कपूर को याद किया जाता है। पृथ्वीराज कपूर ईप्टा के संस्थापकों में से एक थे और इसके अलावा सन् 1944 ई. में इन्होंने अपने खुद के रंगमंच संस्थान

'पृथ्वी थियेटर' की शुरूआत मुंबई में की थी। पृथ्वीराज न केवल एक महान फिल्म व्यक्तित्व थे, वे एक समर्पित सामाजिक कार्यकर्ता भी थे।

पृथ्वीराज का जन्म 3 नवंबर 1906 ई. को ब्रिटीश भारत के लायलपुर नामक जगह पर एक मध्यमवर्गीय जमींदार परिवार में हुआ था। आधुनिक समय में लायलपुर पाकिस्तान में स्थित है। जिसका आधुनिक नाम फ़ैसलाबाद है। इनके पिता 'दीवान बशेश्वरनाथ कपूर' पुलिस विभाग में नियुक्त थे। पृथ्वीराज ने अपना अधिकांश बचपन पश्चिम पंजाब में बिताया, जहाँ उनके दादा रहते थे हालाँकि उनकी पैतृक जड़ें पेशावर में थीं। सत्रह वर्ष की आयु में चौदह वर्षीय रामशरणी मेहर कपूर से इनकी शादी हो गई। पृथ्वीराज कपूर की स्कूली शिक्षा लायलपुर और लाहौर से तथा स्नातक एडवर्ड महाविद्यालय पेशावर से हुई। स्नातक विद्यार्थी के तौर पर इन्होंने एक वर्ष वकालत की पढ़ाई भी की थी लेकिन रंगमंच में विशेष रूची होने के कारण पृथ्वीराज कपूर बंबई (आधुनिक मुंबई) आ गये। इन्होंने अपने करियर की शुरुआत मूक फिल्मों के युग से की। लेखक रेणु शरण द्वारा "Born on November 3 1906 in a Samundri, Lyallpur… Prithviraj received his higher education at the Edwards College, Peshawar… In 1927 Prthviraj left the College, where he was studying for a degree in law, to pursue career as an actor. He came to Mumbai and joined the Imperial Studio Co. where he spent two days as an extra and then as fate would have it was selected to play the lead in a silent film Cinema Girl starring Ermalin, the screen goddess of her time."[1]

[1] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-172-173

मूक सिनेमा 'सिनेमा गर्ल' से फिल्मी कैरियर की शुरूआत करने वाले पृथ्वीराज को सन् 1934 में बनी फिल्म 'सीता' से कामयाबी मिली। इस सफलता ने पृथ्वीराज को एक उच्च श्रेणी के अभिनेता में ला खड़ा किया। सिनेमा के क्षेत्र में उन्होंने 'सिकंदर' और 'मुग़ले-आज़म' जैसी महान फिल्में दीं। पृथ्वीराज का नाम रंगमंच में भी बड़े आदर से लिया जाता है। वो अपने कॉलेज के दिनों से ही रंगमंच से जुड़े थे। हिंदी रंगमंच से उन्हें इतना लगाव था कि सिनेमा में नाम-शोहरत कमाने के बाद भी वो रंगमंच किया करते थे। इसके लिए उन्होंने 'पृथ्वी थियेटर' की स्थापना की। जिसके अंतर्गत पठान, आहुति, गद्दार आदि जैसे लोकप्रिय नाटक का मंचन किया।

पुरस्कार: पृथ्वीराज कपूर अपने जीवन में अनेक पुरस्कार के हकदार रहे। जैसे: सन् 1954 ई. में संगीत नाटक अकादमी फेलोशिप, सन् 1969 ई. में पद्मभूषण, सन् 1971 ई. में दादा साहब फाल्के अवार्ड। पृथ्वीराज कपूर अपने जीवन काल में आठ साल तक मनोनीत राज्यसभा सदस्य भी रह चुके हैं।

मृत्यु: 29 मई 1972 को पृथ्वीराज कपूर के जीवन का आख़िरी दिन रहा अर्थात भारतीय सिनेमा और रंगमंच जगत का एक उम्दा कलाकार पृथ्वीराज कपूर का निधन हो गया। सिनेमा और रंग जगत हमेशा उनका ऋणी रहेगा।

4.2. श्रीराम लागू

अभिनेता के रूप में अपनी पहचान बनाने वाले 'श्री राम लागू' न सिर्फ फिल्मों के लिए बल्कि रंगमंच के बेताज बादशाह रह चुके हैं। या यू कहें कि फिल्मों के साथ-साथ रंगमंच में भी इन्होंने अपना बखूबी योगदान दिया। 'श्री राम लागू', नाम ज़हन में आते ही दिमाग में फिल्म से पहले रंगमंच की झलक आती है। इसका मुख्य कारण है नाटक 'नटसम्राट' में इनके द्वारा अभिनित चरित्र 'गणपतराव बेलवल्कर'। जिससे लागू के जीवन को एक अलग पहचान और नाम मिला।

'श्रीराम लागू' पेशे से नाक, कान, आँख के डॉक्टर थे और यही कारण है कि रंगमंच की दुनिया में लोग इन्हें प्यार से 'डॉक्टर' के नाम से भी जानते हैं। भारत की स्वतंत्रता के बाद के दौर में महाराष्ट्र में रंगमंच आंदोलन के विकास में 'विजय तेंदुलकर', 'विजय मेहता' और 'अरविंद देशपांडे' आदि के साथ महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में लागू का भी विशेष योगदान रहा है। रंगमंच की दुनिया में अपने हुनर के दम पर निर्देशन से लोगों का ध्यान आकर्षित करने वाले 'श्री राम लागू' को विशेष रूप से अभिनेता के रूप में जाना जाता है। चाहे वो सिनेमा हो या रंगमंच दोनो की दुनिया में 'श्रीराम लागू' अपने अभिनय का लोहा मनवा चुके हैं। जब्बार पटेल क अनुसार "Lagoo was a rare actor. He was highly intelligent and had logic to apply to the character. I can say he was a modern method actor... He was my guru and I was directing him, but he never gave me the feeling that he was a senior and I was a newcomer."[2] फिल्मों में 'श्रीराम लागू' को चरित्र भूमिका के लिए विशेष रूप से जाना जाता है। बीसवीं सदी के उतरार्ध में मराठी रंगमंच के सबसे महान अभिनेताओं में से एक, 'श्रीराम लागू' को माना जाता है।

'श्रीराम लागू' का जन्म 16 नवंबर 1927 ई. को सतारा (महाराष्ट्र) में हुआ था। उनके पिता बालकृष्ण लागू भी एक डॉक्टर थे। उनकी माता का नाम सत्यभामा था। 'श्री राम लागू', डॉ बालकृष्ण और सत्यभामा लागू के चारों बच्चों में से सबसे बड़े पुत्र थे। उन्होंने अपनी माध्यमिक की शिक्षा भावे हाई स्कूल से पूरी की। उसके बाद उन्होंने

---

[2] https://indianexpress.com/article/entertainment/bollywood/shriram-lagoo-dead-1927-2019-rare-actor-highly-intelligent-had-logic-to-apply-to-character-6172542/ December 30, 2020 08:08 IST

फर्ग्यूसन कॉलेज (पुणे विश्वविद्यालय) में उच्च माध्यमिक के लिए प्रवेश लिया। उच्च माध्यमिक के बाद 'लागू' ने मेडिकल की पढ़ाई हेतु 'बी. जे. मेडिकल कॉलेज' पुणे में दाख़िला लिया। फिल्म फेयर वेबसाइट पर प्रकाशित लेख के अन "He was the eldest of four children. He was said to be a studious child and studied medicine at B.J. Medical College (University of Pune), receiving both MBBS & MS degrees."[3] पुणे के 'बी. जे. मेडिकल कॉलेज' से मेडिकल की पढ़ाई शुरू करने वाले श्रीराम लागू ने इसी कोर्स के दौरान रंगमंच करना आरंभ किया और क्रमागत यह सिलसिला उनके विदेश जाने के पहले तक चलता रहा। यहीं से उनके दिल में रंगमंच के प्रति लगाव बढ़ता गया। उन्होंने पाँच वर्ष तक अपने मेडिकल कॉलेज में पढ़ाई के दौरान लगभग पाँच संपूर्ण नाटक और 15 एकल नाट्य की प्रस्तुति में भाग लिया। रंगमंच में लागू का जुड़ाव विशेष रूप से अभिनय में था लेकिन उसके अलावा भी वे निर्देशन पर भी ध्यान दिया करते थे। मंच के लिए इतने जुनून के बाद भी श्रीराम लागू ने अपने मेडिकल की पढ़ाई को जारी रखने का फैसला किया लेकिन दिल में उस शांति और संतुष्टि की कमी थी जो उन्हें रंगमंच से मिलती थी। मुंबई में ई. एन. टी. का प्रशिक्षण लेने के बाद वो आगे के मेडिकल अभ्यास के लिए कनाडा चले गये। रेणु सरण के अनुसार "He started acting in plays while attending Medical College. Once bitten by the theatre bug, he continued his dramatic activity through the group 'Progressive Dramatic Association' which he started with like-minded senior friends. Meanwhile, he got training as an ENT surgeon

3 https://www.filmfare.com/news/bollywood/veteran-actor-dr-shriram-lagoo-passes-away-38091.html Dec 30, 2019, 09:29 IST

in Mumbai in the early fifties and practised in Pune for six years before going to Canada and England for additional training."[4] एक समय ऐसा भी आया जब दिल में रंगमंच को बसाये तथा लोगों के समक्ष एक चिकित्सक के रूप में कार्य करने वाले श्रीराम लागू ने अंततः पूर्ण रूप से रंगमंच के होने का फैसला किया और रंगमंच की दुनिया में उतर आये। सन् 1972 से उन्होंने रंगमंच के साथ-साथ सिनेमा में भी काम करना आरंभ किया और सिनेमा जगत में भी पिंजर, घरौंदा, खुद्दार जैसी महान फिल्में दीं। श्रीराम लागू अपने जीवन के अंतिम समय तक रंगमंच और सिनेमा से जुड़े रहे।

पुरस्कार: उनकी कला के कार्य हेतु उन्हें समय-समय पर अनेकों पुरस्कार/सम्मान से सम्मानित किया जा चुका है। जैसे : सन् 1978 में फिल्म फेयर की तरफ से बेस्ट सहायक अभिनेता का पुरस्कार, सन् 1997 में कालिदास सम्मान, सन् 2007 में पुण्यभूषण पुरस्कार, सन् 2010 में संगीत नाटक अकादमी फैलोशिप, पदम् श्री अवार्ड। सन् 2020 में महाराष्ट्र सरकार ने उनके सम्मान में एक 'नटसम्राट श्री राम लागू' अवार्ड की घोषणा की है। यह सम्मान उन कलाकारों को दिया जायेगा जो मराठी रंगमंच के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान निभायेंगे।

मृत्यु: 17 दिसंबर 2019 को सिनेमा और रंगमंच जगत के एक उम्दा कलाकार, श्रीराम लागू का निधन हो गया।

4.3. ओम शिवपुरी

अपने अभिनय और निर्देशन के दम पर लोगों के दिलों पर राज करने वाले ओम शिव पुरी भारतीय फिल्म अभिनेता, रंगमंच अभिनेता, रंगमंच निर्देशक, नाटककार के

[4] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-238

रूप में जाने जाते हैं। उनका जन्म 14 जुलाई सन् 1936 ई. में हुआ। पराबुक बेवसाइट पर प्रकाशित लेख के अनुसार “Omji was born on July 14, 1936, to a Brahmin family of princely origin, in Kashmir. They later shifted to Jodh–pur, where his father was adopted by the royal family.”[5] ‘ओम शिवपुरी’ आठ भाई-बहन थे, जिनमें वे पाँचवें थे। बचपन से वे बहुत ही शरारती थे। ओम जी की प्रारंभिक शिक्षा जोधपुर से हुई। स्नातक की पढ़ाई के बाद ओम जी का पूरा परिवार जयपुर में आ बसा। उनकी बड़ी बहन ‘महारानी कॉलेज’ जयपुर में प्रोफेसर थी। इस कारण उनकी बड़ी बहन पहले से ही जयपुर में रहा करती थी। जब ओम जी के पिता के स्वास्थ में गड़बड़ी आई उसके बाद परिवार की ज़िम्मेदारी उनकी बड़ी बहन के उपर आ गयी। इस कारण उन्होंने अपने पूरे परिवार को अपने साथ रहने के लिए जयपुर में बुला लिया।

ओम जी ने अपना स्नातक कोर्स जोधपुर में ही पूरा कर लिया था। जयपुर में उन्होंने एल. एल. बी. की पढ़ाई के लिए नामांकन करवाया लेकिन दुर्भाग्य वश एक वर्ष पूरा होने के बाद अथवा इनका कोर्स समाप्त होने के पहले ही उनहे कॉलेज से बाहर कर दिया गया। “He had also done his first year LLB, but he could not complete it because he was a ring leader in college, always up to some mischief. His attendance was short and he was chucked out.”[6] एल. एल. बी. कॉलेज से निकाले जाने के बाद उन्होंने जयपुर के एक विद्यालय में अंशकालिक

[5] https://prabook.com/web/om.shivpuri/726764 27 Sep. 2020, 13:21 IST

[6] https://cineplot.com/om-shivpuri-memories/ 09 Sep. 2020, 08:27 IST

नौकरी भी की। सन् 1968 में ओम शिवपुरी की शादी, रंगमंच कलाकार सुधा शिवपुरी से हुई।

ओम शिवपुरी बचपन से रंगमंच से जुड़े रहे तथा नाट्य प्रस्तुति में भाग लिया करते थे। रंगमंच के प्रति इनका विशेष झुकाव था और यही कारण रहा कि उन्होंने रंगमंच के लिए 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में भी पढ़ाई की। नाटक 'इडिपस', 'आषाढ़ का एक दिन', 'अंधायुग', 'किंगलियर' में काम कर उन्होंने अपने कुशल अभिनय का परिचय दिया। ओम शिवपुरी ने रंगमंच से आगे बढ़कर सिनेमा में भी काम किया। फिल्म 'कोशिश' से उन्हें राष्ट्रीय पहचान मिली। ओम शिवपुरी का हिंदी रंगमंच में विशेष योगदान रहा है।

पुरस्कार: ओम शिवपुरी की याद में संगीत नाटक अकादमी, राजस्थान हर साल पाँच दिवसीय नाट्य महोत्सव 'ओम शिवपुरी मेमोरियल ड्रामा फेस्टिवल' आयोजित करती आ रही है।

मृत्यु: ओम शिवपुरी का निधन 15 अक्टूबर 1990 को हुआ।

4.4. गिरीश कर्नाड

19 मई 1938 ई. को महाराष्ट्र के माथेरन में जन्में 'गिरीश कर्नाड' न सिर्फ सिनेमा के लिए प्रख्यात हैं बल्कि रंगमंच की दुनिया में उनकी महानता और निखर जाती है। इनका पूरा नाम गिरीश रघुनाथ कर्नाड है। रेणु सरण के अनुसार "Girish Raghunath Karanad was born on 19 May 1938 born in Matheran, Maharashtra in a Konkani speaking family."[7] गिरीश कर्नाड ने अपने जीवन काल में स्वयं को निर्देशक, अभिनेता, लेखक, कवि, अनुवादक, आलोचक के रूप में

[7] Saran, Renu, Author, History of Indian Cinema, Page-147

लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया और उसमें अपने बेहतर कार्य के दम पर लोगों के दिलों में जगह बनाने में सफल रहें। इस सफलता ने उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति दिलवाने में सहायता प्रदान की। 'कोंकणी' गिरीश कर्नाड की मातृभाषा थी। इसके बावजूद भी इनकी पढ़ाई की शुरुआत मराठी भाषा में हुई।

उनकी माता कृष्णाबाई उनके जन्म से पहले एक विधवा की जिंदगी जी रही थी। वो अस्पताल में बतौर नर्स अभ्यास किया करती थीं जहाँ पर वे डॉ. रघुनाथ कर्नाड (गिरीश कर्नाड के पिताजी) से मिली और कुछ समय बाद दोनों ने शादी कर ली। गिरीश कर्नाड उनके चार बच्चों में से तीसरे बच्चे थे। इनके पिता पुणे के सरकारी दफ़्तर में कार्यरत थे जो सन् 1942 के आस-पास कर्नाटक के सिरसी में आ गये थे। जब गिरीश कर्नाड 14 वर्ष के थे तब उनके पिता कर्नाटक के धारवाड़ में आ बसे। इस तरह उनकी स्नातक तक की पढ़ाई शहर धारवाड़ (कर्नाटक) से हुई। 'कर्नाटक आर्ट्स कॉलेज' में सन् 1954 ई. से सन् 1958 ई. तक स्नातक की डिग्री समाप्त करने के दौरान ही आगे की पढ़ाई हेतु इन्होंने विदेश जाने का मन बना लिया था लेकिन आर्थिक स्थिती इनकी राह में बाधा बन रही थी। 'कर्नाटक आर्टस् कॉलेज' में इन्होंने गणित विषय से अपने स्नातक की पढ़ाई समाप्त की। यहाँ पर डिग्री के साथ-साथ उनका मन लेखन कार्य में भी लगा रहता था। जिसमें कविता, शॉर्ट कहानी, लेख लिखा करते थे। अमर उजाला के एक साक्षात्कार में अपने लेखक होने के बारे में बताते हुए कर्नाड जी ने कहा था "कर्नाटक कॉलेज में एक चलन था। सब कविताएं, छोटी कहानियां, लोक-कथाएं लिखते थे। मैं भी धीरे-धीरे इस ओर बढ़ने लगा और तब मुझे सबसे ज्यादा जिसने प्रभावित किया, वह थे कीर्तिनाथ कुर्तकोटी। मुझे मनोहर ग्रंथमाला में एंट्री मिली और इसी ने ही मुझे एक

लेखक बनाया।"[8] कर्नाटक के य़क्षगान ने भी कर्नाड जी पर गहरा असर किया था। बाल्य अवस्था से ही वे यक्षगान के दर्शक हुआ करते थे और कहीं न कहीं यहीं से इनके दिल में रंगमंच के हर पहलू जैसे अभिनेता, निर्देशक के प्रति एक लगाव हो गया था। बाल्य अवस्था से ही कर्नाड जी को कला के प्रति विशेष लगाव रहा।

स्नात्तक के बाद इन्होंने विदेश में शिक्षा प्राप्त करने के सपने को साकार करने के लिए रोड्स स्कॉलरशिप के सहारे खुद का नामांकन ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में करवाया। यहाँ पर इन्होंने सन् 1960-1963 ई. में दर्शनशास्त्र, राजनीति शास्त्र और अर्थशास्त्र में अपनी स्नातकोत्तर की पढ़ाई पूरी की। पढ़ाई के साथ-साथ ये अपने लेखन कार्य में भी बखूबी ध्यान दिया करते थे। इसी परिश्रम का फल रहा कि कर्नाड का पहला नाटक 'ययाति' सन् 1961 ई. में लोगों के समक्ष प्रस्तुत हुआ। ऑक्सफोर्ड से पढ़ाई समाप्त करने के साथ ही इन्हें बतौर गेस्ट फैकल्टी की नौकरी मिल गई। जीवन यापन के लिए नौकरी में कार्यरत रहने के बावजूद भी उनका दिल लेखन में लगा रहा। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से अपनी स्नातकोत्तर की पढ़ाई समाप्त करने के कुछ समय बाद कर्नाड वापस भारत आ लौटे और अपने दिली ख्वाहिश को पूरा करने में जुट गये। सचिदानन्द के अनुसार "With a brilliant academic record at Karnataka and Bombay Universities. Karnad proceeded to Oxford on a Rhodes scholarship and did his M.A. in Philosophy, Politics and Economics. Returning to India, he joined the Oxford University Press and worked with them for seven years, first as Assistant Manager and then as

---

[8] https://www.amarujala.com/kavya/mud-mud-ke-dekhta-hu/famous-writer-girish-karnad-untold-stories 02 Nov 2020, 22:06 IST

Manager at their Madras Office. He took active part in amateur theatricals with Madras Players, which soon acquired a professional finesse."[9] चेन्नई के ऑक्सफोर्ड प्रेस से सन् 1970 में इस्तीफा देकर स्थानीय शौकिया नाटक में कार्य करने लगें। यह वो समय था जहाँ कर्नाड पूर्ण रूप से कला के लिए जीने लगे थे। प्रदर्शनकारी कला के हर क्षेत्र में नाम कमाने वाले 'गिरीश कर्नाड' को साहित्य के क्षेत्र में विशेष रूप से जाना जाता है। देश-विदेश सभी तरह की संस्कृति और भिन्न भाषा से परिचय होने के बाद भी अपने लेखन के लिए न तो अंतरराष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी और न ही अपनी मातृ भाषा कोंकणी को चुना। उन्होंने अपने लेखन के लिए कन्नड़ भाषा का चयन किया।

इन्होंने ययाति, तुग़लक, हयवदन, नागमंडल जैसी नाटक की रचना कर रंग क्षेत्र को एक अलग दिशा प्रदान की। नाटक लेखन के अलावा इन्होंने अभिनय और निर्देशन में भी अपना योगदान दिया। रंगमंच के अलावा इन्होंने सिनेमा जगत में भी कार्य किया। कन्नड़ फिल्म 'वंशवृक्ष' बनाकर दुनिया के सामने अपने बहुआयामी हुनर का परिचय दिया। इनके द्वारा रचित नाटक ययाति, तुग़लक, हयवदन, नागमंडल आदि ने हिंदी रंगमंच को एक उच्च मुकाम तक लाने में अहम भूमिका निभाई।

लेखन, रंगमंच, सिनेमा के अलावा वे एक सशक्त और दमदार सामाजिक कार्यकर्ता भी रहे हैं। उन्होंने स्वयं को 'अर्बन नक्सल' भी मान लिया था। आजतक की ए रिपोर्ट के अनुसार "गिरीश कर्नाड की लेखनी में जितना दम था, उन्होंने उतने ही बेबाक अंदाज में अपनी आवाज को बुलंदी दी। तमाम राजनीतिक और सामाजिक आंदोलनों में उनकी सक्रिय भूमिका रही। धर्म की राजनीति और भीड़ की हिंसा पर भी

[9] Satchidanandan, K., Author, Author Speek, Page-57

कर्नाड ने तमाम प्रतिरोधों में हिस्सा लिया। कर्नाड ने सीनियर जर्नलिस्ट गौरी लंकेश के मर्डर पर बेबाक अंदाज में आवाज उठाई। गौरी लंकेश के मर्डर के एक साल बाद हुई डेथ एनिवर्सरी में वो Me Too Urban Naxal प्ले कार्ड गले में पहनकर सभा में पहुंचे थे।"[10]

पुरस्कार: इनका पूरा जीवन उपलब्धियों और विभिन्न सम्मानों से भरा रहा। इनकी कला के सम्मान में समय-समय पर इन्हें अनेक पुरस्कारों से नवाज़ा गया। 1970 में इन्हें मैसूर के राज्यपाल स्वर्ण पदक, होमी भाभा फेलोशिप से सम्मानित किया गया। वहीं सन् 1972 में कन्नड़ फिल्म 'वंशवृक्ष' के लिए राष्ट्रपति का स्वर्ण पदक मिला। इसके अलावा 'स्वामी' फिल्म के लिए सर्वश्रेष्ठ अभिनेता का पुरस्कार हासिल हुआ। सन् 1972 ई. में 'संगीत नाटक अकादमी', सन् 1974 ई. में 'पद्मश्री', सन् 1992 ई. में 'पद्म भूषण' और 'कन्नड़ साहित्य परिषद', सन् 1994 ई. में 'साहित्य अकादमी', सन् 1998 ई. में 'जननपीठ' और कालिदास सम्मान। इसके अलावा राज्य स्तरीय और राष्ट्र स्तरीय अनेकों पुरस्कार के हकदार रहें कर्नाड को डॉक्टरेट और पोस्ट डॉक्टरेट की उपाधि से भी नवाज़ा गया। "D.litt., karnatak university-1994, Honorary doctorate, university of southern california, los angeles-2011."[11]

मृत्यु: 10 जून 2019 को गिरीश कर्नाड के जीवन का आख़री दिन रहा।

---

[10] https://www.aajtak.in/entertainment/story/girish-karnad-indian-actor-film-director-kannada-writer-playwright-full-profile-tmov-661611-2019-06-10 10 जून 2019, 2:06 PM IST

[11] Durai, D.J.Naganatha, GIRISH KARNAD HIS GRAND WORKS, Vol.1, Issue -33,. Page - 204

4.5. राम गोपाल बजाज

रंगमंच, सिनेमा, टेलिविज़न तथा रेडियो के क्षेत्र में एक मुकाम हासिल कर चुके तथा भारतीय रंगमंच में बहुमूल्य योगदान देने वाले प्रख्यात व्यक्ति प्रोफेसर राम गोपाल बजाज को रंगमंच के क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है। इनके द्वारा रंगमंच के क्षेत्र में दिये गये योगदान को जितना सराहा जाये शायद वो कम होगा। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली द्वारा वार्षिक आयोजित किया जाने वाला 'भारत रंग महोत्सव (भारंगम)', 'जश्न-ए-बचपन' का श्री गणेश प्रोफेसर राम गोपाल बजाज के माध्यम से हुआ। इसके अलावा भी उन्होंने 'बाल-संगम', 'एकल नाट्य समारोह', 'रंग-प्रसंग पत्रिका', 'थियेटर इंडिया', 'श्रुति कार्यक्रम' आदि का श्री गणेश किया। दिनांक 08 अगस्त 2020 को फेसबुक पेज 'विजय के. सैनी व्लॉग' पर 'प्रोफेसर राम गोपाल बजाज' और 'विजय के. सैनी' के बीच हुई लाइव चर्चा में से एक प्रश्न तथा उसके उत्तर से राम गोपाल द्वारा रंगमंच के प्रचार के लिये किये गये कार्य को समझा जा सकता है।

"प्रश्न: 'भारत रंग महोत्सव (भारंगम)', 'जश्न-ए-बचपन', 'बाल-संगम', 'एकल नाट्य समारोह' शुरू करने का विचार कहाँ से आया?

उत्तर: मैं एक चीज़ हमेशा नोटिस करता था कि कोई भी बाहरी शो देश में करवाने के लिए या अपना शो बाहर करने के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता था। इस तरह की और भी अन्य चीजें थी जिसे लेकर हम गुरू 'इब्राहिम अलकाज़ी' को सवाल पूछा करते थे। ऐसा हमारे यहाँ क्यों नहीं होता है? इस पर अलकाज़ी जी कहते थे- तुम करो। तो कहीं न कहीं इस आइडिया की शुरूआत उसी समय से रही। जिसका श्रेय गुरू 'इब्राहिम अलकाज़ी' जी को जाता है। सन् 1997 में देश की आज़ादी के 50 वर्ष पूरे होने वाले थे और इस मौके पर हम कलाकारों द्वारा कुछ महत्पूर्ण किया जाना चाहिए।

ऐसी सोच को लेकर भारंगम के लिए सरकार के पास प्रस्ताव दिया। जो एच. आर. डी. मिनिस्टर 'मुरली मनोहर जोशी' के समय पास हुआ।"[12]

प्रो. राम गोपाल बजाज का नाम उन कलाकारों कि सूची में आता है जिन्हें हम बहुमुखी कलाकार के रूप में जानते है। राम गोपाल बजाज ने जिस लगन से प्रदर्शन के क्षेत्र में अपना योगदान दिया है उसी लगन से वे शैक्षिक क्षेत्र में भी अपना योगदान देते आये हैं। रंगमंच से लगाव के बारे में बताते हुए राम गोपाल बजाज कहते हैं कि - "बचपन से अपने आस-पास के पंछी-जानवरों की नकल किया करता था। स्कूल में बसंत पंचमी बड़ी धूम-धाम से मनाई जाती थी। बसंत पंचमी के मौके पर हमारे स्कूल में एक छोटा सा कार्यक्रम आयोजित होता था जिसमें कुछ बच्चे गाने में, कुछ नकल करने में भाग लिया करते थे। मैं भी उसमें शामिल रहता था। 'गाँव में दशहरे के समय लगभग पाँच-सात दिनों का उत्सव होता था। जिसमें विजयदशमी के दिन नाट्य प्रस्तुति होती थी, उसे मैं देखने जाया करता था और जहाँ तक पाठ की बात करें तो मैं बचपन से ही अपने घर के परिवार विशेष कर दादी को हनुमान चालिसा, रूक़नी मंगल का पाठ सुनाया करता था। तो कहीं न कहीं बचपन से ही मुझे जो वातावरण मिला उसने मुझे नाटक के प्रति प्रेरित किया।"[13]

राम गोपाल बजाज का जन्म 5 मार्च 1940 ई. में गाँव-निर्मली, जिला-दरभंगा, राज्य-बिहार में हुआ। इनका बचपन साधारण तौर-तरीके से बीता तथा इन्होंने अपनी पढ़ाई की शुरूआत अपने क्षेत्रीय विद्यालय से की। इस तरह से गुजरते हुए समय के

---

[12] https://www.facebook.com/vijayksainivlog/videos/292756391998087 08 Aug 2020 | 08:32 PM

[13] https://www.facebook.com/vijayksainivlog/videos/292756391998087 08 Aug 2020 | 08:32 PM

साथ उन्होंने अपनी आगे की शिक्षा, स्नातक हेतु पटना विश्वविद्यालय में दाख़िला लिया। सन् 1960 में पटना विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त कर अपनी शिक्षा को जारी रखते हुए इन्होंने स्नातकोत्तर के लिए पटना विश्वविद्यालय में दाख़िला लिया। जहाँ इन्होंने विषय हिंदी साहित्य रखा था। "अपनी स्नातकोत्तर डिग्री करने के समय एक बार ऑल इंडिया रेडियो भ्रमण करने गये तो वहाँ के एक ऑफिसर ने इनसे बात-चीत की और इनकी आवाज़ सुनकर वो इन्हें रेडियो अनाउंसर बनने का प्रस्ताव रखा। राम गोपाल बजाज ने प्रस्ताव को स्वीकार किया। उससे अर्जित धन को अपने स्नातकोत्तर में खर्च किया।"[14] पटना में पढ़ाई के साथ ही उन्होंने रंगमंच गतिविधियों में भाग लेना शुरू कर दिया था। पटना रंगमंच संस्थाओं में काम करने के दौरान उन्हें राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के बारे में पता चला। रंगमंच के प्रति जो उनके अंदर लगाव था वो उन्हें नाट्य विद्यालय की ओर खींचने लगा और स्नातकोत्तर के अंतिम वर्ष में इन्होंने 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में नामांकन हेतु आवेदन किया। प्रथम दौर में ही प्रोफेसर राम गोपाल बजाज 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में नामांकन करवाने में सफल रहे। इन्होंने अभिनय कला को अपने विशेष विषय के रूप में रखा था। संगीत नाटक अकादमी की वेबसाइट पर प्रकाशित एक लेख के अनुसार "...Shri Ram Gopal Bajaj took his Bachelor's degree from Bihar University in 1960. While he was in the final year of his M.A. in Hindi literature, he joined the National School of Drama, Delhi, specializing in acting (1962-65)."[15] नाट्य विद्यालय में अभिनय को विशेष विषय बानाने के बाद

[14] https://www.facebook.com/vijayksainivlog/videos/292756391998087 08 Aug 2020

[15] https://sangeetnatak.gov.in/sna/citation_popup.php?id=1158&at=1 12 Dec. 2020

भी राम गोपाल बजाज ने निर्देशन कला में भी विशेष ध्यान दिया। सिनेमा और टेलिविज़न जगत में भी राम गोपाल ने अपने तन-मन से काम किया। गोधुली, उत्सव, जॉली एल.एल.बी.-2 आदि जैसे हिट फिल्मों में इन्होंने अपना किरदार बखुबी निभाया। राम गोपाल बजाज का नाम सिनेमा से ज्यादा हिंदी रंगमंच के लिए जाना जाता है। भारंगम जैसे नाट्य उत्सव का आवाहन कर हिंदी रंगमंच को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने का श्रेय राम गोपाल बजाज को जाता है। प्रदर्शनकारी कला क्षेत्र विशेष रूप से हिंदी रंगमंच के क्षेत्र में राम गोपाल बजाज का विशेष योगदान है। जिन्होंने हिंदी रंगमंच को एक अलग दिशा प्रदान की। हिंदी रंगमंच हमेशा रामगोपाल बजाज का ऋणी रहेगा।

पुरस्कार: रंगमंच में उनकी सेवाओं को देखते हुए भारत सरकार तथा अन्य संस्थाओं द्वारा उन्हें अनेक पुरस्कार जैसे सन् 1990 में 'साहित्य कला परिषद सम्मान', सन् 1996 में 'संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार', सन् 2000 में उन्हें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार, सन् 2003 में 'पद्म श्री पुरस्कार', सन् 2015 में 'बिहार कला पुरस्कार', सन् 2017-2018 में 'राष्ट्रीय कालिदास सम्मान', सन् 2017 में 'हिंदी अकादमी नाटक सम्मान' से सम्मानित किया गया है। संगीत नाटक अकादमी ने प्रो. राम गोपाल बजाज को भारतीय नाटक में उनके योगदान हेतु उन्हें फेलोशिप भी प्रदान किया है।

4.6. परेश रावल

परेश रावल का जन्म 30 मई सन् 1950 ई. को मुंबई के एक गुजराती परिवार में हुआ। उनका परिवार एक मध्यवर्गीय श्रेणी में आता था। परेश रावल का बचपन मुंबई में बीता। बचपन से वे शरारती थे। लोगों की नकल करना, मिमिकरी करना, कविता पढ़ना में उनकी रूचि ज्यादा थी। उनकी स्कूली तथा कॉलेज की शिक्षा मुंबई से ही हुई। रेणु सरण के अनुसार "...Paresh Rawal is an alumnus from narsee

monjee college of commerce and economics, Vile Parle, Mumbai."[16] बाल्य अवस्था से वे रंगमंच के प्रति आकर्षित थे। मुंबई में उनके घर के पास के पार्क में ओपेन थियेटर था जहाँ पर वे रंगमंच देखने जाया करते थे। वहीं से उनके अंदर रंगमंच के प्रति एक गहरा लगाव बना और लगभग अठारह वर्ष की उम्र में उन्होंने निश्चय किया कि उन्हें रंगमंच में अपना कैरियर बनाना है। हालांकि वे अपने स्कूली समय से रंगमंच किया करते थे। लगभग दस वर्षों तक लगातार रंगमंच करने के बाद परेश रावल ने फिल्मों की तरफ रुख किया। राज्यसभा टी. वी. के एक कार्यक्रम गुफ़्तगू में परेश रावल बताते हैं - "रंगमंच के दौरान उनकी मुलाकात केतन मेहता से होती है क्योंकि केतन मेहता, परेश रावल के शो देखने आया करते थे तथा उनके शो के आलोचक भी हुआ करते थे। सिर्फ इतना ही नहीं, केतन मेहता उन कमियों को दूर करने के तरीके भी बताते थे। इस तरह से एक समय वो भी आया कि परेश रावल और केतन मेहता दोनों ने मिलकर एक नाटक करने का फैसला किया और दोनों ने साथ मिलकर नाटक को पूरा किया। इस नाटक के रिहर्सल के समय को परेश रावल अपने जीवन का टर्निंग प्वाइंट बताते हैं। जहाँ से उन्हें अभिनय, निर्देशन, रंगमंच की बारिकियों को जानने का मौका मिला।"[17]

इसके बाद उन्होंने 'कृष्ण बनाम कन्हैया', 'खेलैया', और 'डियर फ़ादर' आदि लोकप्रिय नाटकों में काम किया। नाटक की दुनिया के अलावा वो सिनेमा जगत में भी एक उच्च श्रेणी के कलाकार हैं। सरदार, हेरा फेरी, ओ.एम.जी. आदि फिल्मों में उनके अभिनय की

---

[16] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-162

[17] https://youtu.be/xUXk-q3ZTys Guftagoo with Paresh Rawal, Rajya Sabha TV, Jan 7, 2018

खूब सराहना हुई। परेश रावल जितना सिनेमा अभिनेता के रूप में जाने जाते है उससे ज्यादा उन्हें रंगमंच के लिए जाना जाता है।

रंगमंच और सिनेमा जगत से परे हटकर परेश रावल भारतीय राजनीति का हिस्सा भी रह चुके हैं। दिल से देसी बेवसाइट पर प्रकाशित परेश रावल की एक बायोग्राफी के अनुसार "परेश रावल ने लोकसभा चुनाव 2014 में बीजेपी ज्वाइन कर ली थी। अहमदाबाद (पूर्व) निर्वाचन क्षेत्र से भारतीय जनता पार्टी के सांसद के रूप में जीते। जिसके बाद उन्हें 2019 में भी चुनाव लड़ने का न्यौता मिला लेकिन उन्होंने लोकसभा 2019 का चुनाव लड़ने से मना कर दिया। जिसकी वजह उन्होंने राजनीति को पर्याप्त समय नहीं देना बताया। परेश रावल ने भले ही चुनाव लड़ने से मना कर दिया हो, लेकिन वह खुद को भारतीय जनता पार्टी का समर्थक बताते हैं।"[18]

पुरस्कार: कला उद्योग में उनके योगदान को देखते हुए भारत सरकार द्वारा सन् 2014 में पद्मश्री सम्मान से नवाजा गया। फिल्म सरप्राइज: द अनटोल्ड स्टोरी, राजा, चाची 420, हेरा-फेरी, ये तेरा घर ये मेरा घर, आवारा पागल दीवाना, फनटूस, हलचल, फिर हेरा फेरी के लिए फिल्म फेयर, आईफा, स्टार स्क्रीन, ज़ी सिने, प्रोड्यूसर्स गिल्ड फिल्म पुरस्कार से सम्मानित किया गया। "परेश रावल को 1994 में "वो छोकरी" और "सर" के लिए सर्वश्रेष्ठ सहायक अभिनेता का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला था। इसके साथ ही परेश रावल को अब तक तीन फिल्मफेयर अवार्ड दिए जा चुके हैं। साल 1993 में फिल्म 'सर', 2000 में फिल्म 'हेराफेरी' और 2002 में फिल्म 'आवारा पागल दीवाना' के लिए भी उन्हें सर्वश्रेष्ठ हास्य अभिनेता का फिल्म फेयर पुरस्कार दिया गया। साल

---

[18] https://www.dilsedeshi.com/biography/paresh-rawal-biography-hindi/ 05 Jan 2021, 14:05 ISD

1995 में प्रदर्शित फिल्म 'राजा' के लिए उन्हें सर्वश्रेष्ठ सहायक अभिनेता का स्टार स्क्रीन पुरस्कार भी दिया गया।"[19]

4.7. टॉम ऑल्टर

भारत के उत्तराखंड में जन्मे 'टॉम अल्टर' को देख कर अधिकांश लोग उन्हें विदेशी समझने की गलती कर बैठते हैं। सिनेमा की दुनिया में टॉम ऑल्टर को 'ब्लू आई साहब ऑफ इंडियन सिनेमा' से भी जाना जाता है। 'टॉम ऑल्टर' का जन्म 22 जून सन् 1950 ई. में मसूरी में हुआ। उनके पितामह अमेरिका में 'वोहायो' के निवासी थे, जो सन् 1916 ई. में भारत आये और हमेशा के लिए यहाँ की नागरिकता ले ली। भारत की स्वतंत्रा के बाद इनके दादा और दादी ने मुल्क पाकिस्तान में रहने का फैसला किया तथा टॉम अल्टर के पिता ने वतन हिंदुस्तान में। उन्हें नौकरी के कारण हिंदुस्तान के अलग-अलग शहरों में जाना और रहना पड़ता था। इस तरह से टॉम अल्टर का बचपन शहर इलाहाबाद, जबलपुर, सहारनपुर और राजपुर (उत्तराखंड) में बीता। राज्य सभा टी.वी. के एक कार्यक्रम 'गुफ्त्गु' में अपने बारे में बताते है टॉम ऑल्टर कहते है - "मेरी पैदाइश मसूरी में हुई लेकिन उस वक्त मेरे पिता इलाहाबाद में काम कर रहे थे। ...मैं जब दो साल का था तो हम सब सहारनपुर में आ बसे। सन् 1954 ई. में हम सब राजपुर (उत्तराखंड) में आ बसे। ...मेरे बचपन का खास समय मसूरी और राजपुर में बीता।"[20] बाल्य अवस्था से ही टॉम अल्टर को क्रिकेट से बड़ा गहरा लगाव रहा है। बचपन में वे स्पोर्टस मैन, खासकर क्रिकेटर बनने का भी सपना देखा करते थे। क्रिकेट

[19] https://www.jagran.com/blogs/days/paresh-rawal-biography-in-hindi/ 2 Jan 2021

[20] https://youtu.be/lYCeKUKxt-U 23 August 2016

के अलावा शेरो-शायरी और उर्दू में भी इनका बचपन से रुझान रहा है। टॉम ऑल्टर की प्रारंभिक शिक्षा मसूरी के 'वूड स्टॉक स्कूल' से हुई।

टॉम ऑल्टर मुख्य रूप से अपने अभिनय के लिए जाने जाते हैं। उनकी अभिनय की तूती सिर्फ फिल्मों में ही नहीं बल्कि रंगमंच पर भी बोलती है। टॉम ऑल्टर, वो कलाकार हैं जिन्होंने सिनेमा अभिनय सीखने के बाद रंगमंच करना शुरू किया। राज्य सभा टी. वी. के गुफ्तगू कार्यक्रम में टॉम बताते हैं कि - बालिग उम्र के शुरूआत में ही वे पढ़ाई के लिए अमेरिका के 'येल विश्वविद्यालय' जाते है लेकिन एक वर्ष के अंदर ही वे अमेरिका से वापस भारत आ लौटें। वहाँ से वापस आने के बाद उन्होंने उन्नीस साल की उम्र में 'सेंट टॉम्स स्कूल, जगाधरी (हरियाणा)' में बतौर खेल शिक्षक छह महीनों तक कार्य किया। उसके बाद 'वूड स्टॉक स्कूल' में कुछ दिन कार्य किया। 'वूड स्टॉक स्कूल' में कार्य के बाद वे पुनः अमेरिका जाते है इस बार वो पढ़ाई के लिए नहीं बल्कि नौकरी के लिए अमेरिका जाते है। जहाँ वे एक अस्पताल में नौकरी करते है। इसमें भी उनका मन नहीं रमा तो वापस भारत आ गये। इस तरह से वे लगभग ढाई वर्षों तक अपना जीवन यापन करते रहे। जीवन यापन इसलिए कि टॉम अल्टर अब तक यह निर्णय नहीं कर पाये थे कि उन्हें जीवन में क्या करना है? अपनी बीस वर्ष की उम्र में उन्होंने राजेश खन्ना की फिल्म 'अराधना' देखी। उस फिल्म ने इन पर इतना गहरा प्रभाव डाला कि उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य तय कर लिया, जिसमें टॉम ऑल्टर खुद को एक अभिनेता के रूप में देखना चाहते थे। राज्य सभा टी.वी. के एक कार्यक्रम 'गुफ्त्गु' में टॉम ऑल्टर बताते है- "मैंने सन् 1970 ई. में फिल्म 'अराधना' देखी। फिल्म अराधना से मैं इतना प्रभावित हुआ कि उसे देखने के बाद मेरे मन में अभिनेता बनने का ख्याल उभरने लगा। जिस पर मैंने दो वर्ष बाद पूर्ण रूप से अमल किया और सन् 1972 ई. में मैने 'फिल्म एंड टेलीविजन इंस्टीट्यूट पुणे' में अपना

नामांकन करवाया।”[21] फिल्म इंस्टीट्यूट के द्वारा उन्होंने ‘रौशन तनेज़ा’ के मार्गदर्शन में अभिनय सीखा। “सन् 1970 में जगाधरी में राजेश खन्ना की फ़िल्म ‘आराधना’ देखी। फ़िल्म बहुत अच्छी लगी। उसी वक़्त एक्टर बनने का ख़्याल उठना शुरू हुआ। दो साल बाद भारतीय फिल्म और टेलिविज़न संस्थान(FTII), पुणे जॉइन किया। साल 1972 से लेकर 1974 तक वहीं रहे। यहां रोशन तनेजा इनके गुरु थे। टॉम का अपने करियर के बारे में कहना है कि ‘मैं इस एक्टिंग इंस्टीट्यूट न जाता तो आज मुझे कोई न जानता।’ यहां नसीरुद्दीन शाह और ओम पुरी इनके जूनियर थे और शबाना आज़मी इनकी सीनियर।”[22] फिल्म ‘चरस’ इनकी पहली फिल्म थी। फिल्म ‘शतरंज के खिलाड़ी’, ‘क्रांति’, ‘गाँधी’ में इन्होंने अपने अभिनय क्षमता का कुशल प्रमाण दिया। सिनेमा की दुनिया से हटकर वो रंगमंच की दुनिया में अपना योगदान देते आये हैं। नाटय संस्था ‘मोटली’ से जुड़कर उन्होंने 'मौलाना', 'बाबर के औलाद', 'लाल किले का आखिरी मुशायरा', 'गालिब के खत' आदि नाटकों में काम कर अपने कुशल कला का परिचय दिया। उनके द्वारा भारतीय सिनेमा और रंगमंच के क्षेत्र में दिया गया योगदान बहुमूल्य है।

पुरस्कार: भारतीय कला के क्षेत्र में टॉम ऑल्टर की उपलब्धियों की बात करें तो वो ‘फिल्म एंड टेलीविजन इंस्ट्यूट, पुणे’ में गोल्ड मेडल के साथ उत्तीर्ण हुए थे। भारत सरकार ने उनके कला के योगदान को देखते हुए सन् 2008 ई. में उन्हें पद्मश्री अवार्ड से सम्मानित किया था।

---

[21] https://youtu.be/lYCeKUKxt-U 23 August 2016

[22] https://www.thelallantop.com/jhamajham/padmi-shri-actor-tom-alter-films-biography-facts/ 24 May 2020, 10:00 ISD

मृत्यु: सन् 1972 ई. को अपने अभिनय कैरियर की शुरूआत करने वाले टॉम ऑल्टर अपने 67 वर्ष की उम्र में 29 सितंबर 2017 को स्किन कैंसर के कारण इस दुनिया को छोड़, हम सब से दूर हो गये।

4.8. नसीरुद्दीन शाह

पद्मश्री और पद्म भूषण सम्मान से सम्मानित नसीरुद्दीन शाह एक प्रतिष्ठित रंगमंच और फिल्म अभिनेता हैं। राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी कला के दम पर ख्याति पाने वाले नसीरुद्दीन शाह अपने चरित्र पूर्ण सहज प्रदर्शन के लिए जाने जाते हैं। वह अब तक दो सौ से ज्यादा फिल्में तथा साठ से अधिक नाटकों में काम कर चुके हैं। रंगमंच और फिल्म के अलावा नसीरुद्दीन शाह टेलिविज़न में भी शानदार प्रस्तुती दे चुके है। इन्हें चलती-फिरती अभिनय की पाठशाला कहना अनुचित नहीं होगा। नसीरुद्दीन शाह सिर्फ हिंदी भाषी फिल्मों में ही नहीं भारत के अन्य भाषाओं में भी फिल्में कर चुके हैं तथा उसमें उनके द्वारा निभाया गया किरदार सराहनीय रहा है। इनसाइक्लोपिडिया ऑफ हिंदी सिनेमा किताब के अनुसार “Shah rose to prominence with his roles in Shyam Bencgal's Nishant, Manthan and Bhumika. He then steadily consolidated his position as a respected actor, becoming closely identified with the parallel cinema movement of the 1970s. He was noted for his compelling portrayals in Sai Paranjpye's Sparsh, Saeed Mirza's 'Albert Pinto Ko Gussa Kyon Aata Hai', Govind

Nihalani's Aakrosh and Ketan Mehta's Mirch Masala."[23] भारतीय रंगमंच और भारतीय सिनेमा से परे वह विदेशी सिनेमा में भी अपना लोहा मनवा चुके है।

नसीरुद्दीन शाह का जन्म 20 जुलाई 1950 ई. को हुआ। इनका जन्म राज्य उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिला में हुआ। उनकी माता 'फारूख सुल्तान' कुशल गृहणी थी तथा उनके पिता अली मोहम्मद शाह सरकारी नौकरी में थे। नौकरी के कारण उनका तबादला होता रहता था इसलिए उन्हें एक शहर से दूसरे शहर जाना पड़ता था और वे अपने पूरे परिवार के साथ जाते थे। इस कारण नसीरुद्दीन शाह का बचपन बाराबंकी, बरेली, नैनीताल, राजस्थान आदि शहरों में बीता। उनकी शिक्षा नैनीताल और राजस्थान से हुई। समान्य पढ़ाई में उनका मन शुरू से नहीं लगता था। "नसीरूद्दीन शाह का जन्म 20 जुलाई 1950 को दिल्ली में हुआ। वह बचपन में कक्षा के सबसे सुस्त एवं पिछड़े छात्र थे। कक्षा में जो भी पढ़ाया जाता, उन्हें बिल्कुल समझ में नहीं आता था, लेकिन शिक्षक कक्षा में क्या-क्या बोलते थे, उनका लहज़ा कैसा होता था और उनकी भाव-भंगिमाएँ क्या होती थी, वह उसे बखूबी दोहरा सकते थे। 13 साल की उम्र में पहली बार एक शिक्षक को उनकी इस करतूत पर आशा की किरण दिखाई दी और उसने एक ड्रामा में उन्हें एक मौका दिया।"[24] बचपन में क्रिकेट खेल के दिवाने थे तथा फिल्म देखने का शौक भी बहुत था। बोर्डिंग स्कूल में पढ़ाई के समय से उन्हें सप्ताह में अंग्रेजी सिनेमा दिखाया जाता था। नसीरुद्दीन शाह अपनी किताब 'और फिर एक दिन... कुछ यादें' में लिखते हैं- "...स्कूल के पादरियों को अगर कोई और शौक था तो

---

[23] Gulzar, Nihalani Govind, Chatterjee Saibal, Editor, Britannica, Encyclopedia of Hindi Cinema, Page-624

[24] विप्लव विनोद, लेखक, हिंदी सिनेमा के 150 सितारें, पृष्ठ-60

खेल कूद में शामिल होना या हफ्ते में एक दो फिल्म हमारे साथ देखना। बुधवार की शाम फिल्म दिखाई जाती और सिनेमा का कोई हाफ़िज़ ही होगा जो फिल्में चुनता था। उस जमाने की एकाध ही अंग्रेजी फिल्में ऐसी होगी जिसे मैं फौरन पहचान नहीं पाता, सारी की सारी स्कूल में देखी है या उनके बारे में पता लगाया है, Mickey Mouse से लेकर Citizen kane तक।"[25] नसीरुद्दीन शाह बचपन से अंग्रेजी फिल्मों से अधिक प्रभावित थे। सिनेमा में देखे हुए दृश्यों में से कुछ दृश्यों का वह अकेले में नकल किया करते थे। धीरे-धीरे उनके अंदर अभिनेता बनने की इच्छा पनपने लगी। अभिनेता बनने की चाह दिल में संजोये हुए नसीरुद्दीन शाह को स्कूल में होने वाले नाटकों में भाग लेने का मौका प्राप्त नहीं होता था क्योंकि वे समान्य पढ़ाई में अच्छे विद्यार्थीयों की श्रेणी में नहीं आते थे। नसीरुद्दीन शाह ने अपने जीवन का पहला नाटक छठी या सातवीं कक्षा में किया था। उसके बाद उनके दिल में नाटक घर कर गया। अभिनेता और क्रिकेटर दोनों में से किसे, पेशे के तौर पर चुना जाए? इसका फ़ैसला उन्होंने नौवीं कक्षा में ही कर लिया। अपने कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्होंनें 'अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय' से स्नातक की डिग्री हासिल की। सन् 1971 ई. में नाटक को सिलसिलेवार तरीके से सीखने और समझने के लिए नसीरुद्दीन शाह ने भारत के प्रख्यात नाटक विद्यालय 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में अपना नामांकन करवाया। हालांकि नाट्य विद्यालय जाने के पूर्व उन्होंने अनेक नाटकों में भाग लिया। यहाँ तक की फिल्मी हीरो का सपना लिए वे मुंबई तक जा पहुँचे थे लेकिन परिस्थितियां सही नहीं रहने के कारण वे मुंबई से वापस आकर रंगमंच करने लगे। अभिनय के गुण सीखने के लिए उन्होंने नाट्य विद्यालय की ओर रूख किया। "After school, Naseer

---

[25] शाह, नसीरउद्दीन शाह, और फिर एक दिन... कुछ यादें, पृष्ठ-16

graduated from Aligarh Muslim University and by 1971, landed up in that hallowed temple of theatre actors in India, National School of Drama. Here, under the tutelage of Ebrahim Alkazi, another maverick theatre maestro, Naseer honed his craft. Then came FTII, the erstwhile Pune Film Institute."[26] राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के प्रथम वर्ष में उन्होंने अभिनय की शिक्षा ग्रहण करने के बाद के दो वर्षों में उन्होंने निर्देशन की पढ़ाई की। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के बाद 'फिल्म एंड टेलीविजन इंस्टीट्यूट, पुणे' में उन्होंने सिनेमा अभिनय के गुण सीखने के लिए अपना नामांकन करवाया। इस दौरान उन्हें सिनेमा में कार्य करने का मौका मिला। गोधूली', 'अल्बर्ट पिंटों को गुस्सा क्यों आता है', 'भवनी-भवाई', 'जाने भी दो यारो' जैसी कला फिल्मों ने उन्हें अभिनय क्षमता दिखाने का मौका दिया और अपनी प्रतिभा के दम पर उन्होंने लोगों का दिल जीत लिया। सिनेमा में कार्य करने के बाद भी वो रंगमंच से जुड़े रहे। इसके लिए उन्होंने 'मोटली' नाट्य संस्था खोला और 'बलि', 'अंधायुग', 'प्रतिबिम्ब', 'इडिपस', 'जूलियस सीजर' जैसे बहुचर्चित नाटक का मंचन किया। नसीरुद्दीन शाह अपने खुद के जीवन परिचय के लिए 'Naseeruddin Shah: And Then One Day A memoir' नामक एक पुस्तक का प्रकाशन करवा चुके हैं।

पुरस्कार: भारतीय सिनेमा एवं रंगमंच कला जगत में नसीरुद्दीन शाह के योगदान के लिए भारत सरकार ने उन्हें पद्म पुरस्कार से सम्मानित किया है तथा भारतीय फ़िल्म जगत से उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकार के पुरस्कार प्राप्त हुए। "Shah has won the Filmfare Award for Best Actor three times: in 1980 for Aakrosh,

[26] https://www.filmfare.com/features/being-naseer-2538.html Mar 7, 2013, 14:14 IST

in 1981 for Chakra and in 1983 for Masoom. His sensitive performance in Gautam Ghose's Paar secured him the Volpi Cup, given to the best actor, at the 1984 Venice film festival. He also received the 1984 National Film Award for Best Actor for the same film."[27] भारत सरकार द्वारा सन् 1987 ई. में पद्मश्री तथा सन् 2003 ई. में पद्म भूषण पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया है। "Naseer won 1980 National Film Award for Best Actor for Sparsh, 1981 Filmfare Best Actor Award for Aakrosh, 1982 Filmfare Best Actor Award for Chakra, 1984 Filmfare Best Actor Award for Masoom, 1985 National Film Award for Best Actor for Paar. He was conferred Padma Shri in 1987 and Padma Bhushan in 2003."[28] "70 वर्षीय शाह लगभग 100 से अधिक फिल्मों में अभिनय कर चुके नसीरुद्दीन शाह एक भारतीय फिल्म एवं रंगमंच, अभिनेता और निर्देशक भी हैं। शाह ने अपने करियर में कई पुरस्कार जीते हैं, जिसमें तीन राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार, तीन फिल्मफेयर पुरस्कार और वेनिस फिल्म समारोह में एक पुरस्कार शामिल है। भारतीय सिनेमा में उनके योगदान के लिए भारत सरकार ने उन्हें पद्म श्री और पद्म भूषण से सम्मानित किया है।"[29]

---

[27] Gulzar, Nihalani Govind, Chatterjee Saibal, Editor, Britannica Encyclopedia of Hindi Cinema, P-624

[28] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-151

[29] https://filmynism.com/happy-bday-naseeruddin-shah-7-movies-of-naseer-saheb-which-everyone-should-see/ 20 July 2020

4.9. ओम पुरी

ओम पुरी, इनका पुरा नाम 'ओम प्रकाश पुरी' है। जिन्होंने भारतीय सिनेमा के हीरोइज़्म की परिभाषा बदलने में बहुत बड़ा योगदान निभाया। ओम पुरी एक भारतीय अभिनेता थे। जो भारतीय सिनेमा के साथ ही भारतीय, रंगमंच में भी अपने अभिनय के दम पर उन्होंने लोगों के दिलों पर राज किया। ओम पुरी सिनेमा को अभिव्यक्ति का सबसे बड़ा माध्यम मानते थे। उनका कहना था कि अगर हम रंगमंच के माध्यम से लोगों तक पहुँचना चाहे तो सारी उम्र बीत जाएगी फिर भी हम पूरे भारत के लोगों तक नहीं पहुँच पायेंगे लेकिन अगर सिनेमा के माध्यम से पहुँचा जाए तो हम आम से आम व्यक्ति तक भी बहुत कम समय में पहुँच सकते हैं।[30] इस विचार के साथ ही उन्होंने रंगमंच के साथ-साथ फिल्मों में भी अपनी पूरी लगन के साथ कार्य किया। भारतीय कला के क्षेत्र में उनके द्वारा दिया गया योगदान बहुमूल्य है जिसे कभी ठूकराया नहीं जा सकता है। इस योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा सन् 1990 ई. में ओम पुरी को पद्म श्री पुरस्कार से नवाज़ा गया।

ओम पुरी का जन्म 18 अक्टूबर 1950 को अम्बाला में हुआ। इनके पिता भारतीय आर्मी में थे, जो बाद में रेलवे में नौकरी करने लगे थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा ग्राम 'सनौर' (पटियाला) से आरंभ हुई।[31] ओम पुरी का बचपन आर्थिक तंगी में बीता। यहाँ तक की वो चाय की दुकान और ढ़ाबे पर भी काम करने को मजबूर हुए थे। इन सब के बावजूद भी उन्होंने किसी तरह से अपनी शिक्षा जारी रखी। माध्यमिक बोर्ड के बाद उन्होंने 'खालसा कॉलेज, पटियाला' से अपनी स्नातक की पढ़ाई पूरी की। राज्यसभा

---

[30] https://youtu.be/FuS8IV3Ugko 23 Aug. 2012

[31] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-157

टी.वी. के एक कार्यक्रम गुफ़्तगू में ओम जी ने बताया कि - आर्थिक मजबूरी को देखते हुए कॉलेज के प्रिंसेपल ने इन्हें लाईब्रेरी में नौकरी दे दी। उससे इनका महीने का खर्च निकल आता था। खालसा कॉलेज में पढ़ाई के बाद उन्हें सरकारी नौकरी मिल गई थी लेकिन नाटक की चाहत में उन्होंने उसे लंबे समय तक नहीं किया और नौकरी छोड़ दी। रंगमंच को गहराई से समझने के लिए उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली में प्रशिक्षण लेना शुरू किया।

सन् 1973 ई. में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से अपना कोर्स समाप्त करने के बाद ओम पुरी हिंदी रंगमंच में काम करने लगे। उस दौरान उन्होंने 'ऑथेलो', 'तीन बहनें', 'सुल्तान रज़िया', 'तुगलक', आदि नाटकों में काम किया। कुछ समय बाद उन्होंने सिनेमा की ओर रूख किया। फिल्म 'अर्ध-सत्य' में अपनी भूमिका निभा कर वो श्रेष्ठ अभिनेता की श्रेणी में शामिल हो गये। ओम जी ने 'आक्रोश', 'आघात', 'भवनी-भवाई' जैसी फिल्मों में भी अभिनय किया। सिनेमा से जुड़ने के बाद भी वो रंगमंच के लिए समय निकाला करते थे। मज़मा रंग संस्था के साथ जुड़कर उन्होंने 'पाँचवाँ सवार', 'उध्वस्त धर्मशाला' हिंदी नाटक का मंचन किया।

पुरस्कार: ओम द्वारा भारतीय प्रदर्शनकारी कला के क्षेत्र में दिया गया योगदान अमूल्य है। उनके इस योगदान को ध्यान में रखकर भारतीय कला जगत समय समय पर उन्हें पुरस्कार से सम्मानित करती आयी है। "फिल्म अर्धसत्य के लिए ओमपुरी को नेशनल अवार्ड मिला था। फिल्म में उनका किरदार सामाजिक और राजनैतिक बुराईयों का विरोध करता है। इसके अलावा फिल्म आरोहण के लिए भी ओमपुरी को नेशनल

अवार्ड मिल चुका है।"[32] इसके अलावा इनके पुरस्कार में फिल्म 'आक्रोश' के लिए सर्वश्रेष्ठ सहायक अभिनेता का फिल्म फेयर पुरस्कार, फिल्म फेयर की तरफ से लाइफ टाइम अचिवमेंट पुरस्कार, बी. ए. एफ. टी. आ. की तरफ से सर्वश्रेष्ठ अहम भूमिका अभिनित करने के लिए बी. ए. एफ. टी. आ. पुरस्कार शामिल है। "अनेक पुरस्कारों से सम्मानित पुरी को 1990 में भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मानों में से एक पद्मश्री से सम्मानित किया गया तथा ब्रिटिश फिल्म उद्योग में उनके योगदान के लिए 2004 में उन्हें ऑर्डर ऑफ द ब्रिटिश एम्पायर (ओबीई) का मानद अधिकारी बनाया गया।"[33]

मृत्यु: बी.बी.सी. को दिए अपने एक साक्षात्कार में ओम पुरी ने अपनी मौत के बारे में कहा था कि मेरी मौत अचानक ही होगी। किसी दिन सुबह-सुबह खबर मिलेगी कि ओमपुरी नहीं रहे! 2017 में वह दिन आ ही गया जब ओम पुरी की कही बातें सत्य हो गयी। 6 जनवरी 2017 में उन्हें दिल का दौरा पड़ा और वह अपनी कही बातों के अंदाज में ही दुनिया को हमेशा के लिए अलविदा कहकर चले गये।

4.10. अनुपम खेर

अनुपम खेर, नाटक और फिल्म कि दुनिया में विशेष योगदान के लिए विभिन्न प्रकार के राष्ट्रीय पुरस्कार और फिल्म फेयर पुरस्कार से नवाजे गये। अनुपम खेर द्वारा लिखी गई पुस्तक Lessons Life Taught Me, Unknowingly an autobiography के अनुसार 'अनुपम खेर' (घर का नाम 'बिट्टू' और नाना के घर से मिला नाम 'गुगू') का जन्म 7 मार्च 1951 को एक कश्मीरी पंडित परिवार के यहाँ हिमाचल प्रदेश के

---

[32] https://hindi.webdunia.com/bollywood-focus/om-puri-25-interesting-facts-115101700084_4.html Sep. 2020

[33] https://www.britannica.com/biography/Om-Puri 23 Sep. 2024

शिमला शहर में हुआ।[34] इनके पिता 'पुष्कर नाथ खेर' वन विभाग में क्लर्क के पद पर थे और माता 'दुलारी खेर' एक कुशल गृहणी थी। इनके छोटे भाई 'राजू' जो पहले टीन की फैक्ट्री में काम किया करते थे बाद में वे भी अभिनय के क्षेत्र में आ गये। ये सभी एक ज्वाइंट परिवार में रहते थे। जिसमें कुल 14 (चौदह) सदस्य थे। पूरे परिवार की देख-रेख और खर्च का जिम्मा मुख्य रूप से पुष्कर नाथ खेर के ऊपर था। यह एक मध्यवर्गीय परिवार था जिसका दूर-दूर तक अभिनय से कोई परिचय नहीं था। सन् 1953 ई. में शादी के बाद इनके पिता कश्मीर से शिमला आ बसे।

अनुपम खेर का प्रारंभिक जीवन मुख्यतः उनके दादा 'पं. अमर नाथ खेर' के साथ व्यतीत हुआ। इस संबंध में वह अपनी किताब में लिखते हैं - "My childhood was shaped by living with my grandfather, Pandit Amar Nath Kher, and I infused a lot of him into my first major film role in Mahesh Bhatt's Saransh portraying both his physical and mental characteristics."[35] राज्य सभा टी. वी. के गुफ्तगु प्रोग्राम, 'अनुपम खेर से खास मुलाकात' के अनुसार "कक्षा पाँचवीं की पढ़ाई एक हिंदी माध्यम विद्यालय 'लेडी एरविंन हायर सेकेंडरी स्कूल' (आधुनिक नाम दयानंद पब्लिक स्कूल शिमला) से करने के बाद अनुपम खेर का नामंकन 'डी.ए.वी. हायर सेकेंडरी स्कूल, शिमला' (जो इंगलिश माध्यम था।) में हुआ। जहाँ से आगे की शिक्षा छठी से गयारहवीं कक्षा तक पूरी हुई। इनका विद्यालय घर से लगभग आठ-नौ किलो मीटर दूर था प्रतिदिन अनुपम खेर स्कूल जाने के लिए 8 से 9

---

[34] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood- Film Actors., Page-40

[35]Kher Anupam, Lessons Life Taught Me, Unknowingly an autobiography, Published by Hay House India, 5 August 2019, Page - 12

किलो मीटर पैदल चला करते थे।"[36] ये पढ़ाई के साथ-साथ खेल-कूद में भी मध्यम श्रेणी में आते थे लेकिन अपने स्कूल के समय से ही नाटक के प्रति इनका विशेष रुझान रहा है। अनुपम खेर अपने सपने को हमेशा ऊँचे पायदान पर रखते थे कि आने वाले समय में लोगों के बीच इनकी एक अलग पहचान होगी और कहीं-कहीं तो वो अपने स्कूल के बेंच, किताबों आदि पर अपना नाम कुरेदते थे कि भविष्य में लोगों को पता चलेगा कि अनुपम खेर यहाँ बैठा करते थे। बचपन से अनुपम खेर अपने घर वालों और शिक्षकों की नकल किया करते थे। इसी समय से इनके अंदर अभिनय कला ने अपना घर बनाना शुरू कर दिया था लेकिन अनुपम खेर को यह अंदाजा नहीं था कि वो आगे चलकर एक सफल अभिनेता की श्रेणी में गिने जायेंगे। राजनीति शास्त्र और अर्थ शास्त्र में स्नात्तक करने के बाद अनुपम खेर ने आई. ए. एस. की परीक्षा भी दी लेकिन उनका ध्यान इन सब विषयों में नहीं रमता था।

अनुपम खेर अभिनय की दुनिया में काम करना चाहते थे, इसी सपने के साथ स्नातक किया। इसके उपरांत एक दिन न्यूज़ पेपर में चंडीगढ़ विश्वविद्यालय द्वारा अभिनय प्रशिक्षण का न्यूज़ देखकर अनुपम खेर ने साक्षात्कार हेतु वहाँ जाने का मन बनाया लेकिन वहाँ जाने के लिए इनके पास पैसे नहीं थे तो ये बिना बताये माँ के रखे हुए पैसे लेकर साक्षात्कार हेतु चंडीगढ़ चले गये। साक्षत्कार का परिणाम पत्र डाक द्वारा इनके घर पर आया तो इनके परिवार को पता चला कि उनका बिट्टू अभिनय सीखने के प्रति इच्छूक है। अभिनय कोर्स करने के लिए अनुपम खेर अपने परिवार की सहमति से 27 जुलाई 1974 ई. को शिमला छोड़कर चंडीगढ़ जाते हैं। राज्यसभा टी.वी. के एक कार्यक्रम, गुफ़्तगू में अनुपम खेर ने बताया की 'इस कोर्स के लिए इन्हें चंडीगढ़

[36] https://youtu.be/Q5U7JNl6hAs 25 June 2018

विश्वविद्यालय द्वारा छात्रवृति प्राप्त होती थी जिसकी राशि 200 रू. थी।' यहाँ (पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़ के थियेटर डिपार्टमेंट में) बलवंत गार्गी और अमल अल्लाना के अंदर थियेटर करना शुरू किया। यहीं से उन्होंने थियेटर की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। इतना ही नहीं इन्हें पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़ के थियेटर डिपार्टमेंट में अपनी कला के लिए गोल्ड मेडल से भी नवाज़ा गया। पंजाब यूनिवर्सिटी के थिएटर विभाग में नाटक करते हुए उन्हें कई बड़े लोगों से एक्टिंग और कला के बारे में काफी कुछ सीखने को मिला। पंजाब यूनिवर्सिटी से वे बतौर गोल्ड मेडलिस्ट बनकर निकले जिस कारण उन्हें नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा (राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय) में जल्दी एडमिशन मिल गया।[37] थियेटर में मूख्य रूप से इनका ध्यान अभिनय कला पर रहता था। अभिनय कला कि बारिकियों से रूबरू होने के लिए उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली में नामांकन हेतु आवेदन किया। जहाँ उन्हें पहली बार निराशा हाथ लगी लेकिन फिर भी उन्होंने हार नहीं मानी और दूसरी बार पुनः आवेदन किया तब जाकर उन्हें राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली में जगह मिली। उस समय इब्राहिम अल्काज़ी इनके गुरू थे। रंग-यात्रा पत्रिका में अनुपम खेर के बारे में बताया गया है- "अनुपम खेर ने सन् 1977 में इब्राहिम अल्काजी द्वारा निर्देशित नाटक 'जाग उठा है रायगढ़' में एक सैनिक की भूमिका तथा इसी वर्ष एम. के. रैना द्वारा निर्देशित नाटक 'अन्धायुग' में एक वृद्ध प्रहरी की भूमिका अदा की।"[38] राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में इस समय तक अनुपम खेर को कोई खास

[37] https://www.jionewstv.com/2021/03/Biography-of-anupam-kher-in-hindi.html 14 oct. 2020, 06:10 IST

[38] रंग यात्रा-2004, प्रकाशन- राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय दिल्ली, पृ.-56

उपलब्धि हासिल न थी लेकिन अपने सपने को साकार करने के लिए जी-तोड़ मेहनत करते रहें।

अनुपम खेर के व्यक्तिगत जीवन की बात करें तो इन्होंने सन् 1985 में फिल्म अभिनेत्री 'किरन खेर' से विवाह रचाया।[39] किरन खेर से उनकी पहली मुलाकत पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ में हुई थी। किरन खेर अनुपम खेर से एक साल सीनियर थी और दोनों एक साथ कई नाटकों में अपनी भागीदारी दे चुके थे।

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से कोर्स पूरा करने के बाद उन्होंने भारतेंदु नाट्य विद्यालय, लखनऊ में बतौर शिक्षक काम किया। उसके बाद उन्होंने अभिनय प्रदर्शन का सपना लिए सिनेमा में काम करना शुरू किया। फिल्म 'सारांश' में उनके द्वारा निभाया गया किरदार लोगों को खूब पसंद आया और उसके बाद वो एक अच्छे अभिनेता की सूचि में आने लगे। कर्मा, खोसला का घोसला, ए वेडनसडे आदि फिल्मों में अभिनय कर अपने कुशल प्रतिभा का परिचय दिया। सिनेमा में एक उच्च स्तर का नाम कमाने के बाद भी अनुपम खेर ने 'मेरा वो मतलब नहीं था' हिंदी नाटक से पुनः रंगमंच शुरू किया।

पुरस्कार: कला के क्षेत्र में किये गये कार्य के आधार पर इन्हें अनेकों पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। फिल्म 'सारांश' में बेहतर भूमिका निभाने के लिए 'बेस्ट एक्टर अवार्ड' से नवाजा गया था, जो इनके जीवन का पहला राष्ट्रीय पुरस्कार था। सिनेमा और रंगमंच की दुनिया में एक बेहतर योगदान को देखते हुए भारत सरकार ने अनुपम खेर को सन् 2004 में पद्मश्री तथा सन् 2016 में पद्म भूषण सम्मान से पुरस्कृत किया। पद्म अवार्ड के अलावा अनुपम खेर अब तक अपने जीवन में अनेकों

[39] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood- Film Actors., Page-41

राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार के विजेता रहें है। "सिनेमा और कला में अपने योगदान के लिए उन्हें यूएस की टेक्सास गवर्नमेंट होनोरेड गेस्ट अवार्ड से सम्मानित कर चुकी है। भारत सरकार द्वारा 2004 में पदम्श्री और 2016 में पदम् भूषण मिल चुका है। 1989 में फिल्म डैडी के लिए और 2005 में फिल्म मैंने गाँधी को नहीं मारा के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुका है। 5 बार कॉमिक परफॉरमेंस के लिए फ़िल्मफेयर पुरस्कार मिल चुका है। कराची इंटरनेशनल फिल्म फेस्टिवल में उन्हें बेस्ट एक्टर का अवार्ड मिल चुका है। प्रथम एजुकेशन फाउंडेशन ने 2010 में उन्हें अपना गुडविल अम्बेस्डर भी घोषित किया था। इसके अलावा अनुपम खेर भारतीय सेंसर बोर्ड और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के अध्यक्ष भी रह चुके हैं।"[40]

4.11. पंकज कपूर

सामानांतर सिनेमा से अपनी पहचान बनाने वाले पंकज कपूर ने रंगमंच से टेलीविजन और फिर टेलीविजन से सिनेमा तक अपने अभिनय का हुनर दिखाकर लोगों के दिलों में अपनी जगह बनाई। पंकज कपूर के सफर का सिलसिला सिनेमा तक ही नहीं थमता; सिनेमा में नाम, फ़ेम, शोहरत आदि कमाने के बाद भी वे रंगमंच करते रहे। 29 मई सन् 1954 ई. को पंजाब के लुधियाना शहर के एक पंजाबी परिवार में पंकज कपूर का जन्म हुआ।[41] उनके पिता पेशे से प्रध्यापक थे। पंकज कपूर की प्रारंभिक शिक्षा पंजाब से पंजाबी भाषा में शुरू हुई। अपने स्कूली समय से ही उनके दिल में

---

[40] https://www.prabhasakshi.com/entertainmentarticles/acting-school-is-also-called-anupam-kher. 7 march 2017

[41] https://www.abplive.com/entertainment/bollywood/pankaj-kapur-birthday-specil-actor-love-story-with-neelima-azeem-and-supriya-pathak-2699198 04 अक्टूबर 2024, 01:18 PM IST

रंगमंच ने घर बना लिया था। पढ़ाई के साथ-साथ वे रंगमंच के प्रति भी अपनी जागरूकता रखने लगे थे तथा उसमें भाग लेने लगे। प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने इंजीनियरिंग की शिक्षा भी प्राप्त की। इसी दौरान वे कॉलेज में होने वाली रंगमंच गतिविधियों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया करते थे। रेणु सरण के अनुसार "Pankaj Kapoor first studied engineering in New Delhi, and completed the course in 1973, topping his college. Thereafter, he joined National School of Drama (NSD), New Delhi."[42] "अभिनय में रुचि होने के कारण साल 1973 में अपनी इंजीनियरिंग की पढ़ाई समाप्त करके उन्होंने नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में दाखिला ले लिया। यहां उन्होंने अभिनय की कई बारीकियां सीखी और उन्हें प्रशिक्षण के दौरान बेस्ट एक्टर के अवार्ड से भी नवाज़ा गया।"[43] इसके बाद वे वहीं पर रिपेटरी में काम करने लगे। 'तिलचट्टा', 'आधे अधूरे', 'सैंया भये कोतवाल', 'मैना गुर्जरी', 'अंकल वान्या' आदि नाटकों में भी इनके काम को खूब सराहा गया। रिपेटरी में काम करते समय ही इन्हें फिल्म 'गांधी' में काम करने का मौका मिला। फिल्म गांधी से वे सिनेमा की दुनिया में काम करने लगे। फिल्म 'राख', 'मकबूल', 'हल्ला बोल' आदि उनकी बहुचर्चित फिल्में रहीं। टेलीविज़न की दुनिया में पंकज कपूर का बोलबाला रहा। उन्होंने 'नीम का पेड़', 'फटिचर', 'कब तक पुकारूं', 'क्रमचंद', 'फिलिप्स टॉप टेन', 'ऑफिस-ऑफिस' आदि धारावाहिकों में काम किया। पंकज कपूर सिनेमा, टेलीविज़न में नाम कमाने के बाद भी जब कभी उन्हें रंगमंच में काम करने का मौका मिलता है, वो हमेशा अग्रसर रहते हैं।

[42] Saran, Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-160

[43] https://hindi.filmibeat.com/celebs/pankaj-kapoor/biography.html Nov. 2020, 11:27 IST

पुरस्कार: पंकज कपूर का पहला पुरस्कार उन्हें सन् 1989 में फिल्म 'राख' में निभाये गये सहायक अभिनेता के लिए मिला था। उसके बाद 'एक डॉक्टर की मौत' के लिए 'विशेष जूरी पुरस्कार', फिल्म फेयर की तरफ से फिल्म 'मकबुल' के लिए बेहतर सहायक अभिनेता का पुरस्कार सन् 2004 में, ऑफिस-ऑफिस में निभाये गये किरदार के लिए भी पंकज कपूर को 'बेस्ट एक्टर इन ए कॉमिक रोल' का पुरस्कार प्राप्त हुआ। "अमृतसर में 05 मार्च 2020 को पंजाब के राज्यपाल और गुरू नानक देव विश्वविधालय के कुलाधिपति वी पी सिंह बदनोर ने दशमेश सभागार में 46 वें वार्षिक दीक्षांत समारोह में मेदांता मेडिसिटी के अध्यक्ष एवं प्रबंधक निदेशक डॉ नरेश त्रेहान और प्रसिद्ध अभिनेता 'श्री पंकज कपूर' को डॉ ऑफ मेडिसिन से सम्मानित किया गया।"[44]

4.12. पीयूष मिश्रा

लेखक, गायक, अभिनेता पियूष मिश्रा सिनेमा और रंगमंच दोनों में अपने हुनर के दम पर अपना लोहा मनवा चुके हैं। पीयूष मिश्रा का जन्म 13 जनवरी सन् 1963 ई. को राज्य मध्यप्रदेश के ग्वालियर शहर के एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ। रंगमंच और फिल्मी दुनिया में पीयूष मिश्रा का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। पीयूष मिश्रा का नाम उन कलाकारों की सूची में लिया जाता है जो अपने कला के माध्यम से आने वाले कलाकारों को एक राह दिखाते हैं। पियूष मिश्रा अपनी बुआ के द्वारा गोद लिए गए थे। राज्यसभा टी.वी. के गुफ़्तगू कार्यक्रम में पीयूष मिश्रा बताते हैं - आज जिस नाम से उन्हें जाना जाता है, इसके पहले उनका नाम 'प्रियकांत शर्मा' था जो कि दसवीं कक्षा में इन्होंने स्वयं अपना नाम बदलकर 'पीयूष मिश्रा' रखा।

---

[44] https://www.indiatv.in/entertainment/bollywood-shahid-kapoor-congratulate-his-father-on-receiving-a-doctorate-shares-a-picture-694202 March 06, 2020 15:53 IST

इनकी आरंभिक शिक्षा ग्वालियर से शुरू हुई। पीयूष मिश्रा के परिवार ने 'कॉरमल कॉन्वेंट स्कूल, ग्वालियर' में इनका नामांकन करवाया। बाल्यावस्था अर्थात पाँचवीं कक्षा से ही पीयूष मिश्रा की स्कूली अकादमिक क्षेत्र में रुचि नहीं रहती थी, लेकिन हाँ, साहित्य जैसे कविता-कहानी लिखने-पढ़ने तथा गाने का बड़ा शौक रखते थे। "पीयूष मिश्रा का जन्म 13 जनवरी 1963 को मध्य प्रदेश के विरासतों वाले शहर ग्वालियर में हुआ था। पीयूष मिश्रा को उनके पिता की बड़ी बुआ ने गोद लिया था। पीयूष मिश्रा ने अपनी पढ़ाई कार्मेल कॉन्वेंट स्कूल, ग्वालियर से पूरी की है। बचपन से ही पीयूष सिंगिंग, पेंटिंग और एक्टिंग में दिलचस्पी रखते थे।"[45] 'प्रियकांत शर्मा' ने पीयूष मिश्रा होने के पहले से लेखन कार्य शुरू कर दिया था। गाना गाने के बचपन से दीवाने थे। सातवीं कक्षा में उन्होंने पहली पेंटिंग बनाई, आठवीं कक्षा में उन्होंने पहली कविता की रचना की, इसी समय उन्होंने हारमोनियम बजाना सीखा, दसवीं कक्षा में पहला स्कल्पचर बनाया। इस तरह से पियूष मिश्रा बचपन से कला के प्रति अथवा कला को लेकर जीने लगे थे।

16 वर्ष की आयु से वे रंगमंच करने लगे थे। बचपन से रंगमंच के प्रति लगाव रहने के कारण वे 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा, नई दिल्ली' में दाखिल होते हैं। कोर्स समाप्ति के बाद उनहोंने दिल्ली के नाट्य संस्थाओं के साथ काम किया। 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा, नई दिल्ली' में पढ़ाई करने के दौरान ही पियूष मिश्रा को फिल्म में काम करने का मौका मिला। फिल्मी करियर में उन्हें फिल्म गुलाल और गैंग्स ऑफ वासेपुर से सफलता मिली। पियूष मिश्रा, अभिनेता के साथ-साथ एक कुशल लेखक, गीतकार,

---

[45] https://hindi.filmibeat.com/celebs/piyush-mishra/biography.html 06 Oct. 2024, 09:25 IST

संगीतकार भी हैं। फिल्म में जाने के बाद पीयूष जी की रंगमंच से लंबी दूरी रही लेकिन उनहोंने पुनः 2019 में हिंदी रंगमंच से वापसी की। हिंदी रंगमंच में पीयूष मिश्रा का बहुमूल्य योगदान रहा है, उनके द्वारा लिखा गया नाटक जब शहर हमारा सोता है, गगन दमामा बाज्यो चर्चित नाटकों की श्रेणी में आता है।

पुरस्कार: पीयूष मिश्रा, भारतीय कला जगत को अपना बहुमूल्य योगदान देते आ रहे है। जिसे कभी नकारा नहीं जा सकता है। उन्हें फिल्म 'गुलाल' में संगीत के लिए तथा फिल्म 'लिजेंड ऑफ भगत सिंह' में डॉयलग के लिए पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

4.13. सौरभ शुक्ला

फिल्म 'सत्या' के कल्लू मामा और फिल्म 'जॉली एल. एल. बी.' के जज त्रिपाठी की भूमिका अदा कर लोगों को मनोरंजन कराने वाले सौरभ शुक्ला को कोई कैसे भूल सकता है। फिल्मीबीट बेवसाइट के अनुसार "सौरभ शुक्ला भारतीय फिल्म अभिनेता, थियेटर कलाकार, टेलीविजन एक्टर, निर्देशक और स्क्रीनराइटर हैं। वे सत्या, बर्फी, जॉली एलएलबी, किक और पीके जैसी फिल्मों में निभाए गए अपने अभिनय की वजह से जाने जाते हैं।"[46] सौरभ शुक्ला का जन्म सन् 5 मार्च 1963 ई. में गोरखपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। इनके पिता दिल्ली विश्वविद्यालय में नौकरी करते थे। इस कारण इनका बचपन दिल्ली में बीता। सौरभ शुक्ला सांगीतिक परिवार से आते हैं। उनके पिता शत्रुध्न शुक्ला हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के गायक थे। वे दिल्ली विश्वविद्यालय के म्यूजिक एंड फाइन आर्ट्स डिपार्टमेंट में डीन के पद पर भी कार्यरत रह चुके हैं तथा उनकी माँ

---

[46] https://hindi.filmibeat.com/celebs/saurabh-shukla/biography.html 06 अगस्त 2024 9:23 am

जोगमाया शुक्ला को भारत की प्रथम महिला तबला वादक का सम्मान प्राप्त है। साथ ही वे दिल्ली विश्वविद्यालय के म्यूजिक एंड फाइन आर्ट्स डिपार्टमेंट में एक तबला वादक के रूप में काम करती थीं। इस तरह सौरभ शुक्ला का बचपन संगीतमय माहौल में बीता। "जब सौरभ छठी कक्षा में थे, तब से उनके अंदर फिल्ममेकर बनने की लालसा थी। बहुत कम लोग जानते हैं कि सौरभ की मां भारत में पहली महिला तबलावादक थीं।"[47] सौरभ शुक्ला की प्रारंभिक शिक्षा दिल्ली से हुई। उसके बाद उन्होंने 'खालसा कॉलेज, दिल्ली' में भी पढ़ाई की लेकिन उनका मन सामान्य पढ़ाई की तरफ नहीं लगता था। वे बचपन से लेखक और निर्देशक बनने का सपना देखा करते थे, लेकिन उन्हें इसके रास्ते का ज्ञान नहीं था। लेखन और निर्देशन के अलावा, वे अपने मन में स्पोर्ट्समैन बनने का भी सपना संजोए हुए थे।

राज्य सभा टी.वी. के गुफ़्तगू कार्यक्रम में सौरभ शुक्ला ने बताया कि वे बाल्यावस्था से ही फिल्म के दीवाने रहे हैं। उनके घर में फिल्म देखने पर पाबंदी नहीं थी, इस कारण वे महीने में दस से बारह फिल्में देख लिया करते थे। सिर्फ कला में ही नहीं, उनका रुझान खेलों के प्रति भी बराबर का था। लगभग चौथी-पाँचवीं कक्षा में उन्होंने प्रथम पैशन के रूप में पेंटिंग करना आरंभ किया था। कुछ अंतराल पर वे पेंटिंग छोड़कर क्रिकेटर बनने का सपना संजोने लगे। क्रिकेटर के सपने को सच करने के लिए सौरभ शुक्ला दो महीनों के लिए एन. आई. एस. गए, लेकिन अंत में किसी कारणवश वे क्रिकेट को अलविदा कहकर टेबल टेनिस की दुनिया में कदम रखते हैं। लगभग दो वर्षों तक वे टेबल टेनिस से जुड़े रहे। इन सब के बाद भी सौरभ शुक्ला को जीवन में

---

[47] https://www.indiatv.in/entertainment/bollywood-saurabh-shukla-birthday-these-films-are-the-best-role-of-actor-776268 March 05, 2021 11:38 IST

क्या करना है, क्या बनना है, इसका अंतिम निर्णय नहीं ले पा रहे थे। बचपन से वे सिनेमा के शौकीन थे। उन्हें अभिनय से खास लगाव था। स्नातक की पढ़ाई के बाद वे अभिनय सीखने के इरादे से रंगमंच संस्था में जुड़कर काम करने लगे। यहीं से उनका रंगमंच का सफर शुरू होता है। रंगमंच की दुनिया में सौरभ शुक्ला 'अ व्यू फ्रॉम द ब्रिज', 'लुक बैक इन एंगर', 'घासी राम कोतवाल', 'हयवदन' जैसे चर्चित नाटकों में काम कर अपने कुशल अभिनय का परिचय दिया। रंगमंच में काम करते हुए इन्हें सिनेमा में काम करने का मौका मिला। फिल्म बैंडित क्वीन से फिल्मी सफ़र शुरू करने वाले सौरभ को फिल्म सत्या से राष्ट्रीय पहचान मिली। फिल्म जॉली एल.एल.बी. में निभाए गए किरदार के लिए उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सौरभ शुक्ला सत्या, कलकत्ता मेल, मुंबई एक्सप्रेस, एसिड फैक्ट्री, पप्पू कांट डांस साला आदि फिल्मों का लेखन भी किया। सिनेमा में ख्याति पाने के बाद भी वे रंगमंच से जुड़े रहे। उन्होंने 'रेड हॉट' नाटक का निर्देशन भी किया।

पुरस्कार: सौरण शुक्ला को पहली बार पटकथा लेखन के लिए सम्मान मिला। "In 2003, he wrote the screenplay for Calcutta Mail which got him his first award for this film, the Zee Cine Award for best screenplay."[48] वर्ष 2014 में फिल्म जॉली एलएलबी के लिए उन्हें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कारों में बेस्ट सपोर्टिंग ऐक्टर के पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है।

4.14. यशपाल शर्मा

यशपाल शर्मा का जन्म 1 जनवरी, 1967 को हिसार, हरियाणा, भारत में हुआ था। वह एक अभिनेता और निर्माता हैं, जिन्हें फिल्म 'लगान: वन्स अपॉन ए

---

[48] https://in.bookmyshow.com/person/saurabh-shukla/2063 Mar. 2021

टाइम इन इंडिया', 'नीली छतरी वाले' और 'गंगाजल' के लिए जाना जाता है।[49] राज्यसभा टी.वी. के एक कार्यक्रम, 'गुफ़्तगू में यशपाल शर्मा के साथ' के अनुसार - इनके पिता प्रेमचंद शर्मा हरियाणा के पी. डब्ल्यू. डी. में कार्य करते थे। ये सात भाई-बहन थे। बचपन के समय यशपाल शर्मा ग्रामीण पारिवारिक कार्य जैसे गाय और बकरियाँ चराना, खेतों में कार्य करना आदि करते थे। दिवाली पर पटाखे और होली में रंग भी बेचा करते थे। कुल मिलाकर ग्रामीण क्षेत्र के घरेलू कार्य किया करते थे या फिर जीवन यापन के लिए हमेशा किसी न किसी कार्य में खुद को व्यस्त रखते थे। दूसरी तरफ, हिसार से ही इनकी स्कूली शिक्षा भी जारी थी। आठवीं कक्षा के बाद से पढ़ाई के खर्चे के लिए यशपाल आत्मनिर्भर हो चुके थे। इसके लिए वो ट्यूशन पढ़ाते थे, साथ ही पार्ट टाइम जॉब भी किया करते थे। इन सब के साथ वे घरेलू कार्य में भी हाथ बटाया करते थे। स्कूल-कॉलेज में होने वाले फंक्शन या प्रतियोगिता में ये भाग लेने से डरते थे, इसका कारण था कि उन्हें स्टेज पर जाने से बहुत डर लगता था, और यही कारण है कि नाटक के प्रदर्शन को लेकर कभी हिम्मत नहीं होती थी कि वो कभी नाटक भी कर पाएंगे, लेकिन नाटक के लिए दिल में बचपन से लगाव था। एक समय इन्हें 'राजीव मंचनदा' (एन. एस. डी. के छात्र रह चुके थे) के बारे में पता चला कि वो नाटक कर रहे हैं। यशपाल ने उनके साथ जुड़कर उस नाटक में काम किया। उसके बाद उन्होंने 'राजीव मंचनदा' के मार्गदर्शन में रंगमंच करना आरंभ किया। कुछ समय बाद यशपाल शर्मा ने 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में दाखिला लिया। वहां से पढ़ाई समाप्त कर वो मुंबई की ओर रुख कर गये। सिनेमा जगत में फिल्म शूल, लगान, गंगाजल में अभिनित किरदार ने यशपाल शर्मा को राष्ट्रीय पहचान दिलाई। इसके अलावा उन्होंने

---

[49] https://www.imdb.com/name/nm1004985/bio/ 09 July 2024

'मुझे कुछ कहना है', 'गुनाह', 'धूप', 'चमेली', 'हज़ार ख्वाहिशें ऐसी', 'मुम्बई से आया मेरा दोस्त', 'गंगाजल', 'अपहरण', 'वेलकम टू सज्जनपुर' जैसी बहु चर्चित फिल्मों में काम किया। सिनेमा की व्यस्तता उन्हें रंगमंच से दूर करती गई, लेकिन इसके बाद भी उनकी हमेशा कोशिश रहती है कि वो रंगमंच को अपना समय दे पायें। वर्तमान समय में यशपाल शर्मा 'फेस्टिवल सिनेमा' में भी कार्य कर रहे हैं। उन्होंने अपने क्षेत्रीय भाषा हरियाणवी में भी फिल्म 'पगड़ी' का निर्माण किया। यशपाल शर्मा फिल्म 'पगड़ी' को अपने जीवन का बहुमूल्य उपलब्धि बताते हैं।

पुरस्कार: 'पगड़ी' फिल्म के लिए इन्हें 62वां राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार हासिल हुआ है। 2004 में फिल्म 'गंगाजल' के लिए इनका नाम फिल्मफेयर सर्वश्रेष्ठ खलनायक पुरस्कार के लिए नामित हुआ था। 2016 में 'मेरा नाम करेगी रोशन' सीरीयल के लिए इहें इंडियन टेली जूरी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। 2016 में 'मोक्ष' के लिए वाट अ शार्ट इंडिपेंडेंट इंटरनेशनल फिल्म फेस्टिवल पुरस्कार मिला।

<u>अध्याय:5</u> चयनित अभिनेताओं द्‌वारा रंगमंच एवं सिनेमा के क्षेत्र में किया गया कार्य

लगभग सौ साल पहले चलन में आई सिनेमा विधा आज हर उम्र और स्वभाव के लोगों के पास आसानी से जाने में सक्षम है। वहीं हजारों वर्ष पुरानी रंगमंच कला आज भी कुछ लोगों तक ही अपनी पहुँच बना सकी है। जबकि आधुनिक सिनेमा ने रंगमंच कलाकारों की बुनियाद पर ही अपना विशाल स्वरूप धारण कर रखा है। आज सिनेमा रंगमंच के स्थान पर भले ही जन-जन का प्रिय मनोरंजन आधार बन चुका है, परंतु फिर भी सदियों पुरानी रंगमंच परंपरा जो जीवन के यथार्थ को जीवंत रूप में लोगों के सामने प्रस्तुत करती आ रही है। कुछ प्रसिद्‌ध कलाकार आज भी सिनेमा की लोकप्रियता हासिल करने के बाद भी रंगमंच के प्रचार-प्रसार में कार्य कर रहे हैं और इस परंपरा को कला की प्रवाहित धारा में इसे निरंतर आगे बढ़ते रहने में अपना योगदान दे रहे हैं। रंगमंच के ये कलाकार जब सिनेमा जगत में अपना नाम स्थापित कर पुनः रंगमंच प्रदर्शन का हिस्सा बनते हैं तो उससे रंगमंच के दर्शकों में बढ़ोतरी होना लाज़मी है। इस अध्याय में चयनित प्रमुख फिल्म अभिनेताओं द्‌वारा हिंदी रंगमंच और सिनेमा को दिये गये योगदान का विवरण है।

5.1. पृथ्वीराज कपूर

रंगमंच: पृथ्वीराज कपूर रंगमंच और सिनेमा में गहराई से जुड़े थे। उनकी चर्चा किए बिना भारतीय सिनेमा और रंगमंच जगत की चर्चा अधूरी सी लगती है। स्कूल के दिनों से ही वे नाटकों में अभिनय करने लगे। जयदेव तनेजा अने पुस्तक में लिखते है, “1927 में इन्होंने लाहौर के लॉ कॉलेज में प्रवेश लिया। अपनी खानदानी प्रतिष्ठा और पारिवारिक विरोध के बावजूद उन दिनों हिंदुस्तान आई ‘एंडरसन थियेट्रिकल कम्पनी’ में

शामिल होकर पृथ्वीराज उसके साथ टूर पर चले गए।"[1] कॉलेज की पढ़ाई के दौरान ही इन्होंने 'दीना दी बरात', 'स्प्रैडिंग द न्यू' और 'राइडर्स टू द सी' नामक नाटकों में अभिनय किया और खूब प्रशंसा पाई थी। जयदेव तनेजा के अनुसार, "वह अपने समय के ज्वलंत सवालों, पश्चिमी प्रभाव से टूटते संबंधों, विभाजन से उखड़े-बिखरे परिवारों, नष्ट होते आदर्शों और मूल्यों तथा साम्प्रदायिकता, घृणा, हिंसा, गरीबी-भुखमरी जैसी बड़ी सामाजिक-राजनैतिक-आर्थिक समस्याओं से उद्वेलित थे। अपने नाटकों से वह नवजागरण, प्रेम, एकता, भाई-चारे और मानवता का संदेश जन-जन तक पहुंचाना चाहते थे।"[2] रंगमंच के प्रति गहरे लगाव ने पृथ्वीराज को बंबई की ओर रुख करने को मजबूर कर दिया। 17 वर्ष की उम्र में ही उनकी शादी 14 वर्षीय रामसरानी से कर दी गई। अभिनय का शौक उन पर इतना हावी था कि वह अपने तीन बच्चों को पत्नी के पास छोड़कर 1928 में मुंबई आ गए।[3] मुंबई में कदम रखने के बाद उन्होंने पीछे पलटकर नहीं देखा। एक तरफ रंगमंच के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को शिद्दत से निभाया, तो दूसरी ओर सिनेमा के लोकप्रिय मंच पर भी अपनी सजग उपस्थिति दर्ज की। जागरण वेबपेज में प्रकाशित एक लेख के अनुसार, "मुंबई आने पर पृथ्वीराज को फिल्मों में काम करने का पहला मौका 'सिनेमा गर्ल' में मिला। यह एक मूक फिल्म थी। उन्होंने आठ अन्य मूक फिल्मों में काम किया। 1931 में भारत की पहली बोलती फिल्म 'आलम आरा' बनी। इस फिल्म में उन्होंने सहायक अभिनेता की भूमिका निभाई।"[4] सिनेमा में कार्य करने का उनका मुख्य उद्देश्य पैसा अर्जित करना था, ताकि रंगमंच करते वक्त

[1] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 63

[2] वही, पृ. 63

[3] https://www.jagran.com/blogs/entertainment/prithviraj-kapoor-profile-in-hindi/ 20 May 2020 08:55 AM IST

[4] वही

उन्हें आर्थिक समस्या का सामना न करना पड़े। सिनेमा की दुनिया में एक उच्च दर्जा प्राप्त करने के बाद भी पृथ्वीराज कपूर का दिल रंगमंच की दुनिया में वापस आना चाहता था, क्योंकि उनका दिल हमेशा रंगमंच के लिए धड़कता रहा। यही कारण है कि 38 साल की उम्र में, एक मजबूत वित्तीय स्थिति विकसित करने के बाद हिंदुस्तानी मंच की प्रस्तुतियों को बढ़ावा देने के लिए पृथ्वीराज कपूर ने वर्ष 1944 में 'पृथ्वी थियेटर' की नीव रखी। इसी वर्ष पृथ्वी थियेटर के बैनर तले कालिदास द्वारा लिखित नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् का हिंदी भाषा में मंचन हुआ। इसके बाद 'दीवार' और 'पठान' नामक हिंदी नाटक प्रदर्शित हुए, जिनके सैकड़ों शो हुए और खूब लोकप्रियता हासिल की। पृथ्वीराज को इन सफलताओं से खूब प्रेरणा मिली।

1944 और 1956 के बीच, उन्होंने सात मूल नाटकों का मंचन किया, जिसमें 'गद्दार', 'आहुति', 'कलाकार', 'पैसा' जैसे लोकप्रिय नाटक शामिल है और देश के तमाम नगरों में इन नाटकों के सैकड़ों शो हुए। उनके नाटक सामाजिक रूप से प्रासंगिक थे, जो समय की चिंताओं को संबोधित करते थे। पृथ्वी थियेटर ने 16 से अधिक वर्षों तक हिंदी नाटकों का मंचन किया। उनमें हिंदू-मुस्लिम एकता पर आधारित 'पठान' सबसे प्रसिद्ध नाटक था। द लल्नटॉप वेबपेज पर प्रकाशित ए रिपोर्ट के अनुसार, " 'पठान' के आर्किटेक्ट थे रणबीर कपूर के पर-दादा पृथ्वीराज कपूर, उनका साथ दिया था राइटर लालचंद बिस्मिल ने। पहली बार इसे 13 अप्रैल 1947 को बॉम्बे के रॉयल ओपेरा हाउस में दिखाया गया। पृथ्वीराज ने 'शेर खान' की भूमिका निभाई और क्या कमाल निभाई! प्ले देखने के बाद दिग्गज फिल्ममेकर के.ए. अब्बास ने इसे पृथ्वीराज का सबसे बेहतरीन काम बताया था। उनका कहना था, 'उन्होंने ऐसा कमाल काम किया कि किरदार और

कलाकार में फ़र्क करना मुश्किल हो जाता है।"[5] उन्होंने फिल्म में काम करते हुए भी नियमित रूप से थिएटर में काम करना जारी रखा। फिल्म निर्देशक रामानंद सागर, संगीत रचना करने वाले युगल शंकर-जयकिशन, संगीत निर्देशक राम गांगुली सहित अन्य अभिनेता और अन्य फिल्मी हस्तियां, पृथ्वी थियेटर का हिस्सा थी। "पृथ्वी थियेटर के बहुचर्चित कुछ प्रमुख नाटकों में 'दीवार', 'पठान' (1947), 'गद्दार' (1948) और 'पैसा' (1954) शामिल हैं। पृथ्वीराज ने अपने थिएटर के जरिए कई छुपी हुई प्रतिभाओं को आगे बढ़ने का मौका दिया, जिसमें रामानंद सागर और शंकर जयकिशन जैसे बड़े नाम शामिल हैं।"[6] सन् 1950 ई. के पहले तक 'पृथ्वी थियेटर' पूरे देश के अलग-अलग हिस्सों में जाकर अपनी प्रस्तुति करता रहा। उसके बाद दर्शकों और कलाकारों का रुझान फिल्म की ओर बढ़ने के कारण 'पृथ्वी थियेटर' घाटे में जाने लगा। यही कारण रहा कि धीरे-धीरे 'पृथ्वी थियेटर' कुछ समय के लिए बंद सा हो गया। इसके बावजूद भी पृथ्वीराज कपूर रंगमंच को जी-जान से चाहते रहे। आर्थिक तंगी और दर्शकों के अभाव के कारण वर्ष 1960 में पृथ्वी थियेटर पूर्ण रूप से बंद कर दिया गया।

विपल्व विनोद का कहना है कि "फिल्मों में जाने से पूर्व कपूर परिवार के सभी सदस्यों ने पृथ्वी थियेटर के मंच पर अभिनय किया। इन्होंने अपने जीवनकाल में 260 मंचीय कलाकार और शिल्पी खोजे- जिनमें से अधिकांश कालांतर में जीविकोपार्जन के लिए फिल्मों में चले गए।"[7] पृथ्वी थियेटर से जुड़े कलाकारों में ज़ोहरा सहगल, राज कपूर, प्राण, शम्मी कपूर और इंदर राज आनंद जैसे तमाम चर्चित नाम शामिल हैं। ये नाट्य-दल एक संयुक्त परिवार की तरह था जिसके सरपरस्त पृथ्वीराज उर्फ भाषाजी

---

[5] https://www.thelallantop.com/entertainment/post/prithviraj-kapoor-maintained-communal-harmony-throught-pathaan 10 फरवरी 2023, 18:45 IST

[6] विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, 2013, पृष्ठ-64

[7] वही

थे, जो फिल्मों से पैसा कमाकर आजीवन रंगमंच पर लगाते-गवाते रहे।[8] भारतीय जन नाट्य संघ (इप्टा) की तरह पृथ्वी थियेटर का भी अपना एक मानवतावादी दृष्टिकोण था। अपने समय में देश के विभिन्न राज्यों में नागरिकों के समक्ष आए संकटों को दूर करने में पृथ्वीराज कपूर और उनका पृथ्वी थियेटर अहम भूमिका निभाता था। पृथ्वी थियेटर के माध्यम से हुए नाटकों के बाद पृथ्वीराज स्वयं लोगों के बीच उपस्थित होते और आर्थिक मदद की गुहार लगाते। इन पैसों से अपने थियेटर का खर्च निकालते थे। रंगमंच और सिनेमा के उनके कार्यों से उनके समाजसेवी व्यक्तित्व की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

सिनेमा: मूक सिनेमा 'सिनेमा गर्ल' से फिल्मी कैरियर की शुरूआत करने के बाद 1930 के दशक के में पृथ्वीराज ने कोलकाता में 'न्यू थियेटर्स' द्वारा निर्मित कई फिल्मों में मुख्य भूमिका निभाई। वर्ष 1933 में पृथ्वीराज कपूर कोलकाता के मशहूर 'न्यू थियेटर' के साथ जुड़े। वर्ष 1933 में प्रदर्शित फिल्म 'राजरानी मीरा' और वर्ष 1934 में देवकी बोस की फिल्म 'सीता' की कामयाबी के बाद बतौर अभिनेता पृथ्वीराज कपूर अपनी पहचान बनाने में सफल हो गये।[9] 1930 के दशक में चंदूलाल शाह के रंजन स्टूडियो द्वारा निर्मित कई मेलोड्रामा में उन्होंने काम किया। आर्देशिर ईरानी द्वारा निर्देशित भारत में पहली सवाक सिनेमा 'आलम-आरा' में पृथ्वीराज कपूर ने सहायक अभिनेता के तौर पर कार्य किया था। इस समय तक पृथ्वीराज कपूर अपने स्ट्रगल के दौर से गुजर रहे थे। उनकी पहली बड़ी सफल फिल्म 'देबकी बोस' की 'राजरानी मीरा' (1933) थी। अगले कुछ वर्षों में 'सीता' (1934), 'मंज़िल' (1936), 'राष्ट्रपति' (1937), और 'विद्यापति' (1937) जैसी कई सफल फ़िल्में आयी। पृथ्वीराज ने सिनेमा में

---

[8] वही

[9] वही, पृष्ठ-63-64

सकारात्मक चरित्र के साथ-साथ नाकारात्मक चरित्र भी किये। जिसमें वे सबसे पहले सन् 1940 में आई फिल्म 'पागल' में नकारात्मक चरित्र में दिखाई दिये। इसी क्रम में आगे बढ़ते हुए पृथ्वीराज कपूर ने सन् 1941 में फिल्म 'सिकंदर' में मूख्य भूमिका निभाई। इस फिल्म के किरदार में पृथ्वीराज कपूर ने अपने अभिनय के माध्यम से ऐसी जान डाली कि फिल्म 'सिकंदर' और 'पृथ्वीराज कपूर' दोनों को भारतीय फिल्म के इतिहास में उच्च दर्जा प्राप्त हुआ। इस संदर्भ में विप्लव विनोद का कहना है, वर्ष 1941 में सोहराब मोदी कि फिल्म 'सिकंदर' की सफलता के बाद पृथ्वीराज कपूर कामयाबी के शिखर पर जा पहुंचे।[10] जागरण वेब पर प्रकाशित लेख के अनुसार, "विद्यापति (1931), सिकंदर (1941), दहेज (1950), आवारा (1951), जिंदगी (1964), आसमान महल (1965), तीन बहूरानियां (1965) आदि फिल्मों में पृथ्वीराज ने अपने दमदार अभिनय का जौहर दिखाया लेकिन उनकी सबसे यादगार फिल्म है "मुग़ल ए आज़म"। इस फिल्म में पृथ्वीराज कपूर ने बादशाह अकबर के किरदार को अमर कर दिया।"[11] के. असिफ द्वारा निर्देशित सन् 1960 में प्रदर्शित फिल्म 'मुग़ल-ए-आज़म' जो उस समय की सबसे बड़ी बजट की फिल्म थी। जिसके मुख्य किरदार दिलीप कुमार थे तथा उनके पिता की भूमिका पृथ्वीराज कपूर ने निभाई। इस फिल्म को लोग याद करते ही पृथ्वीराज की छवि को अपने दिमाग में उतार लेते हैं। उन्होंने अपने दमदार अभिनय से अकबर के किरदार को अमर कर दिया। पृथ्वीराज कपूर ने समाजिक कार्यों में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। अमर उजाला ई-पत्रिका 17 अगस्त 2020 में प्रकाशित लेख जो पृथ्वीराज के महान व्यक्तित्व को उजागर करता है। उसके अनुसार "'मुग़ल-ए-आज़म' बनने में

---

[10] विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, पृष्ठ-64

[11] https://www.jagran.com/blogs/entertainment/prithviraj-kapoor-profile-in-hindi/ 20 May 2020 08:55 AM IST

काफी विलंब हो रहा था, कई वजहें थी, जिसकी चर्चा होती रहती थी। जिसमें एक वजह ये भी थी कि फिल्म में स्टारकास्ट में पृथ्वीराज का नाम पहले आने वाला था और ऐसा कहा जाता था कि इसको लेकर दिलीप कुमार और मधुबाला में एक तरह से नाराज़गी भी थी।

जब इस बारे में पृथ्वीराज को पता लगा तो उन्होंने फिल्म के निर्देशक आसिफ़ को कहा था, 'क्यों छोटे मोटे झगड़ों में फंसकर फिल्म लटका रहे हो? मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता, इन दोनों के नाम मुझसे पहले और बड़े अक्षरों में लिख दो।'

इस पर आसिफ़ ने जवाब में कहा था, 'दीवानजी, मैं मुग़ल-ए-आज़म बना रहा हूं, सलीम-अनारकली नहीं। यह बात इन दोनों में से किसी को समझ नहीं आती। मेरी इस फिल्म का केवल एक हीरो है और वो है अकबर द ग्रेट।"[12]

एक दूसरी घटना- के. आसिफ़ ने पृथ्वीराज को अनुबंध के तौर पर एक कोरा चेक दिया तो पृथ्वीराज ने कहा, 'जहां इतना कुछ लिखा है, वहां रक़म भी लिख देते।' इस पर के. आसिफ़ ने कहा, 'तो यह बताइए इसमे कुल रकम कितनी लिखूं।' इसके बाद पृथ्वीराज ने कहा, 'क्या तुम नहीं जानते।', तो के. आसिफ़ ने कहा, 'जानता तो पूछता नहीं।' के. आसिफ़ का जवाब सुनकर पृथ्वीराज कपूर ने कहा, 'अच्छा तो फिर कोई रकम लिख लो, मुझे मंजूर होगा।' जिस पर के. आसिफ़ ने कहा, 'नहीं दीवानजी, ऐसा मत कहिए। सबने अपनी कीमत लगाई। दिलीप कुमार, मधुबाला, दुर्गा खोटे फिर आप क्यों..?' ये सुनकर पृथ्वीराज बोले- 'नहीं मेरी कीमत तुम खुद लगाओगे। मैं भी

---

12 https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/throwback-of-prithviraj-kapoor-and-madhubala-dilip-kumar-starrer-1960-bollywood-movie-mughal-e-azam?pageId=4 17 Apr 2020 08:23 AM IST

तो अभी तक अपनी कीमत नहीं लगा पाया।'[13] सन् 1971 ई. में आई फिल्म 'कल आज और कल' पृथ्वीराज कपूर की आखरी फिल्म मानी जाती है। सन् 1972 ई. में एक महान शख्सियत और उमदा कलाकार पृथ्वीराज कपूर ने अपने जीवन की आखरी साँस ली। (पृथ्वीराज कपूर द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 1 देखें)

5.2. श्रीराम लागू

रंगमंच: मेडिकल क्षेत्र से जुड़े डॉ श्रीराम लागू ने रंगमंच को भी दिल से अपना समय दिया। 18 दिसंबर 2019 को प्रकाशित बीबीसी की एक रिपोर्ट के अनुसार "42 साल की उम्र में उन्होंने थिएटर और फ़िल्मों की दुनिया में कदम रखा। 1969 में वह पूरी तरह मराठी थिएटर से जुड़ गए।"[14] रंगमंच के प्रति उनके दिल में कितना प्यार था? इस संदर्भ में दुरदर्शन के एक साक्षात्कार में कही गई बात से पता चलता है, "In an interview to Doordarshan, Lagoo confessed that he might have quit medical college if an institution like the National School of Drama had been available to him at the time."[15] सन् 1969 ई. में लागू मेडिकल लाइन को अलविदा कहते हुए भारत लौट आये और उन्होंने हमेशा के लिए अपना जीवन रंगमंच को समर्पित कर दिया। कुछ समय के संघर्ष और पुरानी मेहनत के अभ्यास के दम पर उन्होंने एक मराठी नाटक में मराठा राजा शिवाजी के पुत्र 'संभाजी' की भूमिका निभाई। यह नाटक व्यावसायिक दृष्टि से सफल नहीं रहा लेकिन इस नाटक ने 'श्री राम

---

[13] वही

[14] https://www.bbc.com/hindi/india-50830103 18 दिसंबर 2019

[15] https://scroll.in/reel/947154/shriram-lagoo-1927-2019-acting-legend-and-rationalist-leaves-behind-a-rich-and-complex-legacy 17 Dec. 2019

लागू' को एक बेहतर अभिनेता के रूप में लोगों के समक्ष ज़रूर प्रस्तुत किया। उन्होंने बसंत कानेटकर के चर्चित नाटक 'वेदयाचे घर अनहत' में अभिनय किया और वह नाटक खूब चर्चित हुआ। इस नाटक में श्रीराम लागू के श्रेष्ठ अभिनय के लिए इनकी खूब सराहना हुई। चिकित्सा से रंगमंच की तरफ लौटने के बाद वे एक मंझे हुए कलाकार की तरह एक के बाद एक नाटकों में काम करने लगे।

रंगमंच की दुनिया में उनका नाम उस समय एक ऊँचाई को छूता है जब वो वी. वी. शिरवाडकर के नाटक 'नटसम्राट' में 'गणपतराव बेलवल्कर' की भूमिका निभाते हैं। जयदेव तनेजा के अनुसार "गिधाड़े के सफल और प्रभावशाली अभिनय-निर्देशन ने श्रीराम लागू के लिए एक ओर निर्देशन के द्वार खोले तो दूसरी ओर मराठी के व्यावसायिक रंगमंच पर उन्हें एक अभिनेता के रुप में प्रतिष्ठित भी कर दिया। 'हिमालयी सांवली' में गुंडो गोविन्द भानु की, महेश एककुंचवारे के नाटक 'आत्मकथा' में राजाध्यक्ष के रुप में वृद्ध चरित्रों की इनकी भूमिकाएं विशेष रुप से सराही गयीं। संगीत नाटक अकादमी और भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित शिराडकर के बहुचर्चित नाटक 'नट सम्राट' के तो लगभग 300 प्रदर्शन इन्होंने किये।"[16] सन् 1970 ई. में खेला गया यह नाटक इतना सफल रहता है, खास कर लागू द्वारा निभाये गये किरदार की मराठी रंगमंच दुनिया में लोग 'श्री राम लागू' को 'नटसम्राट' के नाम से संबोधित करने लगते हैं और आज भी करते हैं। नटसम्राट नाटक में उन्होंने गणपतबेलवलकर की भूमिका निभाई थी जिसे मराठी थियेटर के लिए मील का पत्थर माना जाता है। दरअसल गणपत बेलवलकर का रोल इतना कठिन माना जाता है कि इस रोल को निभाने वाले बहुत सारे थियेटर एक्टर गंभीर रूप से बीमार हुए। नटसम्राट के इस रोल के बाद डॉक्टर लागू को भी

[16] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 292

दिल का दौरा पड़ा था।[17] सन् 1970 ई. से 'श्रीराम लागू', रंगमंच की दुनिया मे एक बहुत बड़ा नाम उभर कर आता है। जो कि खुद अपनी मेहनत के दम पर रंगमंच के उच्च पड़ाव पर कदम रखता है। नटसम्राट की प्रस्तुति के बाद उनके लिए नाट्य जगत में अनेकों द्वार खुल गये। उन्हें अनेकों मराठी नाटकों में कार्य करने का मौका मिला। उनके द्वारा किये गये प्रमुख मराठी नाटक:

1. 'मादी',
2. 'मी जिंकालो मी हादी'
3. 'एक होता राम'
4. 'यशोदा'
5. 'आधे-अधूरे'
6. 'आक्रामक'

Shriram Lagoo was seen in his Marathi theatre:

1. Vedyache Ghar Unhat
2. Jagannathacha Rath
3. Gidhade
4. Kachecha Chandra
5. Himalayachi Sawali
6. Natsamra
7. Surya Pahilela Manus
8. Garbo

---

[17] https://www.bbc.com/hindi/india-50830103 18 दिसंबर 2019,

9. Atmakatha
10. Kanyadaan
11. Pappa Saanga Kunache!
12. Premachi Goshta?
13. Khoon Pahava Karoon
14. Dubhang
15. Sundaar Mi Honaar
16. Kirwant
17. Mitra[18]

इसके साथ ही उन्होंने 'विजय तेंदुलकर', 'विजय मेहता' और 'अरविंद देशपांडे' जैसे बड़े नाटककारों के साथ मिलकर रंगमंच में अपना बखूबी योगदान निभाया। श्री राम लागू ने अपने 92 वर्ष के जीवन काल में हिंदी तथा मराठी दोनों भाषाओं की फिल्मों में काम किया। इन्होंने मराठी रंगमंच को नई दृष्टि प्रदान करने में अहम भूमिका निभाई। सिनेमा में नाम, फ़ेम, पैसा कमाने के बाद भी लागू ने दिल में हमेशा रंगमंच को बसाये रखा। रंगमंच के प्रति उनके दिल में क्या जगह थी यह उनके साक्षात्कार में पूछे गये सवाल के उत्तर से समझ आता है।

प्रश्न: "आपका नाम भारत के गिने-चुने रंगमंच कलाकारों में आता है। जब आप फिल्मों में आ गये तो ज़ाहिर है कि थियेटर की ऑडियंश आपकी कमी महशूश करती होगी?

[18] https://www.ndtv.com/entertainment/veteran-actor-shriram-lagoo-cremated-with-state-honours-urmila-matondkar-nana-patekar-and-others-att-2151940 Aug 20, 2020 19:38 pm IST

उत्तर: मुझे ये मालूम नहीं कि ऑडियंश को मेरी कमी महसूस होती है कि नहीं लेकिन एक बात सही है कि मुझे बहुत कमी महसूस होती है। जब मैं हिंदी फिल्मों में बहुत मशहूर हो गया तो एक अरसा ऐसा आया कि कम से कम ढाई साल तक मैं बिल्कुल ही थियेटर नहीं कर पाया। तब मुझे यह महसूस हुआ कि मेरे जीवन में ये बहुत गलत चीज़ हो रही है। ...और मैं वापस रंगमंच की दुनिया में आया और हर रविवार मैं रंगमंच को समय देने लगा।"[19] श्रीराम लागू ने नाटक वेद्‌यचे घर उन्हात, जगन्नाथ रथ, गिधाडे, कच्चेचा चंद्र, हिमालयाची सवाली, नटसम्राट, सूर्य पहिलेला मनुस, आधे अधूरे, गार्बो, आत्मकथा, कन्यादान, पप्पा सांगा कुनाचे!, प्रेमाची गोष्टा, खून पहावा करूं, दुभांग, सुन्दर मी होनार, किरवंत, मित्रा, इथे ओषधला मृत्यु में भी कार्य कर अपनी हुनर का परिचय दिया। भारतीय कला जगत में श्री राम लागू का वह योगदान रहा है जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता।

सिनेमा: लागू की पहली सफल फिल्म 'पिंजर' मानी जाती है। जो की मराठी भाषा में बनी थी। वी. शांताराम की फिल्म 'पिंजर' (1972) में मुख्य भूमिका निभाने वाले श्रीराम लागू ने फिल्म 'पिंजर' में एक शिक्षक के रूप में शानदार प्रदर्शन किया। इस चरित्र को दर्शकों एवं प्रशंसकों द्‌वारा भरपूर प्यार मिला। जिसने उनको, उनके फिल्मी सफ़र में प्रोत्साहित किया। उनकी अन्य मराठी फिल्मों में सामना (1974), कठपुतली (1976), भिंगरी (1977), 'सिंहासन' (1979), ज़ाकोल (1980), खिचड़ी (1982), गुपचुप-गुपचुप (1983), मुक्ता (1994), मसाला (2012), नागरिक (2015), शासन (2016) शामिल है। लागू ने सिनेमा के माध्यम के अनुरूप अपनी प्रतिभा को ढालने में कोई कमी नहीं रखी और यही कारण है सिनेमा जगत में भी बहुत कम समय

---

[19] https://youtu.be/L5skA6FYtpY Tabassum Talkies, The Legend of Dr Shriram Lagoo, 3 April 2017

में लागू द्वारा किये गये अभिनय की तूती बोलने लगी। रंगमंच से मराठी फिल्मों तक का सफर करने वाले लागू बहुत जल्द बॉलीवुड फिल्म इंडस्ट्री में भी अपना लोहा मनवाने में कामयाब रहें।

लागू के लिए फिल्म 'घरौंदा' (1977) सफलता की अपार सीमा तक पहुँची। फिल्म 'घरौंदा' में सहायक अभिनेता के तौर पर निभाये गये किरदार के लिए श्री राम लागू को 'फिल्म फेयर' पुरस्कार से नवाज़ा गया। "श्रीराम लागू ने फ़िल्मों में कई यादगार रोल किए। मसलन 1977 की फ़िल्म घरौंदा का वो उम्रदराज़ बॉस (मिस्टर मोदी) जो अपने ऑफ़िस में काम करने वाली एक युवा लड़की (ज़रीना वहाब) से शादी करता है।"[20] घरौंदा फिल्म में उम्रदराज व्यक्ति के किरदार को जीवंत करने के लिए श्रीराम लागू की प्रशंसा करते हुए बीबीसी की टी.वी. एडिटर, वंदना अपने एक लेख में लिखती हैं कि "ये रोल आसानी से नेगेटिव शेड ले सकता था लेकिन श्रीराम लागू इसे बड़ी नज़ाकत से निभाते हैं। घरौंदा के लिए उन्हें फिल्मफेयर सर्वश्रेष्ठ सह-अभिनेता का अवार्ड मिला था।"[21] हिंदी सिनेमा में उनकी उल्लेखनीय फिल्मों में 'देश प्रदेश' (1978), 'मुकद्दर का सिकंदर'(1978), 'लावारीस' (1981), 'इंकार' (1977), 'साजन बिन सुहागन' (1978), 'खुद्दार' (1994), 'घर दुआर' (1985) आदि शामिल है। जिसमें निभाये गये किरदार के दम पर हिंदी फिल्मी दर्शक भी श्री राम लागू को एक उच्च कोटि का कलाकार मानते है। (श्रीराम लागू द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 2 देखें)

5.3. ओम शिवपुरी

---

[20] https://www.bbc.com/hindi/india-50830103 18 दिसंबर 2019

[21] वही

रंगमंच: 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के पूर्व छात्र रहे ओम शिवपुरी अपनी बाल्य अवस्था से रंगमंच से जुड़े रहे तथा नाट्य प्रस्तुतियों में भाग लिया करते थे। इस काल से ही इनके द्वारा किये गये अभिनय को लोगों द्वारा खूब सराहा जाता था। सिनेप्लोट वेबसाइट पर उल्लेख एक लेख के अनुसार, "He had acted in a play as a girl. And His performance was so good that everyone thought he was a girl."[22] जयदेव तनेजा के अनुसार, "तेरह वर्ष की आयु में इन्होंने अपने जीवन के पहले नाटक रानी कर्णावती में केन्द्रीय चरित्र विधवा रानी कर्णावती की इतनी प्रभावशाली भूमिका निभाई कि इन्हें दर्जनों पुरस्कार मिले।"[23] इस तरह से वे अपने स्कूल और कॉलेज फंक्शन में भी नाटक किया करते थे। अपनी प्रतिभा और लगन के दम पर 'ओम' हर सभा में आकर्षण का केंद्र बनने लगे। जोधपुर से जयपुर पहुंचने के बाद 'ओम' की सक्रियता कुछ और बढ़ गयी। नाटक में बेहतरीन क्षमता होने के कारण ओम शिवपुरी को 'ऑल इंडिया रेडियो', जयपुर में बतौर अभिनेता, नौकरी मिल गई। नौकरी के दौरान ही इनकी मुलाकात सुधा शिवपुरी से होती है, जो ऑल इंडिया रेडियो, जयपुर में ही बतौर अभिनेत्री नियुक्त थी। दोनों साथ मिलकर नाटक करने लगे। जयपुर में पिंचू कपूर, एच.पी.सक्सेना, रणबीर सिंह, सरताज माथुर आदि के साथ मिलकर ओम ने अनेक नाटक किए। इब्राहीम अल्काजी ने इन्हें एक नाट्य- प्रतियोगिता में 'नेफा लद्दाख हमारा है' नामक नाटक में अभिनय करते देखकर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली में प्रशिक्षण के लिए आने की प्रेरणा/सलाह दी।[24] इस तरह कुछ समय काम करने के बाद ओम जी 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में आवेदन करते हैं और

[22] https://cineplot.com/om-shivpuri-memories/ 09 Sep. 2020

[23] तनेजा, जयदेव, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 327

[24] वही, पृ. 328

इनका नामांकन हो जाता है। उन दिनों 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के निर्देशक इब्राहीम अल्काज़ी थे। वहाँ ओम जी को अच्छी तरह से नाट्य शिक्षा की बारिकीयों को सीखने का मौका मिला। सन् 1964 ई. में ओम शिवपुरी 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' से अपना कोर्स समाप्त करने के बाद, वहीं रेपेटरी में बतौर अभिनेता हिस्सा बन नाटकों में काम करने लगे। ओम शिवपुरी नाट्य विद्यालय के पहले छात्र रहे जिन्होंने रिपेटरी की शुरूआत में अपना योगदान दिया। इतना ही नहीं उन्हें रिपेटरी कंपनी का प्रमुख भी बनाया गया। सन् 1976 ई. तक ओम जी ने बड़ी मेहनत और लगन के साथ उसे खड़ा किया। इस संदर्भ में मोहन राकेश का कहना है, "Om Shivpuri were National School of Drama graduates and founder members of the school's Repertory Company, for which they played the lead roles in Karnad's Tughlaq, Rakesh's Laharon ke rajhans, and Sophocles' Antigone–all in 1966."[25]

नाट्य संस्था की शुरूआत: ओम शिवपुरी ने सन् ने 1968 ई. में दिल्ली में रामगोपाल बजाज, बी.वी.कारंत, सुधा शिवपुरी आदि के साथ मिलकर 'दिशांतर' नाट्य संस्था की शुरूआत की। दिशांतर नाट्य संस्था का हिन्दी रंगमंच के विकास में बहुत बड़ा योगदान रहा है। बहुत ही कम समय में दिशांतर 'इंडियन पिपुल थियेटर एशोशियेशन (ईप्टा)' और 'पृथ्वी थियेटर' के बराबर आ खड़ा हुआ। आज भी दिशांतर की गिनती महत्वपूर्ण रंगमंच संस्थाओं में की जाती है। ओम शिव पुरी ने अपनी नाटय संस्था 'दिशांतर' से बतौर निर्देशक भी अनेक नाटकों में भूमिका निभाई। प्राबुक वेबसाइट पर पर प्रकसशित लेख के अनुसार, "Dishantar, which went on to become one of

[25] Rakesh Mohan, Natak, One Day in the Session or Rain, P.-xi

Delhi pioneering important theatre groups of its era and produced many play with him as a director, the most important being Aadhe Adhure, a classic Hindi play written by Mohan Rakesh; Khamosh! Adalat Jari Hai, Hindi version of Vijay Tendulakar's Marathi play Shantata! Court Chalu Aahe, with his wife Sudha Shivpuri in the lead role; and their most famous production, Grish Karnad's historical plat Tughlaq, which was performed at ridges of Talkatora Gardens, New Delhi."[26]

नाट्य मंचन: ओम शिवपुरी के जीवन काल के प्रमुख नाटकों में 'ट्रॉजन वूमन', 'तुग़लक', 'लहरों के राजहंस', 'वेटिंग फॉर गोदो', 'एण्टीगनी', 'आधे अधूरे', 'खामोश अदालत जारी है', 'शारदीया', 'इडिपस', 'आषाढ़ का एक दिन', 'अंधायुग', 'किंग लीयर', 'द फायर', 'सुनो जनमेजय', 'कंजूस' शामिल है। ओम शिवपुरी नाटकों में अनेक तरह की भूमिका निभाया करते थे। सबसे कम उम्र में 'किंग लीयर' की भूमिका निभाने वाले अभिनेता में ओम शिव पुरी का नाम शेक्सपीयर कंपनी के रिकार्ड बुक में शामिल है। रिसर्चगेट पर प्रकाशित एक शोध पत्र के अनुसार, "The twenty-eight-year-old Indian actor Om Shivpuri played Lear in a professional production by the National School of Drama in Delhi, directed by Ebrahim Alkazi, in 1964 (Alkazi)."[27] नाट्य संस्था में जुड़े रहने के दौरान ही उन्हें अनेक सिनेमा के ऑफर आये लेकिन ओम शिवपुरी की रुची सिनेमा में न होने के कारण वे रंगमंच में

---

[26] https://prabook.com/web/om.shivpuri/726764 07 Oct. 2020

[27] https://www.researchgate.net/publication/371006813_'Upon_a_Wheel_of_Fire'_Performing_King_Lear_on_Stage_and_on_Screen_King_Lear_ed_Michael_Best_and_Alexa_Alice_Joubin_Petersborough_ON_Canada_Broadview_Press_2023_pp_51-80 July 2023

लीन रहे। सुधा शिवपुरी उनके अपने एक साक्षात्कार में बताती हैं- “All along, he was offered many films but he never accepted them, Theatre was his life. Acting and directing plays were his soul. But after our writer’s death, he signed two films – Jeevan Sangram and Koshish.”[28] ओम शिवपुरी अपने जीवन काल के अंतिम क्षण तक अभिनय से जुड़े रहें।

सिनेमा कार्य: सिनेमा में अपने कैरियर की शुरूआत के लिए सन् 1974 ई. में वे मुंबई में आ बसे और एक वर्ष के भीतर उनकी झोली में लगभग सात-आठ फिल्में थी। उनकी पहली चर्चित फिल्म गुलज़ार की ‘कोशिश’ रही। उसके बाद ‘जीवन संग्राम’ और फिर ‘नमक हराम’। फिल्म कोशिश के पहले भी ओम शिव पुरी निर्देशक ‘मणि कौल’ की फिल्म ‘आषाढ़ के एक दिन’ में काम कर चुके थे जो की सन् 1971 ई. में रिलीज़ हुई थी लेकिन फिल्म ‘कोशिश’ से ओम जी को राष्ट्रीय पहचान मिली। “सन् 1971 में ओम शिवपुरी ने बॉलिवुड में कदम रखा। उनकी पहली फिल्म ‘आषाढ़ का एक दिन’ थी। ...उन्होंने दो दशक तक फिल्म इंडस्ट्री में काम किया। इस दौरान लगभग 175 फिल्मों में काम किया। जिनमें से ज्यादातर में वे विलन के रूप में नज़र आये।”[29] “1974 में वो मुंबई शिफ्ट हो गए। उन्होंने दो दशक तक फिल्म इंडस्ट्री में कार्य किया। उन्होंने 175 मूवी में अदाकारी की, जिनमें से अधिकतर में वो विलेन के रोल में दिखाई दिए।”[30] (ओम शिवपुरी द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 3 देखें)

---

[28] https://cineplot.com/om-shivpuri-memories/ 09 Sep. 2020

[29] https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/actor-om-shivpori-death-anniversary-know-about-his-personal-and-professional-life?pageId=3 15 Oct 2019 04:42 PM IST

[30] https://www.newstracklive.com/news/om-shivpuri-death-anniversary-sc87-nu901-ta901-1407461-1.html Oct 15 2020 02:04 AM

ओम शिवपुरी द्वारा निभाये गये किरदार बहुत ही सराहनीय रहे हैं। रंगमंच में उनके द्वारा दिया गया योगदान हिंदी रंगमंच के विकास में अनेक महत्वपूर्ण एवं सार्थक है। ओम की फिल्मों में सफलता का कारण उनका रंगमंच से गहरा जुड़ाव, बहुमुखी प्रतिभा, लगन, एनएसडी का प्रशिक्षण, अल्काजी की प्रेरणा- विश्वास और निरंतर अभ्यास था।

5.4. गिरीश कर्नाड

रंगमंच: गिरीश कर्नाड एक श्रेष्ठ अभिनेता, कुशल निर्देशक, समय के साथ चलने वाले नाटककार और मुखर व्यक्तित्व के स्वामी थे। विभिन्न प्रकार की शिक्षा और दायित्वों के निर्वहन ने कर्नाड को नाट्यकला में असाधारण सोच का स्वामी बना दिया। "उनका पहला कन्नड़ नाटक 'ययाति', 1961 में प्रकाशित हुआ। मैसूर राज्य पुरस्कार से सम्मानित होने के बावजूद अधिकांश रंगकर्मियों-समीक्षकों ने इसकी ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।"[31] ययाति नाटक को लेकर समीक्षकों के उदासीन रवैये से गिरीश कर्नाड निराश नहीं हुए और आगे चलकर 'तुग़लक' नाम का एक ऐतिहासिक नाटक लिखा। यह नाटक राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रंगमंडली द्वारा जाने-माने रंगकर्मी ओम शिवपुरी के निर्देशन में दिल्ली में भव्य रुप में मंचित हुआ और दर्शकों द्वारा खूब पसंद किया गया। इस प्रकार 'तुग़लक' नाटक और 'कर्नाड' दोनों का नाम राष्ट्रीय फलक पर स्थापित हो गया। इसके बाद कर्नाड ने 'हयवदन' नामक नाटक लिखा, जिसे 1972 में ब.व.कारंत ने अपनी नाट्य संस्था 'दिशांतर' और सत्यदेव दुबे ने 'थियेटर यूनिट' के द्वारा प्रस्तुत किया। दिशांतर और थियेटर युनिट ने क्रमशः दिल्ली और मुम्बई में अपनी अलग-अलग शैलियों में इस नाटक को मंचित किया और नाटक खूब सफल

[31] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 70

साबित हुआ। गिरीश अपने नाटकों की रचना प्रायः कन्नड़ या अंग्रेजी में करते थे। उनके नाटकों के विषय इतने मनमोहक और ज्वलंत होते थे कि देशभर के जाने-माने निर्देशकों के लिए आकर्षण का विषय बन जाते थे। इनके नाटकों का उर्दू, हिंदी और पंजाबी आदि भाषाओं में अनुवाद होता था और मंचन के पश्चात तमाम भाषी दर्शकों द्वारा खूब सराहा जाता था। जयदेव तनेजा इस संदर्भ में कहते हैं, "गिरीश कर्नाड के बहुचर्चित नाटक 'अग्नि और बरखा' का कथाबीज महाभारत के वनपर्व की एक छोटी सी अवांतर कथा से लिया गया है। इसे नाटककार ने अमरीका के मिन्यापोलिस के प्रसिद्ध 'गथरी थियेटर' के निमंत्रण पर वहीं रहकर अंग्रेजी में लिखा और 1994 में वहीं एक रंग-शिविर में अमरीकी अभिनेताओं के साथ प्रस्तुत भी किया। ईर्ष्या, घृणा, प्रतिशोध, चमत्कार, विश्वासघात, अनैतिक देह-संबंध और हत्या की परम नाटकीय घटनाओं पर आधारित यह दिलचस्प नाटक हिंदी में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रंगमंडल द्वारा प्रसन्ना के निर्देशन में 1996 में प्रस्तुत किया गया। इसे हिंदी के अतिरिक्त कन्नड़, पंजाबी और अंग्रेजी में भी अभिमंचित किया जा चुका है।"[32] नाटक 'तुग़लक' सन् 1964 के प्रकाशन के बाद गिरीश कर्नाड को देश के सबसे होनहार नाटककारों की सूची में जगह मिल गई। इससे इनकी लेखन की महानता को अच्छी तरह समझा जा सकता है कि इनके नाटकों को अंग्रेजी, हिंदी तथा देश के अन्य भाषाओं में अनुवाद कर 'इब्राहिम अल्काजी', 'बी. वी. कारांत', 'प्रसन्ना', 'अरविंद ग़ौर', 'सत्यदेव दुबे', 'विजय मेहता', 'श्यामानंद जालान' आदि जैसे बड़े निर्देशकों द्वारा खेला जाने लगा।

कर्नाड, लगभग चार दशक तक समकालीन विषयों से निपटने के लिए इतिहास और पौराणिक कथाओं का उपयोग करते हुए नाटक की रचना करते रहे। ययाति (1961),

[32] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 73

तुगलक (1964), हयवदना (1971), अंजुमलिगे (1977), " हितिना हुंजा उर्फ बाली (1980), नागमंडला (1988), तेलेदण्ड (1990), अग्नि मट्टू माले (1995), टीपू सुल्तान कंडा कनासु, ओडाकालू बिम्बा (2006), मदुवे एल्बम (2006), फूल (2012), टोस्ट पर बेंदा कालू (2012), राक्षस तांगड़ी (2018) उनके द्वारा रची गई। मुख्य रचनाओं में ययाति, तुग़लक, हयवदन, तलेदंड, नागमंडल शामिल है। जो उन्हें अंतरराष्ट्रीय ख्याति दिलवाने में मदद करती हैं।

गिरीश कर्नाड का रंगमंच और सिनेमा में कार्य करने के साथ ही विभिन्न प्रकार की अन्य गतिविधियों में विशेष योगदान रहा है। ऑक्सफोर्ड प्रेस, चेन्नई से इस्तीफा देने के बाद उन्होंने कुछ समय शौकिया थियेटर के साथ काम किया। सन् 1974 से 1975 तक फिल्म एंड टेलीविज़न इंस्टीट्यूट, पुणे के निर्देशक भी रह चुके हैं। सन् 1987 ई. में वो शिकागो विश्वविद्यालय में गेस्ट फैकल्टी के रूप में भी कार्यरत रहे। सन् 1988 ई. से 1993 ई. में 'संगीत नाटक अकादमी' और सन् 1976 ई. से 1978 ई. तक 'कर्नाटक नाट्य अकादमी' के अध्यक्ष भी रहे। सन् 2000 से 2003 तक वे नेहरू केंद्र के निदेशक और भारतीय उच्चायोग लंदन में उन्होंने संस्कृति मंत्री के रूप में कार्य किया। 10 जून 2019 ई. को अपनी आखिरी सांस लेने वाले गिरीश कर्नाड ने अपने जीवन काल में भारतीय रंगमंच जगत को वो बहुमूल्य योगदान दिया, जिसकी सदियों तक या आजीवन काल तक भरपाई नहीं की जा सकती है।

सिनेमा: सन् 1970 ई. में इन्होंने सिनेमा जगत में कदम रख कर दुनिया के सामने अपने एक और हुनर का परिचय दिया। "गिरीश कर्नाड बतौर लेखक अपनी पहचान बनाना चाहते थे। साहित्य जगत का नामचीन चेहरा बनने के बाद उन्होंने फिल्मों में कदम रखा। 1970 में बतौर स्क्रीनराइटर 'संस्कार' से डेब्यू किया, ये फिल्म यू. आर. अनंतमूर्ति के नॉवेल पर आधारित थी। कन्नड़ फिल्म के लिए सर्वश्रेष्ठ निर्देशक

का पुरस्कार मिला था। इस फिल्म में उन्होंने लीड रोल भी किया था।"[33] सन् 1977 में 'गोधूलि' और सन् 1984 ई. में 'उत्सव' उनकी निर्देशन में बनाई गई फिल्म है। फिल्म 'गोधूलि' के लिए उन्हें बेस्ट स्क्रीनप्ले अवार्ड भी प्राप्त हुआ। इसके अलावा 'निशांत', 'मंथन', 'स्वामी', 'पुकार' आदि जैसी फिल्मों का निर्देशन किया। इस अवधि के दौरान कर्नाड ने नाटककार के रूप में काम करना जारी रखा, जिसमें हयवदन (1971) शामिल है, जिसे व्यापक रूप से भारत के प्रमुख नाटकों में से एक माना जाता है। सिनेमा में कार्य करने के बावजूद भी गिरीश कर्नाड का दिल हमेशा रंगमंच के लिए धड़कता रहा।

आजतक की वेबसाइट पर प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, "For four decades, Karnad has continued to compose top-notch plays, often using history and mythology to tackle contemporary themes. He has also forayed into the jungle of cinema, working alternately as an actor, director, and screenwriter, and earning numerous awards along the way. At the age of sixty, however, Karnad is vowing to give up cinema for the stage. "I've had a good life," he says. "I have managed to do all I could wish for--even be a government servant! Now I feel whatever time I have left should be spent doing what I like best writing plays."[34] सिनेमा से परे टीवी सिरियल में भी इनके काम को बहुत सराहा गया। सन् 1987 ई. में प्रदर्शित टी. वी. सीरियल 'मालगुडी डेज़' में स्वामी के पिता के रोल को भारत में दर्शकों ने

---

[33] https://www.aajtak.in/entertainment/story/girish-karnad-indian-actor-film-director-kannada-writer-playwright-full-profile-tmov-661611-2019-06-10 10 जून 2019, 2:06 PM IST

[34] http://www.imagi-nation.com/moonstruck/clsc79.html Nov. 03, 2020.

काफी सराहा। गिरीश कर्नाड ने नाट्य लेखन, रंगमंच और सिनेमा में अभिनय के अलावा हिंदी और कन्नड़ भाषा की कुछ फिल्मों का निर्देशन भी किया। उनके द्वारा निर्देशित हिंदी फिल्मों में गोधुलि (1977) और उत्सव (1984) हैं वहीं कन्नड़ में संस्कार, वंशवृक्ष और काडू आदि फिल्मों में इन्होंने पटकथा, निर्देशन के साथ-साथ अभिनय भी किया और राष्ट्रीय पुरस्कार से भी नवाज़े गये। हिंदी में उन्होंने 'निशांत' (1975), 'मंथन' (1976) और 'पुकार' (2000) जैसी फ़िल्में कीं। नागेश कुकुनूर की फ़िल्म 'इक़बाल' (2005), 'डोर' (2006), '8x10 तस्वीर' (2009) और 'आशाएं' (2010) में भी उन्होंने काम किया। इसके अलावा सलमान ख़ान के साथ वो 'एक था टाइगर' (2012) और 'टाइगर ज़िंदा है' (2017) में अहम किरदार में दिखे।[35] उनकी आखिरी फिल्म कन्नड़ भाषा में बनी, फिल्म 'अपना देश' है, जो 26 अगस्त 2019 को रिलीज हुई। बॉलीवुड की उनकी आखिरी फ़िल्म 'टाइगर ज़िंदा है' (2017) में डॉ. शेनॉय का किरदार निभाया था।[36] (गिरीश कर्नाड द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 4 देखें)

5.5. राम गोपाल बजाज

रंगमंच: सन् 1965 में 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' से कोर्स समाप्त कर बतौर कलाकार इन्होंने अपना कार्य शुरू किया। इसके बाद उन्होंने 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के रेप्टरी कंपनी में काम करना शुरू किया। रेप्टरी कंपनी में अभिनय के अलावा निर्देशन में भी हाथ आज़माया। 1965 में उस समय के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, एशियन थियेटर इंस्टीच्यूट से अभिनय में विशेषज्ञता प्राप्त कर, बजाज 1965 से 1967 तक राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रंगमंडल में अभिनेता के रुप में रहे। इसी बीच इन्होंने अपने सहपाठी कलाकार साथियों के साथ मिलकर राजधानी के

---

[35] https://www.bbc.com/hindi/india-48578510 10 जून 2019

[36] वही

महत्वपूर्ण नाट्य-दल 'दिशांतर' की स्थापना की।[37] शुरूआत में किये गये निर्देशन कार्यों में से कुछ उल्लेखनीय कार्य निम्न है- नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' (सन् 1974), स्कंद गुप्त (सन् 1977) आदि। प्रो. राम गोपाल बजाज सन् 1988 से सन् 1994 के बीच एन. एस. डी. रिपर्टरी कंपनी के प्रमुख भी रह चुके हैं।

सन् 1968 ई. में स्थापित नाट्य संस्था 'दिशांत' के संस्थापकों में से एक राम गोपाल बजाज भी थे। एक प्रसिद्ध अभिनेता और निर्देशक होने के अलावा, उन्होंने रंगमंच में अपने पांच दशकों से अधिक समय के दौरान कई क्षेत्रों में कार्य किये। जैसे- सन् 1969 से 1973 तक 'मॉडर्न विद्यालय, नई दिल्ली' में बतौर नाट्य शिक्षक, सन् 1973 में 'पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़' में बतौर पाठक, सन् 1979 से 1980 तक 'पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला' के नाट्य विभाग में बतौर प्रोफेसर और एच. ओ. डी., सन् 1988 से 1994 तक एन. एस. डी. रिपर्टरी कंपनी के प्रमुख, सन् 1995 से 2001 तक 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में बतौर निर्देशक कार्य किया। इसके अलावा उन्होंने जुलाई 2002 से मार्च 2003 तक 'हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय' के डॉ. राधाकृष्णन पीठ के पद भार को संभाला। सन् 2008 से सन् 2010 तक इन्होंने 'हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय' के एस. एन. स्कूल में बतौर आगंतुक संकाय भी कार्य किया। रंगमंच की दुनिया में राम गोपाल बजाज के पाठ्य कर्म को बहुत सराहना मिली। प्रसिद्ध अभिनेत्री 'रोहिणी हट्टंगड़ी' एक इंटरव्यू में राम गोपाल के कविता पाठ के बारे में बताते हुए कहती हैं कि - "एक बार राम गोपाल बजाज जी का मेरे घर आना हुआ। उस समय उन्होंने एक कविता और एक कहानी का पाठ सुनाया। वो सुनकर मैं समझ नहीं पाई कि मैं क्या कहूँ? इतना अच्छा पाठ, मैंने कभी अपने जीवन में नहीं सुना

---

[37] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक, पृ. 215

था। उस पाठ के बारे में जितनी तारीफ करूँ, उतना कम होगी।"[38] कविता-कहानी पाठ में राम गोपाल बजाज का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है।

रंगमंच समूह की स्थापना: सन् 2008 में राम गोपाल बजाज ने 'शब्दकार' रंगमंच समुह की स्थापना की। 'शब्दकार' के माध्यम से उन्होंने कुछ प्रमुख नाटक किये। जैसे 'घासीराम कोतवाल', 'हयवदन', 'अँधा युग', 'तुग़लक', 'किंग लीयर', 'बेग़म का तकिआ', 'सुनो जनमेजय' में उनके प्रदर्शन को अत्यधिक सराहना मिली। उन्होंने खुद को 'अजातगर' के निर्माण के साथ एक निर्देशक के रूप में स्थापित किया।

उनके द्वारा किये गये निर्देशन को भी खुब सराहना मिली। उनके निर्देशन में किये गये प्रमुख नाटकों में नाटक आषाढ़ का एक दिन, अंधायुग, स्कंदगुप्त, सूर्य कि अंतिम किरण से पहली किरण तक, मुक्तधारा, सिगल, भूख आग है, तालघर, लैला मज़नू, नायक विनायक, बहुत बड़ा सवाल, अंत नहीं, आजातघर, माटी मटल, ध्रुवस्वामिनी, सूर्यास्तक, मुक्तधारा, पाप और प्रकाश, काल पात्र, राजा नंगा है, बिना दीवारों के घर, गंगामाटी, ययाति, तलघर, हंसिनी, कैद-ए-हयात, एक पुरुष : डेढ़ पुरुष, हस्तिनापुर, चारुवाक, दूसरा अध्याय, मृगतृष्णा शामिल है।

अनुवाद कार्य: वर्ल्ड थियेटर डे वेबपेज पर प्रकाशित एक लेख के अनुसार, उन्होंने विभिन्न भाषाओं में उपल्बध नाटकों का हिंदी में अनुवाद भी किया है। "He has also translated & adapted 19 plays from different languages into Hindi and is renowned for his unique style of poetry recitation."[39] गिरीश कर्नाड द्वारा रचित कन्नड़ नाटक 'तेलेडंड' का हिंदी में रूपान्तरन किया। जिसे 'रक्त कल्याण' का नाम दिया। नाटक 'रक्त कल्याण' इब्राहीम अल्क़ाजी और अरविंद गौर जैसे बड़े

---

[38] https://www.facebook.com/vijayksainivlog/videos/292756391998087 08 Dec. 2020

[39] https://www.world-theatre-day.org/pdfs/RamGopalBajajBIO.pdf 12 Dec. 2020

नाटककारों के द्वारा मंचित किया जा चुका है। जिसे दर्शकों द्वारा खूब प्यरा मिला। गिरीश कर्नाड रचित नाटक 'अग्नि मत्तु मले' का हिंदी रूपांतरण 'अग्नि और बरखा' भी किया। नाट्य रूपांतरन के अलावा इन्होंने नाट्य लेखन का कार्य भी किया। नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से पहली किरण तक' इनके द्वारा लिखा गया बहुचर्चित नाटक है।

इन्होंने स्कूली बच्चों को भी नाट्य प्रशिक्षण दिया और दर्जनों नाटक करवाए। जयदेव तनेजा के अनुसार, "नवम्बर 1995 से लेकर सितम्बर 2001 तक इन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के निर्देशकर के रुप में कई नए और यादगार काम किए। 'अभिमंच' नामक प्रेक्षागृह इन्हीं की देख-रेख में पूरा हुआ। 'भारत रंग महोत्सव' की महत्वाकांक्षी योजना तथा 'जश्ने बचपन' और 'बाल मेला' जैसे बाल-रंगमंच के राष्ट्रीय समारोहों की शुरुआत भी इन्होंने ही कराई।"[40] दूसरी भाषाओं के महत्वपूर्ण नाटकों का मंचन इन्होंने हिंदी में किया और खूब प्रतिष्ठा हासिल की। इस क्षेत्र में इनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान ये है कि प्रायः बजाज ने हिंदी के नए नाटककारों को खोजा और उनके मौलिक नाटकों के पहली बार प्रशंसनीय एवं सफल प्रस्तुतिकरण करके उन्हें प्रेरणा और पहचान दी। सुरेन्द्र वर्मा, रामेश्वर प्रेम, अनुपम कुमार, अजय शुक्ला, महेंद्र भल्ला को प्रतिष्ठित कराने में बजाज का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।[41] प्रो. राम गोपाल बजाज की लोकप्रियता सिनेमा एवं रंगमंच दोनों में देखी जा सकती है। प्रों बजाज का हिंदी रंगमंच में विशेष रूप से योगदान देखने को मिलता है।

सिनेमा कार्य: फिल्म 'गोधुलि' से अपना फिल्मी कैरियर शुरू करने वाले राम गोपाल बजाज ने रंगमंच के विभिन्न क्षेत्र के अलावा फिल्म तथा टेलिविज़न दुनिया में

[40] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज पृ. 215

[41] वही, पृ.-216

भी खूब नाम कमाया। आई. एम. डी. बी. के अनुसार राम गोपाल बजाज ने सन् 1977 में फिल्म 'गोधुली' से अपने फिल्मी कैरियर की शुरूआत की। राम गोपाल बजाज ने फिल्म 'गोधुली' में बतौर सहायक निर्देशक, अपनी भूमिका निभाई थी। इसके अलावा फिल्म 'उत्सव' में भी सहायक निर्देशक का कार्य किया। जो सन् 1984 ई. में प्रदर्शित हुई थी। राम गोपाल बजाज अपने जीवन काल में अभी तक विभिन्न भाषाओं की फिल्मों में बतौर अभिनेता नज़र आ चुके है। इनमें से कुछ फिल्में 'मासूम' (1983), 'हिप-हिप हुर्राह' (1984), 'न्यू दिल्ली टाईम्स', 'अंतहीन' (1986), 'मिर्च मशाला' (1987), 'चांदनी', 'आई एम आजाद' (1989), 'फायर' (1986), 'जय गंगा', 'द पिकॉक स्परिंग' (1996), 'निषाद' (2002) 'मोंदों मेयेर उपाख्यान', 'मंगल पाण्डये द राइजींग', 'द मय्थ', 'परज़ानिया' (2005), 'कथो उपनिषद' (2011), 'लोगिन' (2012), 'मैंगो ड्रिम्स' (2016), 'जॉली एल. एल. बी. 2', 'चिफ' (2017), 'मणिकर्णिका द क्विन ऑफ झांसी' (2019) शामिल है।

टेलिविज़न एवं रेडियो पर अभिनय: राम गोपाल बजाज का फिल्म के साथ-साथ टी. वी. से भी बखूबी नाता रहा। उनके द्वारा टेलिविज़न में किये गये कुछ कार्य 'महाकुंभ' (2014-2015), 'रिश्तों का चक्रव्यूह' (2017-2018), 'सूफियाना प्यार मेरा' (2019), 'द वेरडिक्ट-स्टेट वीएस नानावती' (2019) आदि उल्लेखनीय हैं। रेडियो और टीवी नाटकों/धारावाहिकों के साथ-साथ इन्होंने हिंदी की मासूम (शेखऱ कपूर), प्रतिशोध (एस.एन. धीर), न्यू देहली टाइम्स (रमेश शर्मा), हिप हिप हुर्रे (प्रकाश झा), मिर्च मसाला (केतन मेहता), मैं आजाद हूं (टीनू आनंद), चाँदनी (यश चोपड़ा), अंग्रेजी की बोधिसत्व (एस.एन.धीर), द फायर (दीपा मेहता), बांग्ला की स्टोरी ऑफ अ नॉटी गर्ल (बुद्ध देव दासगुप्ता) और तेलगू की हरीविल्लू (डी. नरसिंग राव) जैसी सार्थक और अच्छी लोकप्रिय

फिल्मों में भी अभिनय किया है।[42] (राम गोपाल बजाज द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 5 देखें)

5.6. परेश रावल

रंगमंच: भारतीय कला के प्रति विशेष योगदान के लिए सन् 2014 में 'पद्मश्री' पुरस्कार से सम्मानित किये गये 'परेश रावल' न सिर्फ फिल्मों के लिए बल्कि उससे ज्यादा अपने रंगमंच के लिए जाने जाते हैं। परेश रावल, प्रदर्शनकारी कला की दुनिया में वो नाम हैं जो रंगमंच से अपना सफर शुरू कर सिनेमा में अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करने के बावजूद भी हमेशा रंगमंच से जुड़े रहे और विभिन्न प्रकार के नाटक करते रहे। आज अगर हम उनके द्वारा भारतीय कला के क्षेत्र में योगदान की बात करें तो फिल्मों से ज्यादा वो भारतीय रंगमंच विशेषकर गुजराती एव हिंदी रंगमंच में योगदान देते आ रहे हैं। नाटक के क्षेत्र में भी परेश रावल का नाम अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जाना जाता है। बाल्य अवस्था से वे रंगमंच के प्रति आकर्षित थे। मुंबई में उनके घर के पास के पार्क में ओपेन थियेटर था जहाँ पर वे रंगमंच देखने जाया करते थे। वहीं से उनके अंदर रंगमंच के प्रति एक गहरा लगाव बना और लगभग अठारह वर्ष की उम्र में उन्होंने निश्चय किया कि उन्हें रंगमंच में अपना कैरियर बनाना है। हालांकि वे अपने स्कूली समय से रंगमंच किया करते थे। स्कूल में होने वाले फंक्शन, शो आदि में वो बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया करते थे। इस समय से ही इनके द्वारा किये गये अभिनय की तारीफ होती थी और इनके द्वारा स्कूल तथा कॉलेज स्तर पर किये गये कई नाटकों को अनेकों पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

[42] तनेजा, जयदेव, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 216

प्रश्न: जब आपने पहला कोई नाटक तैयार किया। तो उसमें आपका अपना रोल क्या था?

उत्तर: नाटक 'राजा ने गम्यते रानी' (राजा को जो भा गया वही रानी) का मैं रिहर्सल देखा करता था जिसकी कहानी को मैंने अपने दिमाग में बिठा लिया था और फिर उसे खुद से लिख कर उस नाटक को प्रस्तुति के लिए तैयार किया। जिसे मैंने पहली बार इंटर कॉलेज में खेला था। इस नाटक में मैंने अहम भूमिका निभाई था।[43] सन् 1968 ई. के आस-पास रंगमंच की शुरूआत करने वाले परेश रावल लगातार रंगमंच से जुड़ कर कार्य करते रहे। कॉलेज से बी. कॉम करने के दौरान उनका समान्य पढ़ाई से ज्यादा समय रंगमंच में बीतता था। परेश रावल नसीरुद्दीन शाह और ओम पूरी से बहुत ज्यादा प्रभावित थे। सन् 1972 ई. से परेश रावल ने व्यावसायिक रंगमंच करना आरंभ किया। जिसमें ट्रायल एंड एरर मेथड का इस्तेमाल किया जाता था। लगभग दस वर्षों तक लगातार रंगमंच करने के बाद परेश रावल फिल्मों की तरफ रूख करते हैं। जब परेश रावल ने फिल्मों में कदम रखा तब वे नाटकों की दुनिया में एक जाना-माना नाम थे। परेश रावल उन गिने-चुने अभिनेताओं में हैं जो फिल्मों के साथ-साथ रंगमंच पर समान रूप से सक्रिय रहते है। अपने लगभग डेढ़ सौ नाटकों की प्रस्तुतियाँ लेकर परेश रावल देश के विभिन्न इलाकों की यात्रायें करते रहे हैं। इसके अलावा उन्होंने अपने नाटकों का सफल मंचन इंग्लैंड, अमेरिका, न्यूज़ीलैंड, अफ्रीका और यूरोप में भी किया है।[44] परेश रावल ने सन् 1972 में गुजराती और हिन्दी के रंगमंच पर प्रदर्शन करना शुरू किया था। उन्होंने 'कृष्ण बनाम कन्हैया', 'खेलैया', और 'डियर फ़ादर' जैसे लोकप्रिय

---

[43] https://youtu.be/xUXk-q3ZTys Guftagoo with Paresh Rawal, Rajya Sabha TV, Jan 7, 2018

[44] Ebid

नाटकों में काम किया है। उन्होंने हिंदी नाटक 'स्लूथ' के मंचीय संस्करण में नसीरुद्दीन शाह के साथ अभिनय और निर्देशन भी किया। निर्देशक केतन मेहता के साथ नाटक 'वन फ़्लेव ओवर द कुकुज़ नेस्ट' में भी काम किया। उन्होंने अमेरिका में 'किसान बनाम कन्हैया' (फिल्म ओएमजी का मंचीय संस्करण) हिंदी नाटक के 52 दिनों में 50 शो किए। रंगमंच से लेकर सिनेमा और राजनीति में अपना योगदान देने वाले परेश रावल अब भी रंगमंच के लिए मरते हैं। उन्होंने अभी भी खुद को रंगमंच से जोड़ रखा है और उनका अपना प्रोडक्शन हाउस 'आंगिकम' है। जो देश विदेश में नाटक की परस्तुतियाँ दिया करता है। उनकी संस्था द्वारा किया गया नाटक महारथी, मूलराज मेंशन और चिरंजीव उल्लेखनीय नाटक है। जिसके सैकड़ों शो किये जा चुके हैं। परेश रावल को सन् 2014 में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली के अध्यक्ष पद के लिए नियुक्त किया गया। रंगमंच से फिल्मों में जाने के कारण पर प्रकाश डालते हुए परेश रावल बताते हैं- “मेरा रंगमंच से इतना लगाव है कि कई बार मैं रंगमंच के लिए सिनेमा छोड़ चुका हूँ और आज भी जब हमारा नाटक भ्रमण रहता है तो मैं सिनेमा नहीं करता। मैं समझता हूँ कि अगर सिनेमा के माध्यम से रंगमंच को और क्रियेटिव बनाया जा सकता है, ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचा जा सकता है तो सिनेमा में जाना अच्छा है।”[45]

सिनेमा: परेश रावल की फिल्मी कैरियर की शुरूआत केतन मेहता की फिल्म 'मिर्च मसाला' से हुई। जिसमें परेश रावल ने एक छोटा सा रोल अदा किया था। जो कि सन् 1987 ई. में रिलीज हुई थी। उचित रूप से उन्होंने सन् 1984 ई. में आई फिल्म 'होली' से अपने फिल्मी कैरियर की शुरूआत की। परेश रावल को एक्टिंग और कला का भी शौक था, जिसे उन्होंने थियेटर में दिखाया। शुरुआती समय में जब लोगों ने उनके

---

[45] https://youtu.be/xUXk-q3ZTys Guftagoo with Paresh Rawal, Rajya Sabha TV, Jan 7, 2018

काम को देखा तो उन्हें सलाह दी कि वह अपना करियर फिल्मों में ही बनाएं, उसके बाद परेश ने भी फिल्मों की तरफ ध्यान देना शुरू किया।[46] फिल्मी करियर शुरू करने के बाद भी वो ज्यादातर रंगमंच में ही अपना समय दिया करते थे। केतन मेहता द्वारा निर्देशित फिल्म 'सरदार' ने परेश रावल को अंतरराष्ट्रीय ख्याति दिलाई। इसके बाद सन् 1998 ई. में रिलीज हुई फिल्म 'तम्मना' में भी उनके काम को खूब सराहा गया। फिल्म की दुनिया में परेश रावल को सबसे बड़ा ब्रेक फिल्म 'हेरा-फेरी' से मिला। इसके बाद तो एक के बाद एक लगातार सैंकड़ो फिल्मों में नज़र आयें।

इनके द्वारा की गई प्रमुख फिल्में 'फिर हेरा फेरी', 'वेलकम', 'गोलमाल' चुप चुप के', 'माला माल विकली', 'हंगामा', 'हलचल', 'अंदाज़ अपना अपना', 'टेबल न. 21', 'गेस्ट इन लंदन', 'दिलवाले', 'फंटूस', 'ओ. एम. जी.', 'सर', 'अतिथि तुम कब जाओगे', 'ओह छोकरी', 'रोड टू संगम' है। जिनमें से फिल्म 'सर' के लिए कॉमिक रोल में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए फिल्म फेयर अवार्ड, फिल्म 'हेरा फेरी' के लिए फिल्म फेयर सर्वश्रेष्ठ हास्य अभिनेता का पुरस्कार, जी सिने पुरस्कार, बॉलिवुड पुरस्कार, आईफा पुरस्कार, स्टार स्क्रीन पुरस्कार, फिल्म 'अवारा पागल दीवाना' के लिए कॉमिक रोल में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए फिल्म फेयर पुरस्कार आदि से सम्मानित किया गया।

परेश रावल ने रंगमंच के भाँति ही सिनेमा में भी अपना किरदार निभाया। उन्होंने कभी भी खुद को किसी श्रेणी में बंधने नहीं दिया। जिस स्तर से दर्शकों द्वारा उन्हें एक कॉमेडी के रूप में देखा गया तो उसी स्तर में विलेन तथा अन्य किरदार के रूप में भी देखा गया।

[46] https://www.jagran.com/blogs/days/paresh-rawal-biography-in-hindi/ 2 Jan. 2021

परेश ने फिल्मों में खलनायक, सहायक अभिनेता और कॉमेडी हर तरह की भूमिकाएं की। 'होली' फिल्म से उनकी अदाकारी का सिलसिला चल निकला। इसके बाद वह 1980 से 1990 के मध्य 100 से अधिक फिल्मों में खलनायक की भूमिका में नजर आए। इसमें कब्जा, किंग अंकल, राम लखन, दौड़, बाज़ी और कई फिल्मों में कार्य किया। यह एक हास्य फिल्म 'अंदाज़ अपना अपना' में पहली बार दो किरदारों में नजर आए। इसके बाद वर्ष 2000 में एक हिन्दी फिल्म 'हेरा फेरी' में अपने अभिनय और किरदार के कारण वह इसके बाद कई फिल्मों में मुख्य किरदार भी निभा चुकें हैं। 'हेरा फेरी' फिल्म में राजू (अक्षय कुमार) और श्याम (सुनील शेट्टी) उसके घर किराए पर रहते हैं। जबकि रावल उसमें मकान मालिक का किरदार निभाते हैं। इस किरदार को हेरा फेरी की सफलता का श्रेय दिया गया है। इसमें वे उनके कार्य के लिए वह फिल्म फेयर पुरस्कार (सर्वश्रेष्ठ हास्यकार) भी जीत चुकें हैं। उनका बाबुराव का किरदार उसके दूसरे भाग फिर हेरा फेरी (2006) में भी देखने को मिला, यह फिल्म भी सफल रही।[47]

कॉमेडी फिल्मों में उनकी भूमिकाएं दर्शकों को हंसा-हंसाकर लोट-पोट कर देती हैं। अपने फिल्मी सफर में जहां उन्होंने एक तरफ सरदार, हेराफेरी, फिर हेराफेरी, गरम मसाला, मालामाल वीकली और वेलकम जैसी मसाला फिल्मों में जानदार अभिनय किया तो वहीं तमन्ना, वो छोकरी, सर जैसी फिल्मों में भी उनका अभिनय शानदार रहा है।[48] सैकड़ों फिल्मों में विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं को निभाकर परेश रावल ने न सिर्फ

---

[47] https://jivani.org/Biography/440/परेश-रावल-जीवनी---biography-of-paresh-rawal-in-hindi-jivani 2 Jan. 2021

[48] https://www.jagran.com/blogs/days/paresh-rawal-biography-in-hindi/ 2 Jan 2021

आम दर्शकों के दिलों में विशेष जगह बनाई बल्कि आलोचकों का भी ध्यान खींचा और तमाम छोटे-बड़े अवार्डों को अर्जित किया।

वर्ष 2018 में 'संजू' फिल्म में परेश रावल ने संजय दत्त के पिता की भूमिका बहुत ही संजीदगी से निभाई। यह फिल्म संजय दत्त की बायोपिक फिल्म के रुप में भी जानी जाती है। राजकुमार हिरानी के कुशल निर्देशन में परेश रावल ने फिल्म में सुनील दत्त (संजय दत्त के पिता) के रूप में उनका स्वाभाविक चित्रण किया। फिल्म की प्रसिद्धि में परेश रावल की भूमिका महत्वपूर्ण रही।

टेलीविज़न सीरीयल: परेश रावल ने टेलीविज़न शो 'बनते बिगड़ते' में भी काम किया। साथ ही उन्होंने धारावाहिक शुभ मंगल सावधान में निर्माता के तौर पर कार्य किया। कॉमेडी धारावाहिक शुभ मंगल सावधान, प्लेटाइम प्रोडक्शंस के बैनर तले निर्मित यह प्रोजेक्ट परेश और उनके पार्टनर हेमल ठक्कर का संयुक्त उपक्रम है। इसका निर्देशन समीर कुलकर्णी ने किया है और इसमें दिलीप जोशी, अमित मिस्त्री, सुचिता पावटे और रितु दीपक जैसे कलाकार हैं।[49] (परेश रावल द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 6 देखें)

5.7. टॉम ऑल्टर

रंगमंच: 'फिल्म एंड टेलिविज़न इंस्टयूट' पुणे' के सहपाठी व मित्र नसीरुद्दीन शाह और बेंजनिम गेलानी के साथ मिलकर टॉम ऑल्टर ने मुंबई में 'मोटली' नामक नाटक संस्था की स्थापना की। नाट्य संस्था 'मोटली' से टॉम अल्टर की रंगमंच यात्रा शुरू होती है। 'मोटली' संस्था मूख्य रूप से मुंबई में अंग्रेजी नाटक खेला करती थी। इसके अलावा 'मोटली' में हिंदी नाट्य प्रदर्शन भी बखूबी किया जाता था। 'मोटली' का

[49] https://admin.indiantelevision.com/television/tv-channels/news-broadcasting/paresh-rawal-turns-tv-producer-with-shubh-mangal-sawdhan-0-020626 06 Jan 2021

पहला नाटक 'वेटिंग फोर गोटोद' थी, जो कि अंग्रेजी भाषा में प्रदर्शित हुई थी। इकनॉमिक टाइम पर प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, "Alter was closely involved in theatre throughout his career. He co-founded Motley Productions with Naseeruddin Shah and Gilani in 1979. His prominent stage works include the two-and-a-half-hour-long solo play in Urdu, 'Maulana', 'Babur ke Aulaad', 'Lal Qile ka Aakhri Mushaira', 'Ghalib ke Khat', 'Teesveen Shatabdi', 'Copenhagen', 'In Ghalib In Delhi' and the theatrical adaptation of William Dalrymple's 'City of Djinns'."[50]

रंगमंच में वे ज्यादातर मौलाना आज़ाद, गाँधी जी, जफ़र, ग़ालिब, टैगोर, साहिर लुधियानवी आदि की भूमिका निभाया करते थे। उन्हें फिल्मों से ज्यादा आनंद रंगमंच में कार्य करने पर मिलता था और यही कारण रहा की एक मशहूर हस्ती होने के बावजूद भी टॉम ऑल्टर महीने में दस दिन वे दिल्ली में रंगमंच करने के लिए रहा करते थे। उनकी अंतिम रंगमंच प्रस्तुति उनके निधन के एक सप्ताह पहले तक रही। जो कि अगस्त 2017 में खेली गई थी। टॉम ऑल्टर ने 12 अगस्त 2017 को खुद अपने काम को सोशल मिडिया पर शेयर करके लिखा था - "My recent play on Last Mughlai emperor Bahadur Shah Zafar."[51] टॉम ऑल्टर लेखन के क्षेत्र में भी कार्य कर चुके है। ऑल्टर ने द लॉन्गेस्ट रेस, रीरन एट रियाल्टो और द बेस्ट इन द वर्ल्ड सहित किताबें लिखी हैं। वह एक खेल पत्रकार भी थे जिनकी क्रिकेट में विशेष

---

[50] https://economictimes.indiatimes.com/magazines/panache/life-of-tom-alter-some-interesting-facts-you-might-not-have-known/bollywood-loses-a-gem/slideshow/60893838.cms Life of Tom Alter: Some Interesting Facts You Might Not Have Known, 30 sep. 2017

[51] https://youtu.be/__Or_zmKaao 30 Sep. 2017

रुचि थी, एक ऐसा खेल जिस पर उन्होंने स्पोर्ट्सवीक, आउटलुक, क्रिकेट टॉक, संडे ऑब्जर्वर, फ़र्स्टपोस्ट, सिटिजन और डेबोनेयर जैसे प्रकाशनों में विस्तार से लिखा है।[52] सन् 1972 ई. को अपने अभिनय करियर की शुरूआत करने वाले टॉम ऑल्टर अपनी 67 वर्ष की उम्र में 29 सितंबर 2017 को स्किन कैंसर के कारण इस दुनिया को छोड़, हम सब से दूर हो गये। उनके द्वारा भारतीय सिनेमा और रंगमंच के क्षेत्र में दिया गया योगदान बहुमूल्य है।

सिनेमा: सन् 1974 ई. में फिल्म इंस्ट्यूट से अपना कोर्स समाप्त करने के तुरंत बाद ही टॉम ऑल्टर को रामानंद सागर की फिल्म 'चरस' में काम करने का मौका मिल गया था। सन् 1975 ई. में रिलीज हुई फिल्म 'चरस' से टॉम ऑल्टर के फिल्मी करियर की शुरूआत हुई। उन्होंने अपने जीवन काल में लगभग 350 फिल्मों में काम किया। पहली फिल्म से ही उन्हें दर्शकों के बीच पहचान मिल गई थी। इसके बाद 'शतरंज के खिलाड़ी', 'क्रांति', 'सरदार पटेल', 'गाँधी' आदि फिल्मों में टॉम ऑल्टर अपने बेहतरीन अभिनय के दम पर बहुत कम वर्षों में भारतीय सिनेमा के अहम अभिनेता में गिने जाने लगे। इन्होंने सत्यजित राय की फिल्म 'शतरंज के खिलाड़ी' के लिए बेहतर काम किया। इसके अतिरिक्त ये फिल्म 'क्रांति' में ब्रिटिश ऑफिसर की भूमिका के लिए याद किये जाते हैं। सरदार पटेल पर बनी फ़िल्म 'सरदार' में इन्हें लार्ड माउंटबेटन ऑफ़ बर्मा के किरदार में देखा गया। वर्ष 1996 में इन्हें एक, असामी फिल्म 'अदाज्य' में देखा गया। इसके अतिरिक्त वर्ष 2007 में 'सिटी ऑफ़ जिन्नस' में जोहरा सहगल के साथ देखा गया। वर्ष 2011 में इनकी एक लघु फ़िल्म 'योर्स मारिया' के नाम से आई।[53]

---

[52] https://en.wikipedia.org/wiki/Tom_Alter Oct. 2020

[53] https://www.deepawali.co.in/tom-alter-biography-hindi-टॉम-अल्टर.html 24 May 2020

टॉम आल्टर ने, न सिर्फ हिंदी फिल्मों में काम किया बल्कि भारत के अन्य भाषा में भी कार्य किया।

टॉम ऑल्टर ने टेलीविज़न की दुनिया में भी अपनी भूमिका निभाई। टेलीविजन के क्षेत्र में उनके द्वारा किया गया सीरियल में 'जूनून', जबान संभाल के', 'भारत एक खोज', 'शक्ति मान', 'रिश्तों का चक्रव्यूह' शामिल है। 1993 से लेकर 1997 तक चले सीरियल 'ज़ुबान संभाल के' में इन्होंने एक ब्रिटिशर का रोल किया था, जो इंडिया में रहकर एक जगह हिंदी सीखने जाता था। लेकिन इसका रोल महज़ अंग्रेज़ बनने तक सीमित नहीं था। इनका सीरियल 'जुनून' 8-9 साल तक चला था। इसमें इनका कैरेक्टर केशव कलसी का था जो एक पंजाबी था। राज कपूर द्वारा निर्देशित और निर्मित फ़िल्म 'राम तेरी गंगा मैली हो गई' में इन्होंने हीरोइन मंदाकिनी के भाई का किरदार निभाया था। प्ले में 'मौलाना अबुल आज़ाद' का किरदार भी निभाया करते थे। टॉम की हिंदी, उर्दू और अंग्रेज़ी पर गज़ब की पकड़ थी।[54] उनके द्वारा टेलीविज़न में किया गया काम निम्न है: 2017 में रिश्तों का चक्रव्यूह, 2014 में यहां के हम सिकंदर, 2003 में हातिम, 1997 में शक्तिमान, बेताल पचीसा, 1993-1997 में ज़बान संभाल के, 1988 में भारत एक खोज, 1990-1991 में टीपू सुल्तान की तलवार, 1993-1998 में जुनून, 1995-1998 में आहट।

टॉम ऑल्टर, अभिनय के साथ ही अन्य गतिविधियों में भी खुद को व्यस्त रखा करते थे। मदरास कुरियर वेबसाइट पर प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, "In the eighties, alongside his acting career, Alter also embarked upon a journalistic career. Sport, especially cricket, was something he had

---

[54] https://www.thelallantop.com/jhamajham/padmi-shri-actor-tom-alter-films-biography-facts/ 24 May 2020

excelled at. ...He began occasionally writing on the sport. Most memorably, he did a television interview with Sachin Tendulkar in 1989, probably Tendulkar's first on TV. Later, Alter also did a stint as a cricket commentator in Hindi. Alter also pursued a career as an author. He wrote three books – The Longest Race, Rerun at Rialto, and The Best in the World."[55] (टॉम ऑल्टर द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 7 देखें)

5.8. नसीरुद्दीन शाह

रंगमंच: सिनेमा में ख्याती पाने के बाद भी नसीरूद्दीनशाह रंगमंच से जुड़े रहे। नाटक के पाठ का अध्ययन, नाटक के मंचन से लेकर सिनेमा के पर्दे तक नसीरुद्दीन ने अपने काम से वह पहचान हासिल की है जिसका जिक्र हर सजग नाटक प्रेमी और सिनेमा प्रेमी की जुबान पर रहता है।

स्कूल शिक्षा में विश्वप्रसिद्ध नाटककार विलियम शेक्सपीयर के नाटक 'द मर्चेंट ऑफ वेनिस' में शाइलॉक का किरदार निभाया था। इतना ही नहीं, इन्होंने अदाकारी के साथ-साथ इस नाटक का निर्देशन भी किया था। इन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से स्नातक की शिक्षा हासिल की थी। स्नातक की शिक्षा के दौरान इन्होंने अंग्रेजी भाषा में 'द प्रपोजल' नामक नाटक में लोमोव का किरदार निभाया वहीं 'द चेयर्स' नामक हिंदी नाटक में एक बूढ़े आदमी का किरदार निभाया। अभिनय और रंगमंच के क्षेत्र में इन्होंने कितने परिश्रम और विश्वास के साथ कदम रखा था और इस राह की दुश्वारियों के बारे में उनको कितनी जानकारी थी, यह स्वयं नसीरुद्दीन के इस कथन से पता चलता है-

[55]https://madrascourier.com/biography/the-lesser-known-story-of-tom-alter/ 23 September 2020

“उनका मानना है कि मैं अभिनेता बनने के लिए ही पैदा हुआ था। अगर मैं अभिनेता नहीं बनता तो मर जाना पसंद करता। अभिनेता बनना आजीवन प्रतिबद्धता। अभिनेता बनने के बारे में तभी सोचना चाहिए जब आजीवन प्रतीक्षा की क्षमता है।”[56]

अदाकारी और रंगमंच की प्रतिबद्धता ने उन्हें दिल्ली स्थित राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय पहुंचाया और एनएसडी के तत्कालीन निर्देशक और अनुभवी रंगकर्मी इब्राहीम अल्काज़ी के कार्यकाल में इन्होंने विधिवत प्रवेश लेकर प्रशिक्षण लिया। एन.एस.डी. के सफर में इन्होंने विश्वप्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर के नाटक ‘ओथेलो में ब्रोबेंतियों का किरदार निभाया वहीं ‘सूर्यमुख’ नामक नाटक में वभ्रू नाम का किरदार निभाया। 1973 में इन्होंने अल्काजी निर्देशित गिरीश कर्नाड के सुविख्यात नाटक तुगलक में आजम तथा इमामुद्दीन की दोहरी भूमिका सफलतापूर्वक निभाकर अपनी अभिनय कुशलता का प्रमाण दिया।[57] एनएसडी जैसे महत्वपूर्ण संस्थान से प्रशिक्षण लेने के बाद भी नसीरुद्दीन में सीखने की लालसा कम नहीं हुई। आगे इन्होंने पूणे स्थित फिल्म एवं टेलीविजन संस्थान से अभिनय की ट्रेनिंग लेने के लिए प्रवेश लिया।

नाट्य संस्था की स्थापना: इन्होंने 1977 में ‘मोटले’ नामक एक नाट्य संस्था की स्थापना की, जिसमें बेंजामिन गिलानी इनके सहयोगी बने। रेणु सरण के अनुसार, “In 1977, he along with Tom Alter and Benjamin Gilani formed a theatre group called Motley Productions. Their first play was Samuel Beckett's novel Waiting for Godot."[58]

---

[56] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 320

[57] वही पृ. 321

[58] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-151

'मोटले' के बैनर तले इन्होंने 'वोटिंग फॉर गोदो' नामक अंग्रेजी नाटक में ब्लादिमीर के किरदार को निभाया। हिंदी नाटक 'बलि (1985)', 'अंधायुग (1989)', 'प्रतिविम्ब(1990)', 'उध्वस्त धर्माशाला', 'इडिपस(1980)', तथा अंग्रेजी नाटक 'जसमा ओडन(1982)', 'डॉन जुआन (अंग्रेजी)', 'ऑड कपल(1988)', 'ऑन द हार्मफुलनेस ऑफ टोबैको(1990)', 'द एनवर्सिरी', 'जूलियस सीजर (1991)', 'द केन म्यूटिनी कोर्ट मार्शल(1993)', 'प्लेटफॉर्म(1997)', 'महात्मा वर्सेस गांधी(1997)' में भी नसीर ने काम किया। रंगमंच में अलग-अलग तरह के किरदारों को जीवंत करके अपनी अभिनय क्षमता और प्रतिबद्धता को विधिवत प्रशिक्षण और नियमित अभ्यास के ज़रिये इन्होंने बार-बार साबित किया। 'मोटली' नाट्य संस्था आज भी नाट्य प्रस्तुतियों में अपना योगदान देती आ रही है।

फ़िल्मों में अपार सफलता और समृद्धी हासिल करने के बाद भी नसीरुद्दीन शाह ने रंगमंच से अपना नाता बरकरार रखा। अपने कीमती समय में से कुछ समय निकालकर नसीर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के विद्यार्थियों से मिलते रहे हैं और उन्हें रंगमंच और सिनेमा से जुड़ी बारिकियां सिखाते रहे हैं। नसीरुद्दीन शाह ने अब तक अपने जीवन में अनेकों भिन्न-भिन्न किरदार निभाये हैं। उन्होंने कभी भी किसी एक शैली में खुद को बंधने नहीं दिया। रंगमंच के क्षेत्र में उनके द्वारा किया गया कार्य बहुत सराहनीय है।

सिनेमा कार्य: 'फिल्म एंड टेलीविज़न इंस्टयूट, पुणे' के अंतिम वर्ष से ही उन्हें फिल्मों में काम मिलना शुरू हो गया। सन् 1973 ई. में रिलीज़ हुई श्याम बेनेगल की फिल्म 'निशांत' से नसीरुद्दीन शाह के फिल्मी करियर की शुरूआत होती है। एफ. टी. आई. आई. पूणे से उनका सिनेमा पर्दे से मजबूत और स्थायी जुड़ाव हो गया। मुख्य धारा की सिनेमा में नसीरुद्दीन शाह के सफर की शुरुआत 1980 में आई फ़िल्म 'हम

पांच' से हुई। फ़िल्म भले ही व्यापारिक थी, लेकिन इसमें नसीर के अभिनय की गहराई समानांतर सिनेमा वाली फ़िल्मों से कम नहीं थी। गुलामी को अपनी तकदीर मान चुके एक गांव में विद्रोह की आवाज बुलंद करते नौजवान के किरदार में नसीर ने जान फूंक दी।[59] सत्तर अस्सी के दशक में भारतीय फिल्मों में गोरे-चिकनें चेहरे चला करते थे वैसे नसीर और ओम साहब जैसे शक्ल वाले फिल्मों में जाने को सोच भी नहीं सकते थे लेकिन इन्होंने वो हौसला दिखाया। सिर्फ हौसले तक ही ये सिमीत नहीं रहे। उन्होंने हिंदी समानांतर सिनेमा में बखूबी अपना योगदान निभाया और फिर अपने हीरो बनने के सपने को भी पूरा किया। नसीरुद्दीन शाह उन कलाकारों में आते हैं जिन्होंने अपने से आगे आने वाले कलाकारों के लिए एक नई राह बनाई, जिस पर आज अनेक रंगमंच कलाकार चल रहे हैं और चलना चाहते हैं। अभिनय का विधिवत् प्रशिक्षण लेने के बाद वह रंगमंच और हिंदी फिल्मों में सक्रिय हो गए। नसीरूद्दीन शाह की फिल्मों की सूची में समानांतर और मुख्य धारा की फिल्मों का अनूठा सम्मिलन देखने को मिलता है। उनके फिल्मी सफर का प्रारंभ 'निशांत', 'मंथन' और भूमिका जैसी समानांतर फिल्मों से हुआ। उन्होंने अपने फिल्मी सफर के शुरुआती लम्हों में ही परिपक्व अभिनय का परिचय दिया और देखते-ही-देखते वह तात्कालिक सिनेमा जगत् के सर्वाधिक प्रतिभाशाली अभिनेताओं में शुमार हो गए। धीरे-धीरे वह समानांतर फिल्मों की जरूरत बन गए। उनकी अनुपस्थिति में समानांतर फिल्मों की कल्पना करना भी मुश्किल हो गया।[60]

फिल्म 'निशांत' से अपना फिल्मी कैरियर शुरू करने वाले नसीरुद्दीन शाह को फिल्म 'गोधूली', 'अल्बर्ट पिंटों को गुस्सा क्यों आता है', 'भवनी-भवाई', 'जाने भी दो यारो' जैसी कला सिनेमा से पहचान मिली। उसके बाद उन्होंने कमर्शियल सिनेमा की

---

[59] https://hi.wikipedia.org/wiki/नसीरुद्दीन_शाह 09 Nov. 2020

[60] विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारें, पृष्ठ-61

ओर रूख किया और उसमें भी बखूबी नाम कमाया। नसीरुद्दीन शाह अब तक दो सौ से अधिक सिनेमा में काम कर चुके हैं। जिसमें हिंदी सिनेमा के अलावा भारत के अन्य भाषी फिल्में, विदेशी फिल्में भी शामिल हैं। इसके अलावा वह अनेक भारतीय टेलीविज़न धारावाहिकों में भी काम कर चुके हैं। फिल्मों में अपना सिक्का जमाने के बाद भी वह रंगमंच से जुड़े रहें। टॉम अल्टर और बेंहमिन गिलानी के साथ उन्होंने 'मोटली' नाटक रंगमंच संस्था की स्थापना की थी।

रेणु सरण के अनुसार, 1977 में, उन्होंने टॉम ऑल्टर और बेंजामिन गिलानी के साथ मिलकर मोटली प्रोडक्शन नामक एक थिएटर ग्रुप बनाया। उनका पहला नाटक सैमुअल बेकेट का उपन्यास वेटिंग फॉर गोडोट था। 1988 में, उन्होंने गुलज़ार द्वारा निर्देशित मिर्ज़ा ग़ालिब के जीवन और समय पर आधारित इसी नाम की टेलीविज़न सीरीज़ में अभिनय किया। 1989 में, उन्होंने जवाहर लाल नेहरू की किताब द डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया पर आधारित एक और इसी नाम की टेलीविज़न सीरीज़ भारत एक खोज में मराठा राजा शिवाजी की भूमिका निभाई, जिसका निर्देशन प्रसिद्ध फ़िल्म निर्देशक श्याम बेनेगल ने किया था।[61] सिनेमा जगत के अलावा उन्होंने टेलीविज़न की दुनिया में भी खूब नाम कमाया। रेणु सरण के अनुसार "In 1988, he acted in the eponymous television series based on the life and times of Mirza Ghalib, directed by Gulzar. In 1989, he acted as the Maratha King Shivaji in another eponymous television series Bharat Ek Khoj based on Jawaharlal Nehru's book The Discovery of India directed by noted film

[61] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-151

director Shyam Benegal."[62] (नसीरूद्दीन शाह द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 8 देखें)

5.9. ओम पुरी

रंगमंच: खालसा कॉलेज से ही ओम पूरी के अंदर रंगमंच के प्रति एक लगाव था। स्कूल के समय ओम पुरी 'आर्मी बनने का ख़्वाब संजोये हुए थे अर्थात कह सकते हैं कि ग्राम 'सनौर' से पढ़ाई के दौरान उनका रंगमंच से कोई ताल्लुक नहीं था। जब वे कॉलेज स्तर पर पहुँचे तब उन्हें नाटकों के प्रति दिलचस्पी आयी और फिर उन्होंने वहाँ होने वाले फंक्शन और प्रतियोगिता में भाग लेना शुरू किया। 'पंजाबी विश्वविद्यालय, पंजाब' में उनके द्वारा किये गये नाटक को प्रथम पुरस्कार मिला। जहाँ से नाटक के प्रति उनका मनोबल बढ़ा। पंजाबी विश्वविद्यालय में यूथफेस्टिवल में मैंने एक नाटक किया जिसमें मुझे पहला पुरस्कार प्राप्त हुआ। उस नाट्य प्रतियोगिता के जज 'हरपाल तिवान' ने मुझे, उनके रंगमंच में शामिल होने का प्रस्ताव दिया और मैंने उसे स्वीकार करते हुए उनका नाट्य संस्था 'थियेटर कला मंच' में शामिल हो गया। फिर पढ़ाई के साथ ही रंगमंच का सिलसिला शुरू हो गया।[63] ओम पुरी 'हरपाल तिवान' के घरेलू कार्य से लेकर नाट्य प्रस्तुति सब में साथ दिया करते थे। कारण, कुछ आर्थिक तंगी थी तो कुछ अभिनेता बनने की चाह, जो ओम पुरी के हर मुश्किल कार्य को आसान बना देती थी और वे दिल से 'हरपाल तिवान' के साथ हर कार्य किया करते थे।

नंदिता पुरी अपने एक पुस्तक 'असाधारण नायक ओम पुरी' में लिखती हैं, "अपने करियर में निभाए गये किरदार के बारे में ओम कहते हैं कि मेरे लिए हरपाल

---

[62] Saran Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-151

[63] https://youtu.be/FuS8IV3Ugko Guftagoo with Om puri, Rajya Sabha TV, 23 Aug. 2012

तिवान पहले गुरू थे। उन्होंने ने ही सबसे पहले इस माध्यम की गंभीरता से परिचय कराया। मैं आज जो कुछ भी हूँ, उन्हीं की वजह से। नाट्य विद्यालय में बाद के प्रोफेसरों से जो कुछ मैंने सीखा, उसके मुकाबले तिवान का योगदान मेरे लिए काफी मायने रखता है।"[64] तिवान के दिखाए हुए मार्ग ने ही ओम पुरी को एक समय बाद राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली में नामांकन के लिए प्रेरित किया।

ओम पुरी जी की समान्य शिक्षा पंजाबी भाषा माध्यम से हुई थी जिसके कारण उनकी अंग्रेजी भाषा में पकड़ अच्छी नहीं थी। जब वे राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली पहुँचे तो वहाँ पर अंग्रेजी देखकर कुछ समय के लिए इनके अंदर एक भय घर कर गया और वे मन ही मन राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली छोड़ने का विचार करने लगे। जब यह बात राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के निर्देशक 'इब्राहीम अल्काज़ी' को पता चली तो उनके समझाने पर ओम पुरी ने अपने विचार पर विराम लगाकर कोर्स पूरा करने का निर्णय लिया।

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से कोर्स समाप्त कर ओम पुरी दिल्ली में नाटक करने लगे इस दौरान उन्होंने 'ऑथेलो', 'तीन बहनें', 'खड़िया का घेरा', 'सूर्यमुख', 'सुल्तान रजिया', 'दांतोज डेथ', 'तुगलक', 'द लैसन', 'सूर्यास्तक' नाटकों में अभिनय किया। रंगमंच में कार्य करने बाद उन्हें अहसास हुआ की इससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं होगा। इसके बाद उन्होंने फिल्म टेलीविजन इंस्टिट्यूट ऑफ इंडिया, पुणे के एक्टिंग कोर्स में प्रवेश लिया। वहां उन्हें नसीरुद्दीन का साथ मिला जो कि नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में उनके सहपाठी रह चुके थे। यहाँ आने का उनका मुख्य उद्देशय सिनेमा में जाने का था जिससे वो अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकें।

---

[64] पुरी, नंदिता सी., असाधारण नायक ओम पुरी, पृष्ठ-43-44

ओम पुरी ने सन् 1976 ई. में मुंबई में आने के बाद फिल्मों के साथ-साथ रंगमंच करना शुरू किया था। इसके लिए उन्होंने सन् 1978 ई. में मुंबई में 'मज़मा' नामक एक रंग संस्था की स्थापना की। नणदिता पुरी के अनुसार, " 'मज़मा' ग्रुप के संस्थापक सदस्यों में नसीरूद्दीन शाह, रोहिणी हटंगडी, मदन जैन, अत्तार नवाज़ और नरेश सूरी सहित कई कलाकार थे। रत्ना पाठक, करण राजदान और स्वर्गीय प्रिया तेंदुलकर जैसे कलाकारों ने भी मजमा के लिए काम किया है। मजमा का पहला नाटक 'उध्वस्त धर्मशाला' था, जो छबिलदास थियेटर में प्रस्तुत किया गया था।"[65] इसी संदर्भ में जयदेव तनेजा लिखते है, "मुम्बई में संघर्ष करते हुए नसीरुद्दीन शाह के साथ मिलकर 'मज़मा' नामक नाट्य दल की स्थापना की और बलराज पंडित के 'पाँचवाँ सवार' तथा जी.पी. देशपाण्डे के 'उध्वस्त धर्मशाला' जैसे कुछेक नाटक किए।"[66]

ओम पुरी रंगमंच और सिनेमा में अपनी विशेष आवाज, जबरदस्त एक्टिंग और तमाम सामाजिक विषयों पर खुलकर अपनी राय व्यक्त करने वाले अभिनेता के तौर पर जाने जाते है। फिल्मों के साथ ही ओम पुरी ने अपना रंगमंच सफर भी जारी रखा और यही कारण है कि उनका नाम उन कलाकारों की सूची में रखा जाता है जो सिनेमा में उच्च स्तर प्राप्त करने के बाद भी रंगमंच को अपने दिल में जगह देते आये या नाटक करते रहे। ओम पूरी भारतीय रंगमंच जगत के एक उच्च कोटि के कलाकार में गीने जाते है और वह आधुनिक समय के अभिनेता के मार्गदर्शक एवं प्रेरणा श्रोत भी हैं।

सिनेमा कार्य: सन् 1973 ई. में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से अपना कोर्स समाप्त करने के बाद ओम पुरी को हिंदी रंगमंच से अपना संसार चलाना मुश्किल

---

[65] पुरी, नंदिता सी., असाधारण नायक ओम पुरी, पृष्ठ-75-76

[66] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 207

लगा। इसे देखते हुए उन्होंने कमर्शियल सिनेमा की तरफ रूख करने के विचार से और ओम जी के खास मित्र नसीरुद्दीन शाह के राय पर उन्होंने 'फिल्म एंड टेलीविज़न इंस्टयूट, पुणे' में अपना नामांकन करवाया और वहाँ अपने अभिनय विधा को फिल्म के टेकनॉलजी के हिसाब से ढालने लगे। 'फिल्म एंड टेलीविज़न इंस्टयूट, पुणे' में नामांकन के वर्ष से ही ओम जी को फिल्मों में काम मिलना शुरू हो गया था। बी. वी. कारंथ के निर्देशन में ओम जी की पहली फिल्म 'चोर चोर छुप जा' थी। जो सन् 1975 ई. में रिलीज हुई थी।

सन् 1976 ई. तक पुणे में पढ़ाई करने के बाद वे मुंबई में नसीरुद्दीन शाह के साथ उनके पी.जी. में रहने लगे। बंबई में पहुँच कर ओम जी ने अपने फिल्मी करियर की शुरूआत की। सन् 1976 ई. में कुछ लघू फिल्मों में काम करने के साथ ही उन्हें मराठी नाटक 'घासी राम कोतवाल' पर बन रही फिल्म 'घासी राम कोतवाल' में काम करने का मौका मिला। ओम जी के लिए जो मुंबई के सरज़मीं पर 'घासीराम कोतवाल' से फिल्मों का सफर शुरू हुआ। ओम पुरी ने फिल्म इंडस्ट्री में लगभग चालीस वर्ष काम किया। मराठी फिल्म 'घासीराम कोतवाल' (1976) से उन्होंने अपना करियर शुरू किया था।[67] वो उनके मृत्यु वर्ष सन् 2017 ई. तक जारी रहा।

पढ़ाई के दौरान नसीरुद्दीन शाह और डेविड धवन जैसे उम्दा साथी मिले तो पढ़ाई के बाद गोविंद निहलानी जैसे निर्देशकों का सानिध्य पाकर ओम पुरी ने सिनेमा के इतिहास में अपना नाम स्वर्णक्षरों में दर्ज करा लिया। गोविंद निहलानी से परिचय के बाद 'आक्रोश' और 'शोध' जैसी फिल्मों में श्रेष्ठ अभिनय के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार जीता। 1983 में 'अर्धसत्य' की सफलता से इन्हें भारी सफलता और लोकप्रियता मिली।

---

[67] https://hindi.webdunia.com/bollywood-focus/om-puri-25-interesting-facts-115101700084_1.html July 2020

"आक्रोश, 'अर्धसत्य', 'आघात', 'तमस' और 'द्रोहकाल' जैसी सार्थक एवं उत्तेजक फिल्मों में सघन, गम्भीर, सशक्त और संवेदनशील अभिनय से इन्हें एक व्यक्तित्व सम्पन्न कुशल अभिनेता के रुप में अलग पहचान और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।[68]

फिल्म 'गोधुली', 'आक्रोश', 'भवनी भवाई' आदि से राष्ट्रीय स्तर तक पहचान बनाने वाले ओम पुरी, सन् 1983 ई. में आयी फिल्म 'अर्द्ध सत्य' से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाने में सफल रहें। इसके लिए उन्हें सर्वश्रेष्ठ अभिनेता का राष्ट्रीय पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। इस संदर्भ में विपल्व विनेद का कहना है, "भवनी भवई, स्पर्श, मंडी, आक्रोश और शोध जैसी फिल्मों में ओम पुरी के सधे हुए अभिनय का जादू दर्शकों के सिर चढ़कर बोला, पर उनके फिल्मी सफर में मील का पत्थर साबित हुई 'अर्द्ध सत्य'। ...धीरे-धीरे ओम पुरी समानांतर सिनेमा की जरूरत बन गये। समानांतर सिनेमा में अपनी प्रभावी उपस्थिती दर्ज कराने के साथ-साथ ओम पुरी ने मुख्य धारा की फिल्मों का भी रूख किया। कभी नायक, कभी खलनायक तो कभी चरित्र अभिनेता और हास्य अभिनेता के रूप में वह हर दर्शक से रू-ब-रू हुए।"[69]

ओम पुरी ने अपने जीवन काल में विभिन्न प्रकार की फिल्मों में काम किया। जिसमें वे भिन्न भिन्न किरदार में नज़र आयें। राज्यसभा टी.वी. के एक कार्यक्रम गुफ़्तगू में ओम जी ने बताया कि वैसे फिल्मों में काम करना ज्यादा बेहतर होता है जिससे समाज को एक संदेश दिया जा सके और यही कारण है कि वो ज्यादातर उस तरह की फिल्मों का ही चुनाव करते थे जिससे मनोरंजन के साथ ही समाज के एक संदेश दिया जा सके। हिंदी फिल्मों के अलावा वह भारत की अन्य भाषाएं जैसे पंजाबी, मराठी आदि भाषा के क्षेत्रीय फिल्मों में काम कर चुके है। साथ ही उन्होंने अपने जीवन

---

[68] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक, पृ. 207

[69]विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, पृष्ठ-259

काल में 'माई सन द सिटी ऑफ द ऑफ जॉए', 'द घोस्ट एंड द डार्कनेस', 'ईस्ट इस ईस्ट' जैसे अंतरराष्ट्रीय फिल्मों में काम किया।

रंगमंच एवं सिनेमा में एक बराबर अधिकार से अभिनय करने वाले ओमपुरी ने टेलीविज़न पर्दे के लिए अदाकारी की और अपार सफलता हासिल की। कई बेहतरीन फिल्म करने वाले ओमपुरी ने टीवी के लिए कक्काजी कहिन, भारत एक खोज, मिस्टर योगी जैसे धारावाहिकों में अभिनय किया। इसके अलावा उन्होंने आहट के कुछ अंको में काम किया है साथ ही सावधान इंडिया का सेकंड सीजन होस्ट किया।[70] बुक माई शो वेबसाइट पर प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार, "The actor also appeared in several television series like Kakkaji in Kakkaji Kaheen (1988), Mr. Yogi (1989) and in Govind Nihalani's Tamas (1987). He also gave voice to the character of Bagheera in the popular animated TV."[71] ओम जी द्वारा टेलीविज़न क्षेत्र में किया गया सदगति, मुकुट में जड़ा रत्न, खानदान, भारत एक खोज, काकाजी कहिन, तमस, श्री योगी, किरदार, वो छोकरी, आहट, सी हॉक्स, अन्तराल, सीआईडी, अचानक 37 साल बाद, सफेद दांत, जासूस विजय, द्वितीय जनरेशन, कैंटरबरी टेल्स, हमने ली है शपथ उल्लेखनीय है। (ओम पुरी द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 9 देखें)

5.10. अनुपम खेर

रंगमंच: इन्होंने अपने जीवन में नाटक की शुरूआत 'पृथ्वी राज चौहान' नामक नाटक से की। उस वक्त अनुपम खेर पाँचवीं कक्षा में थे। ये इनके लिए पहला स्टेज

---

[70] https://hindi.webdunia.com/bollywood-focus/om-puri-25-interesting-facts-115101700084_1.html 04 July 2020

[71] https://in.bookmyshow.com/person/om-puri/1622 July 2020

शो रहा था। एक्टिंग के शौक़ीन अनुपम खेर बचपन से ही अपने टीचरों की नक़ल उतारा करते थे। बहुत छोटी सी उम्र में इन्होंने स्कूल में एक नाटक के दौरान पृथ्वीराज चौहान की भूमिका निभाई थी।[72] ये अपने क्षेत्र शिमला में हो रहे रामलीला में भी भाग लेते थे। जहाँ ये राम बनने कि ख्वाहिश रखते थे लेकिन इन्हे वानर की सेना का रोल दिया जाता था। इस तरह से ये अपने कॉलेज के समय तक अपने अभिनय के लिए जाने जाने लगे थे। एक बार की घटना है जब फिल्म 'उमरकैद' की शूटिंग टीम जब शिमला में शूट करने पहुँची तो वहाँ पर अनुपम खेर को ये कह बुलाया गया था कि - 'उस लड़के को बुलाओ जो नाटक किया करता है।' अनुपम खेर का शूट पर प्रतिदिन जाना होता था। जब उनसे लोग पूछते थे कि 'तुम वहाँ क्या करते हो?' तब उनका जवाब होता था - 'एक मेन रोल है जो मैं कर रहा हूँ।[73] कुल मिलाकर बात की जाये तो अनुपम खेर उस समय अपने क्षेत्र के लोगों के बीच हीरो बन गये थे।

सन् 1978 ई. में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली से अपना कोर्स समाप्त करने के बाद उन्होंने अपनी रोजी-रोटी चलाने और अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए दिल्ली में ही रंगमंच करना आरंभ किया। इस समय अनुपम दिल्ली के बंगाली मार्केट, धोबी कालोनी में रहते थे। उस समय सिर्फ थियेटर से गुज़ारा करना, अनुपम खेर के लिए उनके जीवन में काफी दिक्कतें पैदा कर रहा था। इसी समय उन्हें भारतेंदु नाट्य विद्यालय, लखनऊ से ड्रामा शिक्षक हेतु प्रस्ताव निकला और वे उसे स्वीकारते हुए भारतेंदु नाट्य विद्यालय, लखनऊ में एक ड्रामा शिक्षक के रूप में कार्य करने लगते है। लखनऊ में लोग खेर साहब के नाम से पुकारते थे। वहाँ पर कार्य करने के दौरान इन्हें

---

72 https://www.jionewstv.com/2021/03/Biography-of-anupam-kher-in-hindi.html 30 sep. 2020

73 https://youtu.be/Q5U7JNl6hAs 25 June 2018,

एहसास हो रहा था कि वे स्वतंत्र रूप से रंगमंच के कलाकार के स्थान पर शिक्षक के रूप में ही स्थापित होते जा रहे हैं, जो उन्हें रास नहीं आ रहा था और लगभग ढेढ़ वर्ष कार्य करने के बाद उन्होंने भारतेंदु नाट्य विद्यालय, लखनऊ से जॉब छोड़ दी और मुंबई चले गये। जहाँ उन्होंने सिनेमा में कार्य करना शुरू किया।

फिल्मों में एक मुकाम हासिल करने के बाद भी अनुपम खेर ने राकेश बेदी का बहु-प्रशंसित नाटक 'मेरा वो मतलब नहीं था' से रंगमंच में वापसी की। उसके बाद लगातार अनुपम खेर फिल्म के साथ-साथ रंगमंच में योगदान देते आ रहे हैं। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के छात्र रह चुके अनुपम खेर सन् 2001 से सन् 2005 तक राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली के अध्यक्ष के रूप में भी नियुक्त रहे। इसी बीच सन् 2003 से सन् 2004 तक केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड के अध्यक्ष के पद पर भी नियुक्त थे। सन् 2017 में इन्हें फिल्म एंड टेलिविजन इंस्ट्यूट, पूणे का डायरेक्टर भी बनाया गया। अनुपम खेर ने थियेटर और सिनेमा दोनों की दुनिया में बखूबी महारथ हासिल की और लोगों के प्रेरणा के श्रोत भी बनते आये हैं। इन्होनें अभिनय कला के बेहतर विस्तार तथा निखार के लिए सन् 2005 में मुंबई शहर में 'Anupam Kher's Actor Prepares - The School Of Actor' नामक एक अभिनय विद्यालय की स्थापना की। जी न्यूज की एक रिपोर्ट के अनुसार, "The 59-year-old actor established his dream project Actor Prepares in 2005, which is an acting school in the heart of Mumbai, where he takes time off his schedule to personally impart some of his acting secrets to young and aspiring actors."[74]

---

[74] https://zeenews.india.com/entertainment/celebrity/anupam-khers-acting-school-completes-10-years_1540093.html 02 Feb. 2015

सिनेमा कार्य: खेर साहब मुंबई का रूख पहले भी कर चुके थे लेकिन 3 जून 1981 ई. को अनुपम खेर स्थाई रूप से मुंबई पहुँचे। शुरुआत में तो दोस्तों का घर सहारा बना लेकिन कुछ समय बाद इन्हें अपना खुद का कमरा लेना पड़ा। उस समय पैसों का ख्याल करते हुए अनुपम खेर ने मुंबई के एक चॉल में रहना पसंद किया। उस समय इनका पता था- अनुपम खेर, 2/15 खेर वारी, खेर नगर, खेर रोड।

सन् 1982 ई. में आई मुज्जफर अली की फिल्म 'आगमन' से अनुपम खेर के फिल्मी कैरियर की शुरूआत हुई। इस फिल्म में पहली बार इन्हें काम करने का मौका मिला लेकिन फिल्म इंडस्ट्री में इनको पहचान महेश भट्ट की फिल्म 'सारांश' से मिली। काफी मेहनत के बाद 1982 में अनुपम को अपने करियर की पहली फिल्म आगमन मिली जो ज्यादा सफल नहीं हो पाई। फिर एक दिन उनकी मुलाकात महेश भट्ट से हुई जिन्होंने अनुपम से कहा कि मैं तुम्हें जानता हूं और तुम्हें अपनी फिल्म 'सारांश' में लेना चाहता हूं। बस फिर क्या था अनुपम खेर ने 1984 में आई इस फ़िल्म में 28 साल की उम्र में भी एक वृद्ध व्यक्ति का किरदार निभाया जिसे दर्शकों ने हाथों हाथ लिया और हर कोई अनुपम की तारीफों के पुल बांधने लगा और सभी ने अनुपम की एक्टिंग का लोहा माना।[75] 'सारांश' फिल्म में निभाए गये किरदार के लिए अनुपम खेर को बेस्ट एक्टर अवार्ड से नवाज़ा गया था। बुक माई शो वेबसाइट के अनुसार, "Having made his acting debut with the 1982 movie Aagman, a 28-year-old Anupam Kher bagged the role of an aging father who loses his only son in Mahesh Bhatt's 1984 drama Saransh. The movie went on to become a commercial success, being acclaimed critically and was also

---

75 https://www.prabhasakshi.com/entertainmentarticles/acting-school-is-also-called-anupam-kher Mar 7 2017 3:23PM

India's official submission for the Academy Award for Best Foreign Language Film for that year. The actor's phenomenal performance won him the Filmfare Award for Best Actor."[76] इस सफलता ने अनुपम खेर के जीवन में एक नया मोड़ लाया। इसके बाद अनुपम खेर के पास फिल्मों की कतार लगी रही। फिल्म 'दिलवाले दुल्हनिया ले जाएंगे' में शाहरुख खाने के पिता की भूमिका में उन्होंने पिता के एक अलग ही रुप को दिखाया। अपने करियर की विविधता के बारे में अनुपम प्रिंट और इलेक्ट्रानिक मीडिया में कई बार खुलकर बात करते रहे हैं। टर्निंग प्वाइंट यह भी रहा कि मैंने खुद को किसी सीमा में नहीं बांधा। मैंने किसी ढर्रे पर चलते हुए काम नहीं किया। आप तो अच्छी तरह जानते हैं कि उन दिनों तो 'टाइप कास्टिंग' होती थी। कलाकार ने करियर की शुरुआत में पहला रोल जिस तरह का किया, उसी तरह के रोल उसे मिलते थे। पर मैंने इस ढर्रे के खिलाफ जा कर 'कर्मा' भी की, 'रामलखन' भी की और 'खोसला का घोंसला' भी की। 'ए वेडनेस्डे' भी की। 'ऐक्सिडेंटल प्राइम मिनिस्टर' की।[77]

अनुपम खेर, फिल्म उत्सव, जानू, मिसाल, राव साहब, अर्जुन और आखिरी रास्ता फिल्मों में विभिन्न सहायक भूमिकाओं में नजर आये। अब तक एक सकारात्मक भूमिका निभा रहे अनुपम खेर सन् 1986 ई. में आई फिल्म 'कर्मा' में एक नकारात्मक किरदार में दिखे। उन्होंने सन् 1986 ई. में सुभाष घई द्वारा बनाई गई एक्शन फिल्म 'कर्मा' में नकारात्मक भूमिका निभाई, जहां उन्होंने एक आतंकवादी संगठन के प्रमुख डॉ. डांग की भूमिका निभाई। उस समय डॉ डांग लोगों के बीच खूब चर्चा में रहे। फिल्मी सफर के शुरूआती दौर सन् 1982 से सन् 2019 तक अनुपम खेर ने अलग-अलग

---

[76] https://in.bookmyshow.com/person/anupam-kher/211 29 Sep. 2020

[77] https://www.sarita.in/bollywood/inetrview-with-anupam-kher 30 July 2019

किरदार, भाषा, क्षेत्र के फिल्मों में काम किया। अनुपम खेर भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के साथ ही अनेक प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय फिल्म 'बेंड इट लाइक बेकहम' (2002), 'लस्ट' और 'कॉशन' (2007), 'स्पीडी सिंह' (2011) में भी दिखाई दिए। बात करें उनकी अंतर्राष्ट्रीय फिल्मों की तो बेंड ईंट लाइक बेकहम, ब्राइड एंड प्रेज्यूडिस, मिस्ट्रेस ऑफ़ स्पाइस, कॉशन और इआर जैसी फिल्मों में उन्होंने काम किया है।[78] (अनुपम खेर की सबसे उल्लेखनीय फिल्मों की सूची हेतु तालिका संख्या 10 देखें।)

अनुपम खेर ने सन् 2002 में आई फिल्म 'ओम जय जगदीश' से निर्देशन तथा सन् 2005 में आई फिल्म 'मैनें गाँधी को नहीं मारा' से निर्माता के रूप में लोगों के समक्ष अपने आप को प्रस्तुत किया।

प्रोडकशन कंपनी की स्थापना: वेबपेज आई.एम.डी.बी. के अनुसार, "Anupam Kher has friend and co-student in Satish Kaushik, at NSD where they started a film production company named Karol bagh Productions. 'Tere Sang' which was directed by Satish was the first film of this production house."[79]

Internal Movie Database के अनुसार, "अब तक अनुपम खेर बतौर अभिनेता 472, बतौर निर्माता 13, बतौर गायक 6 फिल्मों में काम कर चुके है।"[80] सिर्फ फिल्मों की दुनिया में ही नहीं वरन टेलीविज़न की दुनिया में अनुपम खेर ने अपना लोहा मनवाया। सन् 2001 में पहली बार अनुपम खेर ने 'सवाल दस करोड़ का' नामक एक गेम शो में

---

[78] https://www.prabhasakshi.com/entertainmentarticles/acting-school-is-also-called-anupam-kher Mar 7 2017 3:23PM

[79] https://www.iwmbuzz.com/theater/celebrities-theater/bollywood-veteran-anupam-kher-theatre-roots/2019/08/31 31 Aug,2019 05:45:30 PM

[80] https://www.imdb.com/name/nm0451600/ 06 Oct. 2024.

काम किया। सन् 2004 में टी.वी. शो 'से ना समथिंग टू अनुपम अंकल' तथा एक अमेरिकन सिरिज 'ई.आर.' में काम किया। सन् 2014 में अनुपम खेर ने खुद का एक शो जिसका नाम 'अनुपम खेर शो, कुछ भी हो सकता है' शुरू किया। जिसका दूसरा सेशन सन् 2015 में आया था। इस शो का मुख्य उद्देश्य कला से जुड़ी हस्तियों का एक साक्षात्कार के माध्यम से उनके जीवन के इतिहास तथा उतार-चढ़ाव को अपने दर्शकों के साथ साँझा करना तथा प्रेरणा देना था/है। आई.डब्लू.एम.बुज़ वेबसाइत पर प्रकाशित लेख के अनुसार, "Anupam Kher has also written and starred in a play which is his biography named 'Kuchh Bhi Ho Sakta hai' which was directed by Feroz Abbas Khan. This play is featured at the Delhi Theatre Festival and traces the actor's journey from Shimla to Delhi and his struggle in Mumbai as a film actor."[81]

टी. वी. शो 'भारतवर्ष' के साथ-साथ कई स्टेज शो की होस्टिंग में भी बखूबी योगदान रहा है। समय समय पर अनुपम खेर टीवी पर भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवाते रहे और 'से ना समथिंग टू अनुपम अंकल' से उन्होंने टीवी पर अपना पर्दापण किया। इसके बाद उन्होंने सवाल दस करोड़ का, लीड इंडिया और द अनुपम खेर शो जैसे कार्यक्रम दिए। अनुपम खेर ने कुछ फिल्मों में गाने भी गाये हैं जैसे कि श्रीमान आशिक़ और खोसला का घोसला।[82] (अनुपम खेर द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 10 देखें)

---

[81] https://www.iwmbuzz.com/theater/celebrities-theater/bollywood-veteran-anupam-kher-theatre-roots/2019/08/31 31 Aug,2019 05:45:30 PM

[82] https://www.prabhasakshi.com/entertainmentarticles/acting-school-is-also-called-anupam-kher Mar 7 2017 3:23PM

5.11. पंकज कपूर

रंगमंच: पंकज कपूर को अपनी स्कूली शिक्षा के समय से ही अभिनय से लगाव था यही कारण रहा कि पंकज कपूर अपने स्कूली समय से रंगमंच कर्म में जुड़ गये थे। कॉलेज में जाने के बाद इनके मन में अभिनय को करियर बनाने की बात सूझी और फिर इन्होंने अभिनय को करियर बनाने की बात अपने पिता से की तो उन्होंने पंकज को अभिनय की दीक्षा प्राप्त करने की सलाह दी। पंकज कपूर अभिनय की बारिकियों को सीखने के लिए 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' और 'फिल्म एंड टेलीविजन इंस्ट्यूट, पुणे' में आवेदन करते है। अंततः पंकज कपूर 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में अपना नामांकन करवाने में सफल रहते है इस समय इनकी उम्र मात्र 19 वर्ष की थी। नाट्य विद्यालय में पंकज कपूर को इब्राहीम अल्काज़ी जैसी महान हस्ती से अभिनय के गुण सीखने का मौका मिलता है, जिसका वो भरपूर लाभ उठाते हैं।

सन् 1976 ई. में 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' से अपनी शिक्षा समाप्त कर वहीं के रिपेटरी में कार्य करने लगे हालांकि लगभग चार वर्ष पश्चात मजबूरी वश रिपेटरी छोड़नी पड़ी। इन्होंने कई चर्चित नाटकों में अपनी अभिनय क्षमता का परिचय दिया और रंगमंच की दुनिया में कदम जमाया। 'वाएजैक' नाटक जिसे रंजीत कपूर ने निर्देशित किया था, उसमें इन्होंने यादगार अभिनय किया था। 1978 में ये एन.एस.डी. के रंगमंडल में जुड़े और इसमें अगले तीन वर्षों तक कई नामचीन निर्देशकों के मार्गदर्शन में नाटकों में अभिनय किया। इन्होंने 'तिलचट्टा', 'आधे अधूरे', 'सैंया भये कोतवाल', 'मैना गुर्जरी', 'अंकल वान्या', 'द फूल', 'चोपड़ा कमाल नौकर जमाल', 'वरनम वन', 'छोटे सैयद बड़े सैयद' हिंदी नाटक में अभिनय किया और खूब वाहवाही बटोरी।

रिपेटरी में काम करने के दौरान ही उन्हें फिल्म 'गाँधी' में काम करने का मौका मिलता है। राज्यसभा टी.वी. के एक कार्यक्रम गुफ्तगू में बताते है, "फिल्म 'गाँधी' में

काम के दौरान 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के निर्देशक से मुझे आदेश मिलता है कि आप फिल्म छोड़ दें। जबकि मैं लगभग आधी फिल्म में काम कर चुका था। इस कारण मैं फिल्म नहीं छोड़ सका। इसके लिए मुझे रिपेटरी छोड़ने का आदेश मिला और फिर मजबूरी वश मुझे रिपेटरी छोड़नी पड़ी।"[83] पंकज कपूर रिपेटरी में कार्य करने के साथ ही दिल्ली में अन्य संस्थाओं के साथ भी कार्य कर रहे थे। 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के रिपेटरी का छूट जाना, पंकज कपूर के एक परेशानी को बढ़ा रहा था और वो था पैसा। कहीं न कहीं यही सबसे बड़ा कारण भी रहा कि पंकज कपूर रंगमंच से फिल्म की दुनिया में खुद को ले गये। रंगमंच से सिनेमा और टेलीविजन तक अपने हुनर का जलवा बिखेरने वाले पंकज कपूर, सिनेमा और टेलीविजन के बीच में जब कभी इन्हें रंगमंच पर उतरने का मौका मिलता वो उसके लिए हमेशा तैयार रहते हैं।

सिनेमा: पंकज कपूर की फिल्मी शुरूआत फिल्म 'गाँधी' से हुई। 'गाँधी' के शूटिंग के दौरान पंकज कपूर मुंबई में रह रहे थे। फिल्म 'गाँधी' में पंकज कपूर ने गाँधी जी के सिक्रेटरी का रोल निभाया था। साथ ही इस फिल्म में उन्होंने गाँधीजी की डबिंग आवाज़ भी दी। रिचर्ड एटनबरो की विश्वविख्यात फिल्म गाँधी में गाँधी की मुख्य भूमिका में बेन किंग्सले को अपनी प्रभावशाली आवाज देकर पंकज कपूर ने इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में अपनी धमाकेदार शुरुआत की थी।[84] फिल्म गाँधी के शुटिंग के समय इनकी मुलाकात 'श्याम बेनेगल' से होती है। जिन्होंने पंकज को फिल्म 'आरोहन' में कार्य करने का मौका दिया। इस तरह से पंकज कपूर अब रंगमंच की दुनिया से सिनेमा दुनिया में

---

[83] https://youtu.be/0jYh6WiMnmo 19 July 2013, पंकज कपूर के साथ गुफ्तगू (साक्षात्कार), राज्य सभा टी.वी.,

[84] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 255

कदम रखते है। सिनेमा में पंकज कपूर के द्वारा निभाये गये अभिनय को सराहा जाने लगा। उन्होंने श्याम बेनेगल की फिल्म आरोहण से अपना फिल्म सफर शुरु किया था। इसके बाद उन्होंने आर्ट फिल्म 'मंदी' की। जाने भी दो यारों और खामोश जैसी फिल्मों में अभिनय किया। उस दौर में हिंदी सिनेमा में आर्ट फिल्में बनाने का चलन नहीं था, लेकिन कपूर ने उन फिल्मों में काम किया और सबके चहेते बन गये। उनकी पहली नेशनल अवार्ड फिल्म आमिर खान स्टारर 'राख' थी। साल 1992 में आई मणिरत्नम की फिल्म रोजा में उनके अभिनय की आलोचकों ने प्रशंसा की।[85]

सिनेमा में कदम रखने के बाद पंकज कपूर की झोली में ज्यादातर कला फिल्में आती रही। इसके बावजूद भी मुंबई जैसे शहर में सरवाईवल करना मुश्किल हो रहा था। इसके लिए उन्होंने टेलीविजन का रास्ता चुना। इनका टेलीविजन में जाने का किसी भी प्रकार का कोई मन नहीं था लेकिन मुंबई जैसे शहर में टिके रहने के लिए टेलीविजन का रुख किया। पहली बार धारावाहिक 'क्रम चंद' में काम करने का मौका मिला। उसके बाद उन्हें धारावाहिक में मिलने वाले चरित्र ने उन्हें उसमें काम करने को मजबूर कर दिया, और एक के बाद एक अनेकों धारावाहिक में काम करते रहे। राज्यसभा टी.वी. के गुफ़्तगू कार्यक्रम में पंकज बताते है कि - "मनोरंजन के इतने बड़े माध्यम टेलीविजन ने बहुत सारे ऐसे किरदार पेश किये जिसकी चाह मैं रखता था। धारावाहिक 'नीम का पेड़', 'फटिचर', 'कब तक पूकारू', 'क्रम चंद', 'फिलिप्स टॉप टेन', 'ऑफिस-ऑफिस', 'जबान संभाल के', 'लाइफ लाइन' में जिस किरदार को करने का मौका मिला शायद वो मौका सिनेमा, कभी भी नहीं दे पाता।"[86] 1980 में इन्होंने करमचंद नामक धारावाहिक

---

[85] https://hindi.filmibeat.com/celebs/pankaj-kapoor/biography.html Nov. 2020

[86] https://youtu.be/0jYh6WiMnmo 19 July 2013, पंकज कपूर के साथ गुफ्तगू (साक्षात्कार), राज्य सभा टी.वी.

में अभिनय किया जिसका प्रसारण दूरदर्शन पर होता था। सिरियल में काम के दौरान ही इन्हें अनेक फिल्मों के लिए भी ऑफर आते रहे।

भारतीय सिनेमा के इतिहास को देखे तो पाते है कि सत्तर के दशक के बाद कला सिनेमा का क्रेज बढ़ने लगा और कला/समानांतर सिनेमा के लिए ज्यादातर रंगमंच कलाकारों की जरूरत होने लगी। इस प्रकार से जैसे कॅमर्शियल सिनेमा की स्टोरी हीरो को नज़र में रख कर लिखी जाती थी। वही सिलसिला अब कला सिनेमा में होने लगा अभिनेताओं को नज़र में रख कर समानांतर सिनेमा की कहानी गढ़ी जाने लगी और यह स्टोरी पंकज कपूर जैसे तमाम रंगमंच कलाकारों के लिए सार्थक साबित हुआ। उन्हें दुनिया में अपना हुनर दिखाने का मौका प्रदान किया। जिस भूमिका के लिए वो खुद को बेहतर मानते थे। वैसी भूमिकाएं निभाने का मौका कला सिनेमा ने प्रदान किया। हिंदी फिल्मों के अलावा पंजाबी फिल्मों में भी पंकज कपूर ने अपना बेहतर कार्य दिया। इस संदर्भ में रेणु सरण का कहना है, "...He also starred in the classic Punjabi film 'Marhi Da Diva' (1989)."[87] पंकज कपूर फिल्म निर्देशन में भी अपनी भूमिका निभा चुके है। "पंकज ने हिंदी सिनेमा में फिल्म मौसम से अपना निर्देशन किया। इस फिल्म में उनके बेटे शाहिद कपूर और सोनम कपूर नज़र आये थे।"[88] (पंकज कपूर द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 11 देखें)

5.12. पीयूष मिश्रा

रंगमंच: सोलह वर्ष की आयु में पीयूष मिश्रा ने अपने जीवन का पहला नाटक 'व्हू राइट फर्स्ट' में काम किया। जिसमें उन्होंने मुख्य चरित्र 'अब्बू हसन' की भूमिका निभाई थी। यह प्रस्तुति उनके विद्यालय द्वारा करवाई गई थी। इस प्रस्तुति ने उन्हें

---

[87] Saran, Renu, Author, Encyclopedia of Bollywood Film Actor, Page-161

[88] https://hindi.filmibeat.com/celebs/pankaj-kapoor/biography.html Nov. 2020

लोगों के बीच एक खास पहचान दिलाई, इसके बाद उन्होंने नाटक में जाने का मन बना लिया था। निलेश मिश्रा के साथ एक साक्षात्कार में पीयूष बताते हैं, "सन् 1979 ई. में नाटक 'दिल्ली तेरी बात नीराली' में मैंने काम किया। वहाँ से रंगमंच की शुरूआत हुई। उसके बाद 'एवम इंद्रजीत', 'अब्बू हसन', 'अरे शरीफ लोग' भिन्न भिन्न तरह के सन् 1983 ई., चार वर्षों तक लगातार मैं नाटक करता रहा।"[89]

पीयूष रंगमंच के प्रति अपने लगाव एवं प्रतिबद्धता के लिए जाने जाते हैं। वर्ष 1983 में इन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में प्रवेश लेकर विधिवत प्रशिक्षण लिया। विज्ञान संकाय से स्नातक कर रहे पीयूष मिश्रा प्रथम वर्ष के बाद उन्होंने अपनी स्नातक की पढ़ाई छोड़कर 'नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा, नई दिल्ली' में अपना नामांकन करवाया। 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' की पढ़ाई के दौरान ही पीयूष मिश्रा एक अच्छे अभिनेता की श्रेणी में गिने जाने लगे थे। इस दौरान इनके द्वारा किया गया हैमलेट नाटक (हिंदी) बहुत सराहनीय रहा। इस संदर्भ में उनका कहना है, "मेरा अकादमीक पढ़ाई-लिखाई सही नहीं थी, इसमें मेरा मन नहीं लगता था। मेरा मन कविता लिखने-पढ़ने और गाना गाने में लगा रहता था और घर पर अकादमीक पढ़ाई-लिखाई न करके कोई गुजारा तो था नहीं। इस तरह से ग्वालियर में अच्छी जिंदगी नहीं चल रही थी। इसी बीच मेरे दोस्त 'रवि उपाध्याय' ने मुझे मार्गदर्शन करते हुए मुझे एन.एस.डी. के बारे बताया और फिर मैंने उसमें जाने की तैयारी की।"[90] जब पीयूष एनएसडी के तीसरे साल में थे तब उन्हें 'मैंने प्यार किया' फिल्म में काम करने का ऑफर मिला था। मगर ये वो समय था जब पीयूष थिएटर में पूरी तरह से रमे हुए थे। इस वजह से उन्होंने

---

[89] https://youtu.be/snVVjpiPBUg 6 Dec. 2019

[90] https://youtu.be/SS8tsGDDKj4 12 Apr. 2016,

उस फिल्म में काम करने से मना कर दिया था।[91] सन् 1983 से 1986 में पीयूष मिश्रा, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से अपना कोर्स समाप्त करने के बाद जीवन यापन के लिए रिपेटरी में काम करने लगे। वहाँ इनका मन नहीं रमा इस कारण उन्होंने लगभग 18 दिन बाद ही रिपेटरी छोड़ कर दिल्ली में ही अन्य संस्थाओं के साथ रंगमंच करना आरंभ किया। इसी बीच पीयूष मिश्रा ने अभिनेता की चाह लिए मुंबई का रुख किया लेकिन जब वहाँ पर भी कोई बात नहीं बनी तो सन् 1990 ई. में पुनः दिल्ली आकर नाट्य संस्था 'एक्ट वन' में रंगमंच करना आरंभ किया। जयदेव तनेजा के अनुसार, "रंगकर्म करने के इरादे से एन.के.शर्मा के साथ मिलकर नाट्य दल 'एक्ट वन' की स्थापना की और अपनी पूरी रचनात्मक उर्जा एवं बहुमुखी प्रतिभा के साथ सक्रिय हो गये।"[92]

1991 में हिंदी नाटक 'कोर्ट मार्शल' में कर्नल सूरत सिंह का किरदार निभाकर अपनी अभिनय क्षमता का लोहा मनवाया और दर्शकों के दिलों में अपनी विशेष पहचान बना ली। इन्होंने 'होली', 'जब शहर हमारा सोता है', 'महाकुंड का महादान', 'पंख होते तो उड़ जाती', 'आने भी दो यारों', 'लाइफ एंड टाइम्स ऑफ गैलीलियो', 'गगन दमामा बाज्यो', 'वो अब भी पुकारता है', 'झीनी-झीनी', 'महकी-महकी', 'सीली-सीली', 'मुझे भी चाँद चाहिए', 'जिन्हें जल्दी थी वे चले गए', 'खेल-खेल में', 'दुविधा', 'हैमलेट कभी बॉम्बे नहीं गया', 'आइंस्टीन', 'अस्मिता', 'ऑपरेशन थ्री स्टार', 'औरत भली रामकली', 'माधवी', 'पत्तर अनाराँ दें', 'महानिर्वाण', 'हमारे दौर में', 'जंगल बुक से आगे' नाटकों में काम

---

[91] https://www.aajtak.in/entertainment/bollywood-news/story/piyush-mishra-bollywood-actor-film-industry-movies-maine-pyar-kiya-salman-khan-tmov-1191434-2021-01-13 26 June 2020

[92] तनेजा, जयदेव, लेखक, रंगकर्मी कोश: भरतमुनि के आधुनिक वंशज, पृ. 255

किया। सन् 1995 में 'एक्ट वन' से खुद को अलग कर उन्होंने एकल अभिनय (रंगमंच) करना आरंभ किया। गुफ्तगू साक्षात्कार में पियूश मिश्रा बताते है कि- " 'एक्ट वन' के समय अर्थात सन् 1990 ई. से सन् 1995 ई. का समय मेरे लिए गोल्डन समय रहा। इस समय मैंने हर वो कार्य किया जिसकी मैं चाह रखता था।"[93] 'अस्मिता' नाट्य संस्था में भी पियूष मिश्रा दो वर्षो तक रंगमंच करते रहे। इस समय वह लगभग एकल नाट्य में कार्य करते थे। इसमें तीन नाटक मुख्य थे। निर्मल वर्मा की 'दूसरी दुनिया', विजय दानदेता की 'दुविधा' और अर्नोल्ड वेस्कर का 'वाटयेबर हैपेन टू बेट्टी लेमन'। नाटक 'वाटयेबर हैपेन टू बेट्टी लेमन' में पियूष मिश्रा औरत की भूमिका निभाया करते थे। इसके बाद वे अपना बहुमूल्य समय 'कैंपस थियेटर' में बिताने लगे। कैंपस थियेटर के दौरान उन्होंने 'श्री राम सेंटर', 'हिंदु कॉलेज', 'गार्गी कॉलेज' में बढ़ चढ़कर रंगमंच किया।

पीयूष मिश्रा रंगमंच के लिए सन् 1983 ई. में अपने घर से दिल्ली आते है तब से लेकर सन् 2003 ई. तक लगातार कड़ी मेहनत के साथ पीयूष मिश्रा दिल्ली में रंगमंच करते रहे। सन् 1979 ई. में रंगमंच की शुरूआत करने वाले पीयूष मिश्रा अब तक लगभग 40 से भी ज्यादा नाटकों मे काम कर चुके हैं। जिनमें मुख्यतः 'हैमलेट', 'दिल्ली तेरी बात निराली', 'अरे सरीफ लोग', 'एवम इंद्रजीत', 'आधे-अधुरे', 'लहरों का राजहंस', 'आषाढ के एक दिन', 'ऊरूभंगम्', 'एंड गेम', 'कोर्ट मार्सल', 'गगन दमामा बाज्यो' नाटक शामिल है।

सन् 2003 ई. में पीयूष मिश्रा का फिल्मी सफर शुरू हुआ वो अब भी चलता आ रहा है। उस समय से सन् 2019 तक उन्होंने एक लंबे अरसे तक रंगमंच से दूरी बना ली थी। लगभग सोलह वर्ष तक पियूष मिश्रा मंच प्रस्तुतियों से दूर रहे। इन दिनों

[93] https://youtu.be/SS8tsGDDKj4 12 Apr. 2016

वे सिनेमा में काम करते रहे। एक लंबे अरसे तक सिनेमा में काम करने के बाद, उससे प्राप्त भौतिक सुख सुविधा, पैसा, नाम से भी उनका दिल उतना संतुष्ट नहीं था जितना रंगमंच करने पर प्राप्त होता था। इस कारण फिल्मों के साथ-साथ ही वे पुनः सन् 2019 ई. में नाटक 'गगन दमामा बाज्यों' से उन्होंने खुद को रंगमंच प्रस्तुतियों में उतारा। अपने एक साक्षात्कार में पीयूष बताते हैं, "मैं रंगमंच से सोलह साल दूर रहा। पिछले तीन महीनों से सिनेमा का काम छोड़कर मैंने अपने नाटक 'गगन दमामा बाज्यो' का शोज़ किये। ...और जितना खुश मैं पिछले तीन महीनों में हूँ उतना खुश मैं पिछले सोलह सालों में नहीं रहा।"[94] 'गगन डमामा बाज्यो' नाटक पीयूष मिश्रा द्वारा सन् 1994 में लिखा गया था। इस नाटक में भगत सिंह के जीवन के अनछुए पहलू को दिखाया गया है। 'गगन डमामा बाज्यो' नाटक को हिंदी रंगमंच में एक उच्च स्थान प्राप्त है।

रंगमंच की दुनिया से बाहर निकल कर फिल्मों में एक मुकाम हासिल करने के बाद भी पीयूष मिश्रा पुनः रंगमंच में आते है और उसे जीते है। इससे रंगमंच के प्रति गहरे लगाव का पता चलता है। पीयूष मिश्रा द्वारा किये गये हिंदी नाटक में नाटक दिल्ली तेरी बात निराली, अरे शरीफ़ लोगो, छाया रहित पुरुष, अबू हसन, एवम इंद्रजीत, बहुत बड़ा सवाल, मशरिक, सपना काली का, आधे-अधुरे, लहरों का राजहंस, आषाढ़ का ए दिन, छोटा गांव, ऊरूभंगम, मनुष्य बराबर मनुष्य, पुल से एक दृश्य, राजा गोपीचंद, अभिज्ञान शकुन्तला, आतंक की कॉमेडी, हम सब दाताराम, आर्सेनिक और पुराना फीता, अंत खेल, कोर्ट मार्शल, पवित्र, सुनो रे क़िस्सा, हमारे दौर में, जब शहर हमारा सोता है, आतंक की कॉमेडी महाकुंड का महादान, गैलीलियो का जीवन और समय, ये जो

[94]https://youtu.be/2HE56m20hgU 6 Dec. 2019

जिंदगी है न, आने भी दो यारो, वो जब भी पुकारता है, गगन दमामा बाज्यो, एक बार अमेरिका में, झीनी झीनी महकी महकी सीली सीली, दूसरी दुनिया, दुविधा, बेट्टी लेमन के साथ जो कुछ भी हुआ, एक अराजकतावादी की आकस्मिक मृत्यु शामिल है।

शीर्षक 'तुम्हारी औक़ात क्या है', 'आरम्भ है प्रचंड', 'तुम मेरी जान हो रज़िया बी', मेरे मंच की सरगम', 'कुछ इश्क़ किया कुछ काम किया', 'जब शहर हमारा सोता है', 'गगन दमामा बाज्यो', 'वो अब भी पुकारता है', 'सन् 2025' पुस्तक के लेखन का श्रेय भी पीयूष मिश्रा को जाता है। आधुनिक समय में पीयूष मिश्रा रंगमंच के साथ ही ओ. टी. टी. प्लेटफॉर्म पर भी कार्य कर रहे है। हिंदी रंगमंच जगत में पीयूष मिश्रा का बहुआयामी योगदान देखने को मिलता है।

सिनेमा कार्य: आज तक की एक रिपोर्ट के अनुसार, "पीयूष के बॉलीवुड करियर की तरफ रुख करें तो एक्टर ने साल 1998 में शाहरुख खान की फिल्म से अपने करियर की शुरुआत की थी। फिल्म में उनका छोटा सा रोल था।"[95] फिल्म 'दिल से' में सीबीआई ऑफिसर का छोटा सा रोल होने के बाद भी पीयूष अपनी छाप छोड़ने में सफल रहे। इसके बाद वे मकबूल, दीवार, झूम बराबर झूम, हैपी भाग जाएगी, रॉकस्टार, गैंग्स ऑफ वासेयपुर, रिवॉल्वर रानी, तेरे बिन लादेन, पिंक और संजू जैसी फिल्मों में नजर आ चुके हैं। एक्टर के करियर में जो दो फिल्में टर्निंग प्वाइंट रही हैं वो हैं फिल्म 'गुलाल' और 'गैंग्स ऑफ वासेपुर'। दोनों फिल्मों में पीयूष मिश्रा के अभिनय की खूब

---

[95] https://www.aajtak.in/entertainment/bollywood-news/story/piyush-mishra-bollywood-actor-film-industry-movies-maine-pyar-kiya-salman-khan-tmov-1191434-2021-01-13 26 June 2020

तारीफ की गई थी। जैसे एक जमाने में पीयूष मिश्रा के थियेटर शोज़ को देखने के लिए भीड़ जुटती थी, वही भीड़ आज उनके कॉसर्ट्स में नजर आता है।[96]

दिल्ली में रहकर रंगमंच कर रहे पीयूष मिश्रा ने चालीस की उम्र में मुंबई में सेटल होने का प्लान बनाया और अंततः सन् 2003 ई. में वे अपने परिवार के साथ मुंबई में जा बसे। मुंबई में जाते ही पियूष मिश्रा को फिल्मी दुनिया में काम मिलना शुरू हो गया। वहाँ जाते ही विशाल भारद्वाज की फिल्म 'मकबूल' में अभिनय का मौका मिल गया, मनोज वाजपेयी ने एक फिल्म पटकथा लिखने का कार्य दिया, सुजीत सरकार ने अपनी पहली फिल्म 'यहाँ' के स्क्रीन प्ले डॉयलग लिखने को दिये। इस तरह से फिल्मी दुनिया में उनके पाँव जम गये।[97] इन सब कामों के माध्यम से पीयूष मिश्रा अपना तथा अपने परिवार का जीवन तो चला पा रहे थे लेकिन फिल्मी दुनिया में उनको वो पहचान या काम नहीं मिल रहा था जिसकी वो कल्पना रखते थे।

सन् 2009 ई. में निर्देशक अनुराग कश्यप की फिल्म 'गुलाल' से पीयूष मिश्रा को एक पहचान मिली। इसके बाद उनके हुनर का जलवा भारतीय सिनेमा में भी दिखने लगा। अब तक 35 से ज्यादा फिल्मों में काम करने वाले पियूष मिश्रा, फिल्मों में न सिर्फ अभिनय के लिए बल्कि अपने संगीत और लेखन के लिए भी जाने जाते हैं। सन् 2003 ई. में मुंबई में बसने से पूर्व पीयूष मिश्रा 'भारत एक खोज', 'राजधानी' नामक टेलिविज़न धारावाहिक में काम कर चुके थे। पीयूष मिश्रा मुख्यतः लेखन, गायन और अभिनय के लिए जाने जाते हैं।

---

[96] https://www.aajtak.in/entertainment/bollywood-news/story/piyush-mishra-bollywood-actor-film-industry-movies-maine-pyar-kiya-salman-khan-tmov-1191434-2021-01-13 26 June 2020

[97] https://youtu.be/snVVjpiPBUg 6 Dec. 2019,

संगीतकार के रूप में: संगीत की दुनिया में भी पीयूष मिश्रा का नाम आदर के साथ लिया जाता है। फिल्म गुलाल (2009), लाहौर (2010) (गीत: 'ओ रे बंदे'), गैंग्स ऑफ वासेपुर (2012), (गीत: 'मनमौजी' और 'इक बगल'), जलपरी (2012) (गीत: 'बरगद के पेड़ों'), शीशमहल (2024) (गीत: 'होता है') में बतौर संगीतकार एवं 'आरंभ है प्रचंड' (गुलाल - 2009), 'दुनिया' (गुलाल - 2009), 'जब शहर हमारा' (गुलाल - 2009), 'इक बगल में (गैंग्स ऑफ वासेपुर-2012) आदि में बतौर गायक पीयूष मिश्रा ने कार्य किया। रंगमंच और सिनेमा के पर्दे पर अलग पहचान रखने वाले पीयूष मिश्रा अपने गीतों के माध्यम से राजनीति जगत में भी जाने जाते हैं। क्रिकेट वर्ल्ड कप और सेना के कार्यक्रमों में भी उनके गीतों की गूंज सुनाई देती है। नवभारत टाईम्स के एक रिपोर्ट के अनुसार, "उन्हें खुशी है कि भले ही उन्हें इस सब के लिए रॉयल्टी नहीं मिलती हो लेकिन ये गाने लोगों को पसंद आते हैं। पीयूष के मुताबिक उनका लिखा गाना 'आरंभ है प्रचंड' सबसे ज्यादा इस्तेमाल किया गया है।"[98] पीयूष मिश्रा ने लीजेंड ऑफ भगत सिंह (2002), यहां (2005), 1971 (2007), गजनी (2008), लाहौर (2010), चटगाँव (2011), अग्निपथ (2012), शमशेरा (2022) फिल्मों में संवाद तथा पटलेखन का कार्य भी किया। (पीयूष मिश्रा द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 12 देखें)

5.13. सौरभ शुक्ला

रंगमंच: प्रदर्शनकारी कला से सौरभ का नाता बचपन से ही रहा और फिर एक समय आया कि अपने कॉलेज में कॉमर्स का छात्र रहा विद्यार्थी, सन् 1984 ई. में कॉमर्स की दुनिया से बाहर निकलकर, उन्होंने रंगमंच में अपना करियर बनाने का

---

[98] https://navbharattimes.indiatimes.com/movie-masti/news-from-bollywood/actor-piyush-mishra-talks-about-his-career-films-and-nepotism-in-bollywood/articleshow/78071040.cms 12 Sep 2020, 9:23 am

फैसला किया और रंगमंच समूह से जुड़ गये। सौरण शुक्ला अने ए साक्षात्कार में बताते हैं, "गाना गाने, कहानी पढ़ने और सुनाने तथा लिखने का शौक मुझे बचपन से था। फिल्म बनाने का शौक भी मुझे बचपन से रहा। अपने दोस्तों को झांसा दे रखा था कि थोड़े पैसे हो जायेंगे तो मिलकर फिल्म बनायेंगे। बहुत समय तक यही चलता रहा। फिर एक दिन एक दोस्त ने कहा कि क्यों न हम रंगमंच करें क्योंकि इसमें फिल्मों जैसे पैसों की जरूरत नहीं है और इसमें भी हम फिल्मों की तरह सारे काम लेखन, गायन, अभिनय, निर्देशक आदि सब कर सकते है। यहाँ से मैंने रंगमंच करना आरंभ किया।"[99] शुरूआत में सौरभ शुक्ला ने रंगमंच के जिस चकाचौंध को देखकर रंगमंच में आने का फैसला किया था। बहुत ही कम समय में वो चकाचौंध से एक गंभीर रूप में तब्दील हो गया और सौरभ शुक्ला 'साक्षी नाट्य संस्था' दिल्ली से जुड़ कर गंभीर रूप से रंगमंच करने लगे। जिसके लिए उन्होंने साहित्य, इतिहास, राजनीति आदि सब की पढ़ाई में उनका मन रमने लगा तथा रंगमंच के लिए उसका अध्ययन करने लगे। उनका पहला नाट्य प्रस्तुति 'बल्लभपूर की रूप कथा' रही जिसका लेखक 'बादल सरकार' थे।

इसके बाद उन्होंने 'आर्थर मिलियर' के नाटक 'अ व्यू फॉम द ब्रिज' के मंचन में हिस्सा लिया और इस नाटक ने सौरभ शुक्ला को नाट्य दूनिया में एक अलग पहचान दिलाई। जिस पेशे या कार्य को अपने अंदर बचपन से तलाश रहे थे वो अब जाकर इन्हें प्राप्त हुआ। नाटक 'अ व्यू फॉम द ब्रिज' से एक पहचान मिलने के बाद उन्होंने फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। खुद को रंगमंच के लिए न्योछावर कर दिया। इसके बाद 'लूक बैक इन एंगर', 'घासी राम कोतवाल', 'हयवदन' जैसे विशेष हिंदी नाटकों की प्रस्तुति में सौरभ शुक्ला ने अविश्वसनिय भूमिका निभाई। इस भूमिका ने उन्हें

[99] https://youtu.be/qXQVaWGCbN0 10 January 2016

रंगमंच जगत में एक उच्च श्रेणी के अभिनेता में ला खड़ा किया। इस तरह से सन् 1991 ई. तक साक्षी ग्रुप के साथ मिलकर नाटक करते रहे। इस बीच उन्होंने कई बार 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में भी नामांकन के लिए आवेदन दिया लेकिन किसी कारण वश उनका नामांकन नहीं हो पाया। सन् 1991 ई. में वे 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के रिपेटरी कंपनी में बतौर अभिनेता जॉब के लिए आवेदन करते है और वहाँ उनका चयन हो जाता है। रिपेटरी कंपनी में उन्होंने लगभग दो वर्षों तक काम किया। उसके बाद उन्होंने बचपन के सपने को साकार करने के लिए सिनेमा की दुनिया में काम करना शुरू किया।

फिल्मों में एक सफल मुकाम हासिल करने के बाद भी सौरभ शुक्ला रंगमंच से जुड़े रहे। उनके दिल में जितनी जगह फिल्मों के लिए है उससे ज्यादा रंगमंच के लिए। इंडिया टीवी के एक रिपोर्ट के अनुसार, "सौरभ खुद एक थिएटर आर्टिस्ट हैं। जब उनसे पूछा गया कि क्या फिल्मों की वजह से थियेटर खत्म हो रहा है, इस पर उन्होंने कहा, नहीं..बिलकुल नहीं, यह पिछले 100 सालों से कहा जा रहा है कि सिनेमा के आने से यह खत्म हो जाएगा या हो गया है। जब टेलीविजन आया तो लोग कहने लगे कि सिनेमा मर जाएगा, लेकिन वह नहीं मरा और अब डिजिटल के आने से लोग कह रहे हैं कि टेलीविजन खत्म हो जाएगा..कुछ खत्म नहीं होता है, सबकी अपनी-अपनी जगह है।"[100]

भौतिकवादी युग में पैसे की अहमियत के कारण सिनेमा, थियेटर से आगे है। सिनेमा में पैसा ज्यादा है इसलिए सिनेमा में सफलता के बाद आमतौर पर कलाकार

---

[100] https://www.indiatv.in/entertainment/bollywood-saurabh-shukla-wants-to-play-other-role-580213 April 29, 2018 9:36 IST

थियेटर को कम समय दे पाते है। सौरभ के मुताबिक, “बात यह है कि थियेटर हमेशा से पैसे के मामले में मुश्किल में रहा है। उसे उतना पैसा नहीं मिल पाया। यह बहुत बड़ी आर्थिक गतिविधि नहीं है। ऐसा नहीं है कि थियेटर में कोई कुछ नहीं कर रहा है, यहां भी बहुत अच्छा काम हो रहा है।”[101] सौरभ को रंगमंच से लगाव है इस बात को वह अपने कई साक्षात्कारों में बयां कर चुके हैं। रंगमंच को वे अभिनय सीखने का सबसे अच्छा ज़रिया बताते हैं। वे ज्यादा से ज्यादा युवाओं को रंगमंच से जोड़ने के लिए प्रेरित भी करते हैं। सिनेमा में तमाम व्यस्तताओं के बावजूद वे रंगमंच से किसी न किसी तरह जुड़े हुए हैं। लम्बे समय बाद उन्होंने ‘रेड हॉट’ नामक नाटक का निर्देशन किया। इस संदर्भ में रंगविमर्श ब्लॉग पर लिखा मलता है, “नाटक एक ऐसे इंसान कि कहानी है जो अपनी आधी ज़िन्दगी नीरसता में गुजार चुका है और अब बाकि की ज़िन्दगी में कुछ रस, वस्तुतः प्रेम रस भरना चाहता है। पेशे से एक होटल का मालिक परमीत सिंह सेठी अपनी तमाम ज़िन्दगी दूसरों के लिए जीता है। पत्नी और माँ के रोजाना झगड़ों के चलते अपनी माँ को सरोजनी नगर में एक फ्लैट भी देता है। सेठी की माँ हर शनिवार को शाम को बाहर रहती हैं और वह इसका फ़ायदा उठाना चाहता है।”[102] लम्बे अंतराल के बाद सौरभ का थियेटर से जुड़ना और ऐसे नाटक का निर्देशन करना जो स्त्री-पुरुष संबंधों पर आधारित है। दर्शकों को पसंद आता है। बेहतरीन अभिनय एवं संवादशैली के कारण सौरभ दर्शकों के दिल में छा जाते हैं। सौरभ शुक्ला रंगमंच की दुनिया में विशेष कर हिंदी रंगमंच में जाने जाते हैं। सौरभ शुक्ला फिल्म और रंगमंच

---

[101] https://www.indiatv.in/entertainment/bollywood-saurabh-shukla-wants-to-play-other-role-580213 April 29, 2018 9:36 IST

[102] https://rangwimarsh.blogspot.com/2012/01/blog-post_26.html 26 Jan 2012

जगत में एक मिसाल हैं जो फिल्म के साथ ही रंगमंच को अपने दिल में जिंदा रखे हुए है और उसमें अपना बहुमूल्य योगदान देते आ रहे हैं।

सिनेमा: सौरभ शुक्ला की पहली फिल्म, निर्देशक 'शेखर कपूर' के साथ रही। अमर उजाला के एक लेख के अनुसार, "सौरभ शुक्ला ने अपने कैरियर की शुरुआत 1984 में थियेटर से की। सिनेमा में सबसे पहला मौका उन्हें शेखर कपूर ने फिल्म बैडिंट क्वीन में दिया।"[103] बैंडिट क्विन से फिल्मी कैरियर की शुरूआत करने वाले सौरभ शुक्ला अब तक लगभग सौ फिल्मों में काम कर चुके हैं। फिल्म 'सत्या' में निभाए गये किरदार 'कल्लु मामा' से इन्हें राष्ट्रीय पहचान मिली।[104] फिल्म 'बैंडित क्विन' के लिए उन्हें दिल्ली से मुंबई की ओर रूख करना पड़ा और उसके बाद वो मुंबई में ही रहने लगे। मुंबई में जाने के बाद सौरभ शुक्ला न सिर्फ अपने अभिनय की दुनिया में बल्कि लेखन (पटकथा, सिरीज़, सीरियल, गाना), निर्देशन आदि की दुनिया में अपनी किस्मत आज़माने लगे। उनकी पहली फिल्म सन् 1994 ई. में रिलीज़ हुई। फिल्म की दुनिया में भी सौरभ शुक्ला के कार्य को पसंद किया गया। इसी साल उन्हें दूरदर्शन द्वारा बनाये जा रहे क्राइम ड्रामा 'तहकिकात' में काम करने का मौका मिला। सन् 1997 में उन्होंने टेलीविजन सिरीज़ 'नौ मालाबार हिल' में भी अभिनय किया। इस तरह से उन्होंने अपने फिल्मी और टेलीविजन करियर की शुरूआत की।

फिल्म 'सत्या' से उन्हें बतौर लेखक भी पहचान मिली। इस संदर्भ में सौरभ शुक्ला अने ए साक्षात्कार में बताते हैं, "Shukla's biggest break came when he co-wrote the script for Ram Gopal Varma's 1998 cult classic Satya and

---

[103] https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/saurabh-shukla-birthday-special-here-know-about-him?pageId=2 July 2020 11:38 IST

[104] https://youtu.be/qXQVaWGCbN0 10 January 2016

essayed the role of gangster Kallu mama in the film. He won the Star Screen Award for best screenplay alongside Anurag Kashyap."[105] फिल्म सत्या में सौरभ शुक्ला के अभिनय को भी खूब सराहा गया। सौरभ शुक्ला सीरियल और थियेटर नाटकों में व्यस्त रहे। इस बीच 1998 में उन्हें सबसे बड़ा ब्रेक राम गोपाल वर्मा ने अपनी फिल्म सत्या में दिया, जिसमें वह गैंगस्टर कल्लू मामा के रोल में दिखे। फिल्म के बाद सौरभ शुक्ला कल्लू मामा के नाम से मशहूर हो गए।[106]

फिल्म लेखन कार्य: इन्होंने कलकत्ता मेल, मुंबई एक्सप्रेस, एसीड फैक्ट्री, पप्पू कॉट डांस साला, दिल पे मत ले यार, रघु रोमियो, मुद्दा - मुद्दा, चेहरा, सलाम-ए-इश्क: प्यार को श्रद्धांजलि, मिथ्या, रात गई बात गई, उत्तर पतंग, मोटा, मैं हूं 24, शुष्क दिवस फिल्मों में बतौर लेखक अपनी भूमिका अदा की। सिर्फ फिल्मों में ही नहीं रंगमंच के दुनिया में भी उनके लेखन प्रसिद्ध है। सन् 2019 में उनके द्वारा लिखा गये नाटक 'बर्फ' का प्रकाशन हुआ।

फिल्म सत्या में मिली सफलता और प्रसिद्धि के बाद भी सौरभ को मनमाफ़िक काम नहीं मिला। लेकिन अभिनय के क्षेत्र में रंग जमाने की जिद में वे अपने कर्म क्षेत्र में अड़े रहे। एक इंटरव्यू में सौरभ कहते हैं कि "सत्या के बाद मुझे वैसा काम नहीं मिल रहा था जैसा मैं चाहता था। इसके लिए मुझे 10 साल का इंतजार करना पड़ा। लोग मेरे काम की तारीफें तो करते थे लेकिन काम नहीं मिलता था। 10 साल मेरे लिए बहुत मुश्किलों भरे रहे। मेरे करियर की दूसरी पारी फिल्म बर्फी से शुरू हुई। उसके बाद

---

[105]https://www.imdb.com/name/nm0795661/bio?ref_=nm_ov_bio_sm 25 Feb. 2021

[106] https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/saurabh-shukla-birthday-special-here-know-about-him?pageId=3 05 Mar 2021 08:58 AM IST

जॉली एलएलबी ने सबकुछ बदल दिया और कई अच्छी फिल्में मिलीं।"[107] फिल्म जॉली एल.एल.बी. में सौरभ द्वारा निभाया किरदार जस्टिस सुंदरलाल त्रिपाठी यादगार बन गया। इस किरदार के साथ न्याय करने के लिए सौरभ ने कड़ा अभ्यास किया था। सौरभ को अपने किरदारों से बहुत लगाव होता है। वे हर किरदार को जीवंत करने का प्रयास करते हैं। इसके लिए केवल अभ्यास ही नहीं करते बल्कि गहरा मंथन भी करते हैं। फिल्म 'जॉली एलएलबी' के न्यायधीश वाली भूमिका पर भी सौरभ ने खूब चिंतन-मनन किया था। सौरभ कहते हैं कि " 'जॉली एलएलबी से पहले हिंदी फिल्मों में जज को एक कार्डबोर्ड कैरेक्टर के तौर पर देखा जाता था, एक इंसान के तौर पर नहीं। आखिर वह भी इंसान है। तो उसमें इंसानियत के सूत्र तलाशे गए कि सुंदरलाल त्रिपाठी रहता कहां होगा, तनख्वाह कितनी होगी? अमेरिका का जज तो है नहीं कि एक बंगला होगा और वहां एक उसका लैब्राडॉग होगा और चार पांच नौकर चाकर होंगे। नहीं, ऐसा जज वह है नहीं, वह तो आम जिंदगी जीने वाला जज है।"[108] (सौरभ शुक्ला द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 13 देखें)

5.14. यशपाल शर्मा

रंगमंच: नाटक के बारे में उन्हें बाल्यावस्था से ही जानकारी थी क्योंकि इनका परिवार रामलीला देखने जाता तो इन्हें भी साथ ले जाया करता था। इस तरह यशपाल का नाटक से लगाव बचपन से रहा लेकिन मंच पर जाने के डर से उसमें भाग नहीं ले पाते थे। इन सब के बीच यशपाल को कविता पाठ से बहुत लगाव था। कविताएं बहुत

---

[107] https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/saurabh-shukla-birthday-special-here-know-about-him?pageId=3 05 Mar 2021 08:58 AM IST

[108] https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/saurabh-shukla-birthday-special-here-know-about-him?pageId=5 05 Mar 2021 08:58 AM IST

पढ़ा करते थे तथा उसे अपने स्मरण में संजो कर भी रखा करते थे। एक बार बहुत हिम्मत जुटा कर कॉलेज की कविता प्रतियोगिता में इन्होंने हिस्सा लिया। यशपाल जी अपनी पहले स्टेज के बारे में बताते है कि- इसी कविता के लिए वे अपने जीवन में पहली बार स्टेज पर चढ़े। उनकी कविता की प्रस्तुति इतनी सफल रही कि उस प्रस्तुति के लिए उन्हें प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। इस प्रस्तुति के बाद इनके अंदर खुद के प्रति आत्मविश्वास बढ़ा। इसके बाद यशपाल शर्मा ने नाटक की ओर कदम रखा।[109] “यशपाल ने बताया कि कॉलेज में स्टेज पर चढ़ने में बहुत डर लगता था, लेकिन मैंने कविताएं बहुत याद की थी। एक बार टैलेंट सर्च प्रोग्राम में अपना नाम लिखवा दिया। मुझे कविता इतनी याद थी कि कई सालों से थिएटर करने वालों को मैं पीछे छोड़कर फर्स्ट आया। वहां से मेरा कॉन्फिडेंस बढ़ा और मैंने सोचा कि मुझे नाटक ही करना है।”[110]

राज्यसभा टी.वी. के कार्यक्रम, ‘गुफ़्तगू यशपाल के साथ’ के अनुसार उनके जीवन में ‘राजीव मंचनदा’ का बहुत सहयोग रहा, जिन्होंने यशपाल को नाटक के बारे में बारीकी से समझाया। जब ‘राजीव मंचनदा’ (एन. एस. डी. के छात्र रह चुके थे) के बारे में पता चलता है जो हिसार में नाटक कर रहे थे। तो उनके साथ यशपाल शर्मा ने नाटक ‘बेचारा भगवान’ में काम किया। यह नाटक यशपाल के जीवन का पहला नाटक रहा। स्कूली समय में यशपाल ने अपने आस-पास के क्षेत्र में रामलीला करना भी शुरू किया जिसमें नये-नये प्रयोग करने के साथ ही भाँति-भाँति की भूमिका भी निभाया करते थे। इस तरह से यशपाल के दिल में नाटक के प्रति लगाव बनता चला गया और

---

[109] https://youtu.be/I-fS6TcN8s0?si=DZa8hmpmO5utGQqj 19 Aug. 2020.

[110] https://www.bhaskar.com/news/HAR-PAN-HMU-haryanvi-film-actor-yashpal-sharma-interview-news-hindi-5421254-PHO.html 19 Aug. 2020

वो खुद नाटक की दुनिया में कूद पड़े। कॉलेज के समय में वे अपने कॉलेज में अभिनेता के तौर पर जाने जाते थे। यहाँ तक कि स्नातक के बाद कॉलेज के शिक्षक ने उन्हें ये कहकर स्नातकोत्तर में दाखिला दिलाया है कि तुम सिर्फ कॉलेज के होने वाले नाटकों में कार्य करना। क्लास करने की आवश्यकता नहीं है। हालांकि यह स्नातकोत्तर की पढ़ाई उन्होंने बीच में छोड़ दी क्योंकि यशपाल 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में अपना नामांकन कराना चाहते थे।

नसीरुद्दीन शाह के कार्य के दिवाने यशपाल शर्मा नाटक के लिए अपने घर से भाग दिल्ली आ गये थे। जहाँ उन्होंने 'खिलौना' ग्रुप में भी बतौर अभिनेता कार्य किया। जहाँ उन्हें कार्य करने के सात सौ रू. मिलते थे। यशपाल जी अपने एक साक्षात्कार में बताते है कि- "अखबार में नाटक प्रदर्शन का इश्तिहार देखा जिसमें नसीरुद्दीन शाह, कुलभूषण जैसे महान कलाकार की पंद्रह प्रस्तुति होनी थी। मैं इसे देखने से चूकना नहीं चाहता था फिर क्या था नाटक देखने के लिए मैं घर से दो दिनों के लिए दिल्ली भाग आया था लेकिन यहाँ साढ़े चार महीने रुक गया और उस समय मैं घर पर चाँदी का व्यवसाय करता था जो बंद हो गया। उसी चार महीनों के समय में मैंने बी. के. शर्मा का 'खिलौना' ग्रुप ज्वाइन किया था।"[111] दिल्ली में नाटक करने के दौरान उन्हें अनुमान हुआ कि दिल्ली में रहते हुए 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में नामांकन लेना बहुत मुश्किल होगा इसलिए वापस अपने शहर हिसार चले आये। कुछ समय नाटक करने के बाद वे 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में आवेदन करते है लेकिन तीन बार कोशिश करने के बाद भी जब उनका नामांकन 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में नहीं हो पाया तो वो 'पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़' में नाटक विषय से

[111] https://youtu.be/I-fS6TcN8s0?si=DZa8hmpmO5utGQqj 19 Aug. 2020.

स्नातकोत्तर हेतु उन्होंने अपना नामांकन करवाया। इस कोर्स के दौरान भी उन्होंने 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में नामांकन की कोशिश जारी रखी और लगभग एक वर्ष बाद सिलेक्शन हो जाता है फिर वो 'पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़' का स्नातकोत्तर की पढ़ाई बीच में ही छोड़कर नाटक के गुणों को विशेष ढंग से सीखने के इरादे से 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में चले जाते है। यहाँ तीन साल अभिनेता की तैयारी करने के बाद 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में ही दो वर्ष तक वहाँ के रिपेटरी में काम करते रहें। जहाँ उन्होंने ययाति, आधे-अधुरे, हैमलेट, कोर्ट मार्शल आदि नाटकों में काम किया।

'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में आने के पश्चात यशपाल शर्मा का एक इरादा था कि वो 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' से अपने अभिनय की शिक्षा समाप्त करने के बाद वो खुद अपने शहर हिसार में 'चिल्ड्रन रंगमंच' करेंगे लेकिन जब दिल्ली में इनके अभिनय की तारीफ होने लगी तो उन्होंने अपने इरादे को कुछ समय के लिए विराम लगाकर खुद को अभिनय की दुनिया से जोड़े रखने और अपने अभिनय का हुनर ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के मकसद से वो मुंबई की तरफ रूख करते हैं। या फिर कह सकते हैं कि फिल्मों में अपनी किस्मत आजमाने के लिए दिल्ली से मुंबई की ओर प्रस्थान कर गये।

एक रंगमंच कलाकार, फिल्मी दुनिया में एक ऊंचाई को पा तो लेता है जिसमें उसके पास नाम, फेम, पैसा आदि सब होता है लेकिन कहीं न कहीं उनके दिल में रंगमंच के लिए बेचैनी रहती है कि कब मौका मिले कि रंगमंच की दुनिया को जियूं। यही हाल यशपाल शर्मा के साथ भी हुआ। फिल्मों में काम करने के साथ ही वो रंगमंच से जुड़े रहे। उनका कहीं न कहीं ये एक सपना भी था की अपने शहर हिसार में वो रंगमंच को और सशक्त बनायें। उन्होंने एक साक्षात्कार में कहा भी था कि जितनी

संतुष्टि उन्हें रंगमंच से प्राप्त होती है उतनी फिल्म और टेलीविजन से नहीं। द हिंदु वेबसाइट पर प्रकाशित लेख के अनुसार, “You started off with theatre, then films and now the television. Which one is the best for you? There is not much difference between these fields. The film line is more technical compared to theatre. I enjoy doing films which happen in one schedule. Films get you fame. Television requires more hard work as we have to meet deadlines. For me, theatre is the best medium to express myself. One needs to surrender oneself completely to get that perfection with which one can connect to the audiences while performing on stage.”[112] आधुनिक समय में भी यशपाल शर्मा फिल्मों से ज्यादा रंगमंच के प्रति सक्रिय हैं। अपने शहर हिसार तथा अन्य जगहों पर 'राष्ट्रीय नाटय़ विद्यालय, नई दिल्ली' के भूतपूर्व छात्रों तथा अन्य रंगमंच कलाकरों के साथ रंगमंच में व्यस्त होते है। इसके बाद अपने फेस्टिवल फिल्मों को समय देते हैं। यशपाल शर्मा उन कलाकारों की सूचि में शामिल है जो फिल्मों में जाने के बाद भी रंगमंच को अपने दिल में लिए जीते हैं।

सिनेमा कार्य: यशपाल, मुंबई जाने के पूर्व 'आदर्श' नामक एक धारावाहिक में काम कर चुके थे। ये इनके लिए टेलीविजन का पहला कार्य था। मुंबई में आने के बाद लगभग दो-ढाई वर्षों तक काम न के बराबर मिला। कभी-कभार आहट तथा सी.आई.डी. जैसे किसी एकाध एपिसोड में काम मिल जाता था। इसी तरह के काम से गुजरते हुए एक बार डेली शो 'फर्ज़' के सिलसिले में 'सुधीर मिश्रा' से मुलाकात हुई और उन्होंने 'फर्ज़' में अहम भूमिका के लिए यशपाल को चुना। इस तरह से होते हुए यशपाल समय

---

[112] https://www.thehindu.com/features/cinema/Being-bad-is-hard-work/article16044686.ece September 23, 2010 18:39 IST

के उस पड़ाव पर पहुँचने वाले थे जहां से उन्हें किस्मत का साथ मिलने वाला था और वो फिल्म 'हज़ार चौरासी की माँ' की कास्टिंग इंटरव्यू में जा पहुंचे। इन्हें फिल्मों में अपनी कला दिखाने का पहला मौका गोविन्द निहलानी की फिल्म हज़ार चौरासी की माँ (1998) से मिला, जिसमें इनके साथ जया बच्चन और नन्दिता दास ने भी काम किया। इसके बाद वे कई फिल्मों में काम करने लगे, जिसमें शूल और अर्जुन पंडित आदि है। फिल्म 'हज़ार चौरासी की माँ' में कार्य करने के दौरान 'गोविंद निहलानी' से अच्छी पहचान हो गई। उसके बाद 'गोविंद निहलानी' ने यशपाल का परिचय 'श्याम बेनेगल' से करवाया और उन्होंने यशपाल को फिल्म 'समर' में कार्य करने का प्रस्ताव दिया। उसके बाद धीरे-धीरे यशपाल के अभिनय का जादू फिल्मों में भी चल पड़ा। ट्राइबन इंडिया वेबसाइट पर प्रकाशित लेख के अनुसार, "Sharma said Govind Nihlani's film, Hazar Chaurasi ki Maa, offered him an opportunity to work alongside noted actors like Jaya Bacchhan and Nandita Das. But it was Lagaan, which brought him to limelight. 'After that I did not need to introduce myself anywhere', he chuckled adding that thereafter roles came his way effortlessly which included films like Gangajal and Ab Tak Chhappan."[113] इस तरह से यशपाल के पास बॉलीवुड फिल्मों की कतार सी लग गई। यशपाल शर्मा 'शूल', 'समर', 'अर्जुन पंडित', 'पुकार', 'लगान', 'मुझे कुछ कहना है', 'गुनाह', 'धूप', 'चमेली', 'हज़ार ख्वाहिशें ऐसी', 'मुम्बई से आया मेरा दोस्त', 'गंगाजल', 'अपहरण', 'वेलकम टू सज्जनपुर' जैसी बहु चर्चित फिल्मों में काम किया।

[113] https://www.tribuneindia.com/2010/20100105/harplus.htm#8 05 सितंबर 2020

यशपाल शर्मा फिल्मों के साथ-साथ टी.वी. पर्दे पर भी अपने अभिनय का जादू बिखेरते रहे हैं। इन्होंने सीआईडी के कुल 4 एपिसोड में काम किया था। जिसमें दो एपिसोड 2002 में और बाकी दो एपिसोड 2005 में बनाए गए थे। पहले दो एपिसोड में इन्हें नन्हें नाम का किरदार दिया गया था, वहीं अन्य दो एपिसोड में ये भविष्य बताने वाले का किरदार निभा रहे थे। हालांकि पूर्ण रूप से इन्होंने धारावाहिकों में पहला कदम 2010 में ज़ी टीवी के कार्यक्रम "मेरा नाम करेगी रोशन" से रखा था। जिसके लिए इन्हें इंडियन टेली जूरी द्वारा नकारात्मक किरदार निभाने के लिए पुरस्कार भी मिला।[114] 2011 में यशपाल 'सब टीवी' पर आने वाले धारावाहिक 'तारक मेहता का उल्टा चश्मा' और 2014 में 'नीली छतरी वाले' धारावाहिक में महत्वपूर्ण भूमिका में नज़र आए। यशपाल समय के अनुसार चलने वाले इंसान हैं। वेबसीरीज के दौर में यह इस विधा में भी सक्रिय हैं। वेबसीरीज के बारे में इनका कहना है कि "इससे लोगों के लिए रोजगार भी बड़ा है, जो एक अच्छी बात है। लोग इन्हें देखना खूब पसंद भी कर रहे हैं। मेरा ऐतराज सिर्फ इन वेब सीरीज के माध्यम से खुलकर दिखाई जा रही हिंसा, अश्लीलता, और गंदी-गंदी गालियां और रिश्तों की आपत्तिजनक कहानियां दिखाने पर हैं, मैं इन चीजों के पूरी तरह खिलाफ हूं, इससे युवा पीढ़ी को हाइप किया जा रहा है।"[115] यशपाल फिल्मों या वेबसीरीज आदि माध्यमों को मनोरंजन के साथ-साथ समाज में सकारात्मक बदलाव के लिए प्रयोग करना चाहते हैं। 2016 में उन्होंने हरियाणवी भाषा में 'पगड़ी' फिल्म में काम किया। 'पगड़ी' को लेकर उन्होंने कहा कि एक अच्छी फिल्म पूरे समाज

---

[114] https://hi.wikipedia.org/wiki/यशपाल_शर्मा 05 सितंबर 2020

[115] https://www.jansatta.com/entertainment/actor-yashpal-sharma-reveals-why-he-do-not-like-web-series-also-says-that-he-rejects-ekta-kapoor-offer-four-times/1430915/ June 7, 2020 15:13 IST

को बदलकर सकारात्मक बदलाव ला सकती है। उनकी फिल्म को हरियाणा के मुख्यमंत्री मनोहरलाल खट्टर ने भी देखा था और फिल्म को पूरे राज्य में टैक्स फ्री कर दिया था। अभिनेता यशपाल ने हरियाणवी फिल्म इंडस्ट्री में बढ़ रहे फूहड़पन पर चिंता जताई। उन्होंने कहा कि इससे निजात पाने के लिए 'पगड़ी' जैसी ज्यादा से ज्यादा फिल्मों का निर्माण जरूरी है। हरियाणवी कलाकार आजकल बॉलीवुड में भी धूम मचा रहे हैं।[116] सिर्फ हरियाणवी ही नहीं, यशपाल किसी भी प्रकार के विडियो कंटेंट में फूहड़ता के खिलाफ हैं। फूहड़ता भरे ऑफर को अस्वीकार करने में देर नहीं लगाते हैं। यशपाल ससुर-बहू या भाई-बहन के रिश्तों को कलंकित करने वाले वेबसीरीज की कटु आलोचना करते हैं। "इस तरह के कंटेंट से बड़ी बेइज्जती और क्या हो सकती है। अगर इसके मेकर्स ऐसे ही पैसा कमाना चाहते हैं तो फिर लानत है ऐस लोगों पर जो पैसों के लिए सारी हदें पार कर देते हैं। ऐसी फिल्मों से अपराधियों के हौसले बुलंद होते हैं। जिसका शिकार हमारी बहन-बेटियां बनती हैं।"[117] यशपाल अपनी एक्टिंग का उपयोग समाज के भले के लिए करना चाहते हैं। वे वेबसीरीज में काम कर रहे हैं लेकिन अपने आदर्शों का भी ध्यान रखते हैं। कंटेंट पसंद न आने पर वह बड़े से बड़े निर्माता-निर्देशक के ऑफर को इनकार कर देते हैं। जनसत्ता पेपर में प्रकाशित एक लेख के अनुसार, "मैंने खुद इस तरह की सीरीज करने से इनकार कर दिया है। जिसमें से 4 तो सिर्फ एकता कपूर की ही है।"[118]

---

[116] https://www.amarujala.com/chandigarh/pagri-movie-pagri-movie-release-hariyanavi-movie-pagri-actor-yashpal-sharma-rohtak-haryana?pageId=1 23 Apr 2016 01:00 PM IST

[117] https://www.jansatta.com/entertainment/actor-yashpal-sharma-reveals-why-he-do-not-like-web-series-also-says-that-he-rejects-ekta-kapoor-offer-four-times/1430915/ 08 सितंबर 2020

[118] Edib

आधुनिक समय में उनके फिल्मी करियर के बारे में बात करें तो यशपाल ज्यादातर फेस्टिवल फिल्मों में काम करते है। जो कमर्सियली आम जनता के पास तो नहीं पहुँच पाती लेकिन वो फेस्टिवल में अनेक पुरस्कार की हकदार होती है। “As an actor, you began your journey with theatre and then moved towards films where you have done a variety of roles over the years. What has the journey been like? The journey has been good but not completely satisfactory. That is the reason why I now avoid commercial films, because I am not satisfied with working in commercial films. But I do one odd [commercial] film in a year so that people do not forget me!.”[119] यही कारण है कि यशपाल शर्मा अब क्षेत्रिय फिल्म (हरियाणवी) और फेस्टिवल योग्य सिनेमा में ज्यादा काम करना पसंद करते है। ऐसी फ़िल्में जिनमें दमदार कंटेंट, समझदार स्क्रिप्ट, एक अच्छा निर्देशक और अच्छी भूमिका हो। (यशपाल शर्मा द्वारा किये गये सिनेमा की सूची हेतु तालिका संख्या 14 देखें)

---

[119] https://www.cinestaan.com/articles/2020/jan/29/24187/be-an-artist-and-not-a-politician-yashpal-sharma-on-retaining-the-democratic-spirit-in-art 29 Jan 2020 21:26 IST

<u>अध्याय:6</u> सिनेमा उद्योग और प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं द्वारा रंग क्षेत्र का विस्तार

रंगमंच और सिनेमा में कहानी, वस्त्रसज्जा, प्रकाश व्यवस्था, डॉयलॉग डिलिवरी, अभिनय, निर्देशन आदि अनेक समानताएं है। इन समानताओं के साथ-साथ दोनों ही विधाएं एक-दूसरे को प्रभावित भी करती है। सामान्यतः रंगमंच का कलाकार वर्षों के परिश्रम के बाद अभिनय में परिपक्वता हासिल करता है। यह कलाकार जब सिनेमा की दुनिया में कदम रखता है तो बड़े ही सहज भाव से अभिनय करता है और सिनेमा के पर्दे पर अपने किरदार के साथ न्याय करता है। उसके द्वारा अभिनीत फिल्म खूब चर्चा पाती है, अच्छा अभिनय करने पर उसके अभिनय की तारीफ ज़रुर होती है। इस प्रकार वह सिनेमा में हाथों-हाथ लिया जाता है। सिनेमा का क्षेत्र काफी बड़ा है और इसमें पैसा कमाने के अवसर भी बेसुमार हैं। एक बार सिनेमा से जुड़ जाने और पैर जम जाने के बाद अभिनेताओं का रंगमंच की तरफ लौटना मुश्किल हो जाता है। हालांकि कुछ अभिनेतायों ने सिनेमा में बेसुमार पैसा और नाम कमाने के बाद भी रंगमंच से जुड़ाव बनाए रखा है लेकिन बड़े पैमाने पर सभी कलाकार ऐसा करते नहीं दिखते हैं। सिनेमा से जुड़ने के बाद कुछ कलाकारों का रंगमंच की तरफ एक जिम्मदारी के साथ जुड़ाव बरकरार है लेकिन कुछ कलाकारों का जुड़ाव बेहद कम नज़र आता है।

सिनेमा में कामयाबी के बाद भी रंगमंच को कुछ समय देने वाले कलाकारों की में नसीरुद्दीन शाह का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। सन् 1979 में 'मोटले' नामक एक नाट्य संस्था की स्थापना नसीरुद्दीन शाह जैसे समर्पित अभिनेता ने की। इस काम में इन्हें बेंजामिन गिलानी का भरपूर साथ मिला। नसीरुद्दीन शाह की यह संस्था आज भी सक्रिय है। 'मोटले' के बैनर तले 'वोटिंग फॉर गोदो' नामक अंग्रेजी नाटक

में ब्लादिमीर के किरदार को नसीरुद्दीन शाह ने बड़े ही शिद्दत से निभाया। सिनेमा से जुड़ने के बाद भी नसीर ने रंगमंच से गहरा नाता रखा। कुछ नाटकों में अभिनय के साथ-साथ निर्देशन भी किया। जिनमें 'जसमा ओडन', 'बलि', 'ऑड कपल', 'अंधायुग', 'प्रतिविम्ब', 'उध्वस्त धर्माशाला', 'डॉन जुआन', 'ऑन द हार्मफुलनेस ऑफ टोबैको', 'द एनवर्सिरी', 'जूलियस सीजर', 'द केन म्यूटिनी कोर्ट मार्शल', 'प्लेटफॉर्म', 'महात्मा वर्सेस गांधी' आदि शामिल हैं। इन्हें नाटक की बारीकियों की गहरी समझ है इसीलिये नाटकों में बतौर अभिनेता या निर्देशक इनके जुड़ाव से नाटकों में सम्पूर्णता आती है। हिंदी भाषा के साथ-साथ अंग्रेजी, उर्दू एवं अन्य भाषाओं के रंगमंच में अलग-अलग तरह के किरदारों को जीवंत करके अपने अभिनय क्षमता और प्रतिबद्धता को विधिवत प्रशिक्षण और नियमित अभ्यास के ज़रिये इन्होंने बार-बार साबित किया। विप्लव विनोद के अनुसार, "हिंदी फिल्मों में अभिनय के साथ-साथ नसीरुद्दीन शाह रंगमंच में भी सक्रिय रहे। साथ ही, उन्होंने छोटे परदे के दो कालजयी धारावाहिकों भारत एक खोज और मिर्जा गालिब में भी अपने शानदार अभिनय का रंग भरा। जब उन्होंने हिंदी फिल्मों में अभिनय के वर्षों के अनुभव को रचनात्मक मोड़ देने का निर्णय लिया, तब फिल्म निर्देशन की बागडोर संभालने की योजना उन्होंने बनाई।"[1] उनके निर्देशन में बनी पहली फिल्म 'यूँ होता तो क्या होता?' दर्शकों का ज्यादा प्यार न पा सकी लेकिन फिल्म समीक्षकों द्वारा नसीर के निर्देशन की खूब तारीफ हुई। फ़िल्मों में अपार सफलता और समृद्धि हासिल करने के बाद भी नसीरुद्दीन शाह ने हिंदी रंगमंच से अपना नाता बरकरार रखा। अपने कीमती

---

[1] विप्लव, विनोद. (2013). *हिंदी सिनेमा के 150 सितारे*, पृ. 61

समय में से कुछ समय निकालकर नसीर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के विद्यार्थियों से मिलते रहे हैं और उन्हें रंगमंच और सिनेमा से जुड़ी बारिकियां सीखाते रहे हैं।

सिनेमा के साथ-साथ रंगमंच को समृद्ध करने में पृथ्वीराज कपूर भी एक बड़ा नाम है। हिंदी रंगमंच के जगमगाते सितारे पृथ्वीराज कपूर ने हिंदी रंगमंच को काफी लोकप्रिय बनाया। उन्होंने बड़ी संख्या में रंगकर्मी तैयार किये। विप्लव विनोद का कहना है कि “वर्ष 1944 में पृथ्वीराज कपूर ने अपनी सारी पूँजी लगाकर अपनी खुद की थिएटर कंपनी ‘पृथ्वी थिएटर’ शुरु की। सोलह वर्ष में पृथ्वी थियेटर के 2662 शो हुए, जिनमें पृथ्वीराज ने लगभग सभी शो में मुख्य किरदार निभाया।”[2] मशहूर अभिनेता बलराज साहनी की पत्नी दमयंती का जुड़ाव भी पृथ्वी थियेटर से रहा। ‘दीवार’ नाटक में दमयंती द्वारा विदेशी महिला की भूमिका खूब चर्चित हुई। मशहूर अभिनेत्री ज़ोहरा सहगल ने पृथ्वी थियेटर के इस नाटक का जिक्र अपनी आत्मकथा ‘क़रीब से’ में भी किया है और आगे चलकर ज़ोहरा सहगल भी पृथ्वीराज द्वारा स्थापित पृथ्वी थियेटर से जुड़ी और दमयन्ती द्वारा दीवार नाटक में विदेशी औरत की भूमिका छोड़ देने पर वह भूमिका ज़ोहरा सहगल निभाने लगीं। पृथ्वीराज कपूर द्वारा निर्देशित दीवार की सफलता के बारे में बलराज साहनी ‘इप्टा की यादें’ लेख में लिखा कि दीवार से पहले किसी नाटक को इतनी सफलता नहीं मिली थी। पृथ्वीराज कपूर के नाटकों की लोकप्रियता और प्रभाव का यह एक बड़ा उदाहरण है। उन्होंने रंगमंच से जुड़ने के बाद अपना सब-कुछ इस पर न्यौछावर कर दिया। पृथ्वी थियेटर की स्थापना और संचालन में उन्होंने अपना तन-मन

---

[2] विप्लव, विनोद. (2013). हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, पृ. 64

और धन समर्पित कर दिया। पृथ्वी थियेटर के अंतर्गत उन्होंने 'गद्दार', 'आहुति', 'कलाकार', 'पैसा' जैसे लोकप्रिय नाटक मंचित हुए और देश के तमाम नगरों में इनके सैकड़ों शो हुए। इन्होंने अपने जीवन काल में सैकड़ों कलाकार और शिल्पी खोजे- जिनमें से अधिकांश कालांतर में जीविकोपार्जन के लिए फिल्मों में चले गये। पृथ्वी थियेटर से जुड़े कलाकारों में ज़ोहरा सहगल, राजकपूर, प्राण, शम्मी कपूर और इंदर राज आनंद जैसे तमाम चर्चित नाम शामिल हैं। पृथ्वीराज के रंगमंच से जुड़ाव की चर्चा सर्वविदित है। वह फिल्मों से जुड़े, खूब लोकप्रिय हुए, खूब पैसा कमाया और कमाकर यह पैसा आजीवन रंगमंच पर लगाया। पृथ्वी थियेटर ने आरंभ से देश दुनिया के अलग-अलग जगहों पर जाकर नाटक प्रस्तुतियाँ करना और हिंदी रंगमंच जगत तथा कलाकारों को मार्गदर्शन का कार्य करना शामिल है। पृथ्वीराज कपूर का कहना था कि उनका सिनेमा में कार्य करने का मकसद ही यही है की रंगमंच करते वक्त उन्हें आर्थिक परेशानी न आये। जिस तरह ईप्टा रंग संस्थान भारतीय रंगमंच में अपना एक मुहिम और लहर लेकर आया था उसी तरह रंगमंच के विकास में पृथ्वी थियेटर का भी बहुत बड़ा योगदान है। हिंदी रंगमंच की दुनिया पृथ्वीराज कपूर के योगदानों को कभी भूला नहीं सकती।

रंगमंच की दुनिया में राम गोपाल बजाज भी एक महत्वपूर्ण नाम हैं। हिंदी रंगमंच के क्षेत्र में इनका नाम बहुत ही सम्मान के साथ लिया जाता है। अंधायुग, बिच्छू, किंगलियर, कंजूस, सुनो जनमेजय, द फायर, तुगलक, लहरों के राजहंस, वोटिंग फॉर गोदो, एण्टीगनी, गणदेवता, एवम् इन्द्रजित, कभी चित कभी पट, खामोश! अदालत जारी है, हिरोशिमा, त्रिशंकु, शह ये मात, हयवदन, आषाण का एक दिन, घासीराम कोतवाल, शतरंज के खिलाड़ी जैसे अनेक नाटकों में अभिनय करके इन्होंने जनता को अनेकानेक

कहानियों, मनोभावों और परिस्थितियों से अवगत कराया। कभी हंसाया, कभी रुलाया और दर्शकों के मन-मस्तिष्क पर अद्‌भुत छाप छोड़ी। वहीं इनके द्‌वारा निर्देशित नाटकों में नायक विनायक, बहुत बड़ा सवाल, अंत नहीं, आजातघर, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, माटी मटल, ध्रुवस्वामिनी, आषाढ़ का एक दिन, सूर्यास्तक, मुक्तधारा, स्कंदगुप्त, पाप और प्रकाश, काल पात्र, राजा नंगा है, बिना दीवारों के घर, गंगामाटी, ययाति, तलघर, हंसिनी, कैद-ए-हयात, एक पुरुष : डेढ़ पुरुष, हस्तिनापुर, चारुवाक, दूसरा अध्याय, मृगतृष्णा आदि अनेक महत्वपूर्ण नाम शामिल हैं। नाटकों में अभिनय एवं निर्देशन के अलावा इन्होंने नाट्‌य कला को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अमर उजाला के एक लेख में सुनील मिश्र, रामगोपाल बजाज के बारे में लिखते है, "युवावस्था में उन्होंने अपने रंगकर्मी मित्रों स्वर्गीय ओम शिवपुरी, स्वर्गीय सुधा शिवपुरी, स्वर्गीय बी.वी. कारंत, स्वर्गीय बृजमोहन शाह एवं मोहन महर्षि के साथ मिलकर 'दिशान्तर' नामक नाट्‌य संस्था की स्थापना की और अनेक उत्कृष्ट नाट्‌य कृतियों के मंचन की शुरुआत की। उस समय उन्होंने जो नाटक मंचित किए, उनमें 'सुनो जनमेजय', 'हयवदन', 'बेगम का तकिया', 'घासीराम कोतवाल', 'अंधा युग', 'तुगलक' एवं 'किंग लियर' आदि शामिल हैं।"[3] इन्होंने स्कूली बच्चों को भी नाट्‌य प्रशिक्षण दिया और दर्जनों नाटक करवाए। कई विश्वविद्‌यालय में इन्होंने नाट्‌यकला से जुड़े विभागों में सेवायें दी और बीच राष्ट्रीय नाट्‌य विद्‌यालय से भी विभिन्न कार्यक्रमों और जिम्मेदारियों के साथ जुड़े रहे। इन्होंने राष्ट्रीय नाट्‌य विद्‌यालय के निर्देशक के रुप में भी रंगमंच की दुनिया

---

[3] HTTPS://WWW.AMARUJALA.COM/KAVYA/KAVYA-CHARCHA/NOTED-INDIAN-THEATER-DIRECTOR-RAM-GOPAL-BAJAJ-GOT-NATIONAL-KALIDAS-AWARD 04 DEC 2017

को महत्वपूर्ण योगादान दिया। अभिमंच नामक प्रेक्षागृह इन्हीं की देख-रेख में पूरा हुआ। भारत रंग महोत्सव की महत्वाकांक्षी योजना तथा जश्ने बचपन और बाल मेला जैसे बाल-रंगमंच के राष्ट्रीय समारोहों की शुरुआत भी इन्होंने ही कराई। दूसरी भाषाओं के महत्वपूर्ण नाटकों का मंचन इन्होंने हिंदी में किया और खूब प्रतिष्ठा हासिल की। इस क्षेत्र में इनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान ये है कि प्रायः बजाज ने हिंदी के नए नाटककारों को खोजा और उनके मौलिक नाटकों के पहली बार प्रशंसनीय एवं सफल प्रस्तुतिकरण करके उन्हें प्रेरणा और पहचान दी। राम गोपाल बजाज, जिन्होंने दुनिया का सबसे बड़ा नाट्य महोत्सव भारंगम का शुभारंभ किया। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से अपना स्नातक पूरा करने के साथ उन्होंने वहीं पर रिपेटरी भी ज्वाईन किया। सन् 1995 से 2001 ई. के बीच उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के निर्देशन का पद भार संभाला। इस बीच उन्होंने 'भारत रंग महोत्सव', 'जश्ब-ए-बचपन' जैसी रंग महोत्सव का शुभारंभ किया जो भारती रंगमंच के लिए बहुत बड़ी उपल्बधि रही है। इसके अलावा भी उन्होंने 'बाल-संगम', 'एकल नाट्य समारोह', 'रंग-प्रसंग पत्रिका', 'थियेटर इंडिया', 'श्रुति कार्यक्रम' आदि का श्री गणेश किया।

हिंदी रंगमंच को ऊंचाई देने में ओम शिवपुरी भी एक महत्वपूर्ण अभिनेता के तौर पर गिने जाते हैं। 'शारदीया', 'इडिपस', 'आषाढ़ का एक दिन', 'अंधायुग', 'किंगलियर', 'द फायर', 'सुनो जनमेजय', 'कंजूस', 'ट्रोजन वूमन', 'तुगलक', 'लहरों के राजहंस', 'वेटिंग फॉर गोदो', 'एण्टीगनी', 'आधे अधूरे', 'खामोश अदालत जारी है' आदि चर्चित नाटकों में में काम करके उन्होंने अपने अभिनय और निर्देशन का जबरदस्त प्रदर्शन किया। इन्होंने रामगोपाल बजाज, ब.व.कारंत जैसे साथियों के साथ मिलकर दिशांतर नामक एक नाट्य

संस्था की स्थापना की। इस संस्था के बैनर तले अनेक लोकप्रिय नाटक किये गये। अँर उजाला के एक लेख के अनुसार "ओम शिवपुरी ने कई प्ले खुद ही डायरेक्ट किए । इसमें 'आधे अधूरे', 'खामोश', 'अदालत जारी' और 'कोर्ट चालू है' काफी पॉपुलर हुए थे।"[4] रंगकर्म में डूबकर काम करने के बाद उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में प्राध्यापक पद पर नियुक्ति का प्रयास किया लेकिन असफल रहे। बाद में ओम शिवपुरी फिल्मों में काम करने लगे और खूब नाम और पैसा कमाया। उनके अभिनय एवं निर्देशन के सम्पूर्ण सफर पर विमर्श से यह निष्कर्ष निकलता है कि रंगमंच में काम और चर्चा खूब मिलती है लेकिन पैसे के मामले में यहां निराशा हाथ लगती है। सम्पूर्ण समर्पण के बाद भी निराशा हाथ लगने से कलाकार जब सिनेमा से जुड़ते हैं तो फिर रंगमंच की ओर कम ध्यान दे पाते हैं।

'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' के पूर्व छात्र रहे ओम शिव पूरी अपनी बाल्य अवस्था से रंगमंच से जुड़े रहे तथा नाट्य प्रस्तुति में भाग लिया करते थे। ड्रामा स्कूल से अपनी स्नातक समाप्त करने के बाद ही उन्होंने बड़ी मेहनत से 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में रिपेटरी कंपनी की शुरूआत की जो आज भी सक्रिय है। इसके अलावा उनके द्वारा हिंदी रंग क्षेत्र में किया गया कार्य 'दिशांतर' नाट्य संस्था की स्थापना करना था। उस काल में 'ईप्टा', 'पृथ्वी थियेटर' और 'दिशांतर' ये तीनों संस्था

---

4 HTTPS://WWW.AMARUJALA.COM/PHOTO-GALLERY/ENTERTAINMENT/BOLLYWOOD/ACTOR-OM-SHIVPORI-DEATH-ANNIVERSARY-KNOW-ABOUT-HIS-PERSONAL-AND-PROFESSIONAL-LIFE?PAGEID=4 15 अक्टूबर, 2019

लगभग-लगभग एक दौर में शामिल थे। 'ईप्टा', और 'पृथ्वी थियेटर' की भांति ही दिशांतर ने भी हिंदी रंगमंच में प्रस्तुतियों की श्रृंखला शुरु कर दी थी। ओम शिवपुरी के हिंदी रंगमंच के योगदान को देखते हुए उनके याद में संगीत नाटक अकादमी, राजस्थान हर साल पाँच दिवसीय नाट्य महोत्सव 'ओम शिव पुरी मेमोरियल ड्रामा फेस्टिवल' आयोजित करती है।

पीयूष मिश्रा सिनेमा और रंगमंच दोनों ही प्लेटफॉर्म के चर्चित चेहरा हैं। इन्होंने रंगमंच की दुनिया में कदम रखा और पूरी तरह से इसमें रम गये। नाटकों में किया गया इनका अभिनय बड़ा ही स्वाभाविक लगता है। हिंदी फिल्मीबीट वेबसाइट के अनुसार, "वर्ष 1986 में नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से पास आउट होने के बाद पियूष ने दिल्ली में ही थियेटर करना शुरू कर दिया। फिल्मी दुनिया में कदम रखने से पहले कई लोकप्रिय थियेटर स्टेज शो का हिस्सा बनें।"[5] शुरुआती दिनों में ही इन्होंने अपने साथी एन.के. शर्मा के साथ रंगमंच की दुनिया को समझा और अपना सर्वस्व लगाया। एक्ट वन नामक नाट्य संस्था इनकी अद्भुत ऊर्जा और समर्पण का ही परिणाम है जिसमें इन्हें एन. के शर्मा का साथ मिला। युवा कलाकारों के प्रेरणा के स्रोत पियुष ने जब भी मंच पर कदम रखा अपनी पूरी ऊर्जा और प्रतिभा के साथ कुछ अलग कर दिखाया। हिंदी नाटक 'कोर्ट मार्शल' में कर्नल सूरत सिंह का किरदार कौन भूल सकता है जिसे जीवंत कर इन्होंने आलोचकों और दर्शकों का ध्यान खींचा और आंखों के तारे बन गये। 'जब शहर हमारा सोता है', 'पंख होते तो उड़ जाती', 'लाइफ एंड टाइम्स ऑफ गैलीलियो', 'आने भी दो

---

[5] HTTPS://HINDI.FILMIBEAT.COM/CELEBS/PIYUSH-MISHRA/BIOGRAPHY.HTML 23 SEP., 2020

यारों', 'वो अब भी पुकारता है', 'गगन दमामा बाज्यो', 'झीनी-झीनी', 'महाकुंड का महादान', 'महकी-महकी', 'सीली-सीली', 'जिन्हें जल्दी थी वे चले गए', 'मुझे भी चाँद चाहिए', 'खेल-खेल में', 'हैमलेट कभी बाँम्बे नहीं गया', 'दुविधा', 'आइंस्टीन', 'ऑपरेशन थ्री स्टार', 'अस्मिता', 'औरत भली रामकली', 'माधवी', 'महानिर्वाण', 'हमारे दौर में', 'पत्तर अनाराँ दें', 'जंगल बुक से आगे' जैसे कालजयी नाटकों में इन्होंने जबरदस्त अदाकारी की और रंगमंच की दुनिया में सोहरत हासिल की। इन नाटकों में सिर्फ अभिनय ही नहीं किया बल्कि गीत लिखकर, संगीत तैयारकर, गीतों को गाकर और सम्पूर्ण नाटक को निर्देशित कर अपने बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया और युवाओं को अपनी ओर आकर्षित किया।

सिनेमा और रंगमंच की दुनिया में पंकज कपूर भी एक जगमाता हुआ नाम है जिन्होंने अपने अभिनय के दमपर अपनी अलग ही पहचान हासिल की। पढ़ाई में भी वह अव्वल थे। जागरण में प्रकाशित एक लेख के अनुसार, "उन्होंने इंजीनियरिंग में कॉलेज टॉप किया लेकिन उनकी रुचि अभिनय के क्षेत्र में करियर बनाने की थी, इसलिए 1973 में उन्होंने इंजीनियरिंग छोड़ दी और दिल्ली स्थित नेशनल स्कूल आफ ड्रामा में एडमिशन ले लिया। एनएसडी में पढ़ाई के दौरान ही पंकज कपूर ने 74 से ज्यादा थिएटर नाटक कर डाले।"[6] 'आधे अधूरे', 'द फूल', 'वरनम वन', 'चोपड़ा कमाल नौकर जमाल', 'अंकल वान्या', 'मैना गुर्जरी', 'सैंया भये कोतवाल', 'तिलचट्टा', 'छोटे सैयद बड़े सैयद'

---

6 HTTPS://WWW.JAGRAN.COM/BLOGS/ENTERTAINMENT/HAPPY-BIRTHDAY-PANKAJ-KAPUR-FIRST-LOVE-EDUCATION-FILM-CAREER-KNOW-ALL-ABOUT-ACTOR-PANKAJ-KAPUR/ 09 SEP. 2020

जैसे नाटकों के ज़रिये इन्होंने नाट्य प्रेमियों का ध्यान खींचा और नाट्य की दुनिया में खूब चर्चा हासिल की।

सिनेमा और रंगमंच की दुनिया में गिरीश कर्नाड जबरदस्त पहचान रखने वाले अभिनेता थे। अलग तरह के निर्देशन, शानदार अभिनय और नई पीढ़ी को जबरदस्त ढंग से प्रेरित करने वाले रंगकर्मी के रुप में चर्चित रहे हैं।

गिरीश कर्नाड ने न सिर्फ हिंदुस्तान की संस्कृति और परंपरा आत्मसात की अपित कर्नाटक से ग्रेजुएशन के बाद उन्होंने ब्रिटेन में भी उच्च शिक्षा लिया और आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस में सेवा का अवसर हासिल किया। बी.बी.सी. के एक रिपोर्ट के अनुसार, “उन्होंने अपना पहला नाटक कन्नड़ में लिखा जिसे बाद में अंग्रेज़ी में भी अनुवाद किया गया. साथ ही उनके नाटकों में 'ययाति', 'तुग़लक', 'हयवदन', 'अंजु मल्लिगे', 'अग्निमतु माले', 'नागमंडल' और 'अग्नि और बरखा' काफी प्रसिद्ध रहे हैं।”[7] पाश्चात्य संस्कृति को करीब से देखने और समझने के बाद भी इनकी अभिनय क्षमता और निर्देशन क्षमता में कोई मिलावट नहीं नजर आई। अलग-अलग प्रकार की संस्कृति और परिवेश में शिक्षा-दीक्षा और रोजगार हासिल करने के बाद ये अद्भुत ही प्रतिभा बनकर उभरे। ‘ययाति’ नाम का अपना पहला कन्नड़ नाटक इन्होंने 1961 में प्रकाशित कराया। समय बीतने के साथ ही इनकी प्रतिभा में निखार आता चला गया। मैसूर राज्य पुरस्कार हासिलकर ये

---

[7] https://www.bbc.com/hindi/india-48578510 10 जून, 2019

आत्मविश्वास के ऊंचे पायदान पर पहुंच गये लेकिन रंगकर्म से जुड़े दर्शकों और समीक्षकों की आंखों में फिर भी नहीं बस सके। आलोचकों से नज़रअंदाज होने के बाद भी अपनी प्रतिभा से परिचित कर्नाड परेशान नहीं हुए। रंगकर्म की दुनिया में कलम से अद्‌भुत योगदान दिया और 'तुलगल' नाम का एक लोकप्रिय नाटक लिखने में कामयाबी हासिल की। इस नाटक का प्रदर्शन राष्ट्रीय स्तर के मंचों पर हुआ। ओमशिवपुरी ने बतौर निर्देशक इस नाटक में जान डाल दिया और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रंगमंडली द्वारा दिल्ली में इसका प्रदर्शन हुआ और खूब सराहा गया। तुगलक नाटक और कर्नाड दोनों को लोकप्रियता मिली। कर्नाड रंगमंच की दुनिया में राष्ट्रीय आइकन के रुप में सामने आए। इनके द्वारा लिखित नाटक 'हयवदन' को ब.व.कारंत की नाट्य संस्था 'दिशांतर' का साथ मिला और सत्यदेव दुबे के 'थियेटर यूनिट' ने इसे मंचित किया। हयवदन नाटक का मंचन दिशांतर ने दिल्ली में और थियेटर यूनिट ने मुम्बई में किया। अलग-अलग ढंग से मंचित यह नाटक खूब चर्चित हुआ और गिरीश कर्नाड राष्ट्रीय फलक पर रंगकर्मियों की प्रेरणा के स्रोत बनने लगे। गिरीश के नाटक बड़े ही लुभावने अंदाज में और प्रांसगिक विषय को समेटे हुए होते थे। इनके नाटकों का मंचन कई भाषाओं में अनुवाद के बाद अलग-अलग प्रांतों में होता था। हिंदी रंगमंच को समृद्‌धि दिलानें में गिरीश के नाटक प्रेरणा का काम करते थे। हिंदी ही नहीं उर्दू और पंजाबी भाषाओं में भी इनके अनुदित नाटक खूब पसंद किये जाते थे। 'अग्नि और बरखा' नाम का नाटक पौराणिक विषय पर आधारित था और लोगों ने इसे हाथों-हाथ लिया। हिंदीं में तो यह लोकप्रिय हुआ ही अंग्रेजी कन्नड़ और पंजाबी भाषी दर्शकों ने भी इसे खूब सराहा। नाटकों के लेखन की बात हो, अभिनय की बात हो या निर्देशन की गिरीश कर्नाड ने हर विधा में पूरे अधिकार से

हाथ आजमाया और रंगमंच प्रेमियों को कभी निराश नहीं किया। हिंदी सिनेमा आलोचकों ने गोधुलि और उत्सव जैसी फिल्मों के निर्देशन के लिए उनकी जमकर प्रशंसा की। सिनेमा में सफलता अर्जित करने के बाद भी वह रंगमंच से भी जुड़े रहे और रंगमंच को आगे बढ़ाने में सक्रिय रहे। वर्ष 1974 में पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित कर्नाड ने उसी वर्ष एफटीआईआई के निदेशक की जिम्मेदारी संभाली। रंगमंच के अभिनेता, लेखक, निर्देशक के साथ-साथ अहम प्रशासनिक पदों को उन्होंने बड़ी सहजता से स्वीकार किया और कलाकारों को आगे बढ़ाने में सदैव सक्रिय रहे।

रंगमंच और सिनेमा की दुनिया के जाने-माने सितारे श्रीराम लागू ने 'वेदयाचे घर अनहत' में बेहद सधे हुए अंदाज में अभिनय करके अभिनय की दुनिया में शानदार शुरुआत की थी, जिसका निर्देशन बसंत कानेटकर ने किया था। शुरुआती दिनों में 'वेदयाचे घर अनहत' जैसे नाटक में यादगार भूमिका करके श्रीराम लागू दर्शकों और आलोचकों की नज़रों में बस गये। पेशे से डॉक्टर रहे लागू ने मेडिकल क्षेत्र से अभिनय की दुनिया में कदम रखा था और अपने जबरदस्त अभिनय एवं संवाद अदायगी की बदौलत दर्शकों या आलोचकों ने कभी महसूस नहीं किया कि चिकित्सा जैसे पेशे से लौटा व्यक्ति कहीं लड़खड़ा रहा है। बी.बी.सी. के एक लेख के अनुसार "मेडकिल का पेशा उन्हें अफ़्रीका समेत कई देशों में लेकर गया। वो सर्जन का काम करते रहे लेकिन मन एक्टिंग में ही अटका था। तब 42 साल की उम्र में उन्होंने थिएटर और फ़िल्मों की दुनिया में कदम रखा। 1969 में वह पूरी तरह मराठी थिएटर से जुड़ गए।"[8] 'आधे-अधूरे', 'एक होता

[8] https://www.bbc.com/hindi/india-50830103 17 दिसंबर 2019

राम', 'आक्रामक', 'मी जिंकालो मी हादी', 'मादी', 'यशोदा', 'गिधाड़े' जैसे नाटकों में अभिनय और निर्देशन के ज़रिये इन्होंने अभिनय की दुनिया में प्राणप्रण से सेवा की और युवाओं को रंगमंच की ओर आने के लिए प्रेरित किया। भारतीय ज्ञानपीठ व संगीत नाटक अकादमी जैसे महत्वपूर्ण पुरस्कार से सम्मानित लागू ने 'नट सम्राट' नाटक को सैकड़ों बार मंचित किया और रंगमंच प्रेमियों को बार-बार सम्मोहित किया।

रंगमंच और सिनेमा के जाने-माने चेहरे ओम पुरी की बचपन से ही अभिनय के प्रति जबरदस्त दीवानगी थी। उनका बचपन बहुत ही गरीबी में संघर्ष करते हुए बीता। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी संघर्ष करते हुए पढ़ाई जारी रखा। जागरण में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, "ओम अपनी पढ़ाई करने के लिए पटियाला चले गए, यहां पर उनका रूझान अभिनय की ओर हो गया और वह नाटकों में हिस्सा लेने लगे। यहीं पर उन्हें एक वकील के घर पर दूसरी नौकरी मिली, लेकिन नाटक में हिस्सा लेने के कारण वह वकील के यहां काम पर नहीं गए, जिस वजह से उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया।"[9] आगे चलकर उन्होंने फिल्म टेलीविजन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया, पुणे से ट्रेनिंग लिया और फिल्म इंडस्ट्री में मजबूती से अपना कदम रखा। मुम्बई में ओमपुरी को नसीरुद्दीन शाह का साथ मिला और दोनों ने मिलकर 'मजमा' नाम के नाट्य संस्था बनाई। मजमा के मंच पर 'उध्वस्त धर्मशाला' और 'पाँचवाँ सवार' आदि नाटकों का मंचन किया। शुरुआती दिनों में स्कूल में पार्ट टाइम अध्यापन और अन्य कामों से

---

[9] Https://www.jagran.com/blogs/entertainment/happy-birthday-om-puri-know-the-struggle-story/ 18 अक्टूबर, 2018

जिविकोपार्जन करने वाले ओमपुरी ने अपने अभिनय के दमपर रंगमंच और सिनेमा की दुनिया में राज किया। खुरदुरे चेहरे वाले इस अभिनेता ने सही अर्थों में अभिनय का अर्थ बताया और पर्दे और रंगमंच के अलावा रियल लाइफ में भी दुनिया का ध्यान खींचने का काम किया था। दरअसल अन्ना हजारे के आंदोलन में रामलीला मैदान पहुंचकर ओमपुरी ने झकझोर कर रख देने वाली बातें कहीं थी और वहां मौजूद जनता ने जमकर तारीफ की लेकिन भारत के नेताओं और संसद को यह बात पसंद नहीं आई। जहां एक तरफ अभिनेता किसी राजनीतिक मुद्दे पर बोलने से बचते हैं वहीं दूसरी ओर ओमपुरी ने स्वयं रामलीला मैदान में पहुंचकर जनता के मुद्दे पर बोलने का प्रयास किया। इसके लिए उन्हें थोड़ी आलोचना ज़रुर झेलनी पड़ी लेकिन अभिनय की दुनिया में उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ा। अभिनय की दुनिया में मरते दम तक वह अपने काम की बदौलत युवाओं के चहेता बने रहे।

कभी चरित्र अभिनेता, कभी विलेन के तौर पर अपनी अलग पहचान रखने वाले अनुपम खेर ने एनएसडी जैसे महत्वपूर्ण नाट्य संस्थान से प्रशिक्षण प्राप्तकर अपने करियर की शुरुआत की थी। रंगमंच पर अभिनय करने से उन्हें आर्थिक रुप से कोई विशेष मदद नहीं मिली। स्वयं अभिनय करने के अलावा उन्होंने आजिविका के लिए रंगमंच में रुचि रखने वाले बच्चों को प्रशिक्षण देने का काम शुरु किया। किंतु मन मुताबिक काम न होने के कारण इस काम में वह ज्यादा दिन तक टिक नहीं सके। परिणामस्वरुप उन्होंने सिनेमा की ओर कदम रखा। मुम्बई जैसे शहर में नये कलाकार के लिए कदम जमाना आसान काम नहीं था। उन्हें अपनी प्रतिभा पर भरोसा था, उन्होंने उम्मीद का दामन पकड़े रखा। उन्हें चरित्र अभिनेताओं का किरदार मिलना शुरु हुआ।

सारांश फिल्म से उनको पहचान मिलना शुरु हुआ और आगे चलकर उन्होंने हम आपके हैं कौन और दिलवाले दुल्हनिया ले जाएंगे जैसी सुपरहिट फिल्मों में महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाई। विभिन्न मुद्दों पर खुलकर अपनी राय रखने वाले अनुपम ने सोशल मीडिया पर खूब एक्टिव रहते हैं। अपने फिल्मी सफर के बारे में भी भी वह खुलकर अपना अनुभव शेयर करते हैं। ट्विटर से उनका गहरा जुड़ाव है। इस संदर्भ में, आईलेक्स्ट वेबसाइट पर एक लेख के अनुसार, “अपने पोस्ट के साथ उन्होंने लिखा, 'मैं फिल्मों में इतने सालों तक नहीं टिका होता, अगर मैं नियमित रूप से थिएटर नहीं किया होता। इसलिए #WorldTheatreDay पर मैं अपने सभी शिक्षकों, सह-अभिनेताओं, निर्देशकों, तकनीशियनों और दर्शकों को उनके प्यार और समर्थन के लिए धन्यवाद देना चाहता हूं।”[10] सिनेमा में सफलता के बाद अभिनेताओं का रंगमंच से नाता आमतौर पर कम हो जाता है लेकिन अनुपम खेर रंगमंच में काफी सक्रिय रहे हैं। ‘कुछ भी हो सकता है’ नाम के नाटक में अनुपम के भूमिका की खूब प्रसंसा हुई है। नये कलाकारों को अनुपम अपनी अदाकारी से खूब प्रभावित करते हैं।

सिनेमा और रंगमंच दोनों ही प्लेटफॉर्म पर समान अधिकार से अभिनय करने वाले सौरभ शुक्ला एक अनोखे कलाकार हैं। थियेटर जगत से निकलकर सिनेमा की दुनिया में अपार सफलता हासिल करने के बाद भी सौरभ थियेटर के प्रति अपनी जिम्मेदारियों से पीछे नहीं हटे। पैसा और नाम का लालच इन्हें छू तक नहीं गया, यही

---

[10] Https://www.inextlive.com/world-theatre-day-anupam-kher-neena-gupta-post-snaps-from-their-days-on-stage-202003270020, मार्च 20, 2020

कारण है कि उनका जुड़ाव अभी भी थियेटर से बना हुआ है। ऐसा भी नहीं है कि सिनेमा से इन्होंने पैसा नहीं कमाया है, पर्याप्त पैसा कमाने के बावजूद सौरभ का थियेटर से लगाव है इसका कारण अभिनय के प्रति दीवानगी है। इनका मानना है कि रंगमंच में दर्शक सामने होते हैं। यहां कोई रिटेक नहीं होता, दर्शक बिल्कुल सामने बैठे होते है और हर अच्छे परफार्मेंस पर जमकर तालियां बजाते हैं। ये तालियां ही रंगमंच अभिनय से जुड़े किसी भी कलाकार के लिए असली खुराक है। अगर इस खुराक की जगह किसी को पैसा ज्यादा पसंद है तो वह सिनेमा से लौटकर रंगमंच को कम ही समय दे पाता है। सौरभ का मानना है कि रंगमंच को आगे बढ़ाने के लिए अभिनेताओं-अभिनेत्रियों, निर्माता-निर्देशकों को रंगमंच के सामने बैठे दर्शकों की ताली वाली खुराक ज्यादा जरुरी है। सिनेमा पैसा और सोहरत ज़रूर देता है लेकिन अगर हमने रंगमंच से अपने करियर की शुरुआत की है, हमने अभिनय की बारीकियां अगर रंगमंच से सीखी है तो रंगमंच के प्रति हमें अपना फर्ज भी निभाना चाहिए। स्पष्ट है कि रंगमंच के माध्यम से अभिनय की कला में निखार लाया जा सकता है। सौरभ नयी प्रतिभाओं को यह बताने से नहीं चुकते और सिनेमा में करियर की राह देख रहे युवाओं से वह पहले थियेटर में जमकर अभ्यास करने का सुझाव देते हैं। सौरभ की रंगमंच से प्रति दीवानगी कभी छिपी नहीं। टेलीविजन और लाइव शो में वार्ता के दौरान उन्होंने कई बार इस बात को दोहराया है कि युवाओं को पैसे की बजाय हुनर के पीछे भागना चाहिए और यह हुनर रंगमंच पर अभ्यास के ज़रिये ही हासिल किया जा सकता है।

सौरभ की नज़र में अभिनय तभी ज्यादा निखरकर सामने आता है जब उसका अभ्यास किया जाए और रंगमंच के लिए जो अभ्यास होता है वह सिनेमा के पर्दे पर

दिखाये जाने वाले दृश्य के लिए किये जाने वाले अभ्यास से थोड़ा अलग इसलिये होता है कि इसमें अभिनेता या अभिनेत्री को मालूम है कि उन्हें डायलॉग डिलिवरी दर्शकों के सामने करनी है, अपनी भाव-भंगिमा का प्रदर्शन दर्शकों के सामने करना होता है। इस प्रक्रिया में उनका आत्मविश्वास भी बढ़ता है और उनके व्यक्तित्व में वह झलकता भी है। जबकि सिनेमा में रिटेक का जो विकल्प है वह उन्हें थोड़ा अलग सहूलियत देता है। हालांकि हर अभिनेता इस सहूलियत की बदौलत आलसी हो जाता है, कम मेहनत करता है, यह कहना भी ठीक नहीं है लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि सिनेमा के लिए अभिनय कर रहा अभिनेता या अभिनेत्री प्रायः रिटेक का सहारा लेते हैं। इसके पीछे अनेक कारण हो सकते हैं लेकिन थियेटर में रिटेक का विकल्प उपलब्ध ही नहीं है। इसलिए एक बार में ही दर्शकों के सामने जो प्रदर्शन करना है यह बात हर अभिनेता-अभिनेत्री को पता होता है और वे खूब रिहर्सल करते हैं। जब ये अभिनेता सिनेमा के पर्दे पर दिखाई देते हैं तो आम दर्शकों ही नहीं आलोचकों की नज़र में भी खूब प्रशंसा पाते हैं। इसका कारण ये है कि इन्हें थियेटर के लिए रिहर्सल करने की जो आदत और एकाग्रता प्राप्त है वह सिनेमा में भी काम आ रही है। सौरभ शुक्ला युवाओं को रंगमंच से जुड़ने के लिए प्रेरित भी करते हैं। जब 'रेड हॉट' नाटक उन्होंने किया तो पर्दे पर उन्हें देखकर दर्शकों में रोमांच भर गया। इस नाटक में परमीत सिंह सेठी नाम का किरदार अपनी जिंदगी का बड़ा हिस्सा परोपकार में ही गुजारता है। उसकी जिंदगी एकरस हो चुकी है उसे जब ये एहसास होता है तो वह थोड़ा प्रेम, थोड़ा रोमांच, थोड़ी खुशी पाने के लिए प्रयास करता है। बीवी और पत्नी के विवादों से तंग आकर वह दोनों को अलग-अलग रखने की व्यवस्था के क्रम में मां के लिए एक अलग मकान की व्यवस्था करता

है। उसकी मां जब दूर रहती है तो वह अपने जिंदगी के अधूरेपन को पूरा करने का प्रयास करता है। स्त्री-पुरुष संबंधों पर बना यह नाटक दर्शकों को खूब पसंद आता है। यही सौरभ की खासियत है, वह सामान्य कहानी और सामान्य किरदार को भी अलग तरह की अदाकारी से प्रस्तुत करते हैं।

थियेटर और सिनेमा की दुनिया में टॉम ऑल्टर एक उम्दा अभिनेता के तौर पर जाने जाते हैं। इन्होंने अपने अभिनय की शुरुआत बड़े ही जबरदस्त ढंग से की थी, जो इन्हें निरंतर अभिनय के क्षेत्र से जुड़े रहने और कुछ अलग करने के लिए प्रेरित करता है। दरअसल इन्हें अभिनय के क्षेत्र में कदम रखने पर जो पहला नाटक करने को मिला उसमें अभिनय की दुनिया में अलग ही पहचान रखने वाले नसीरुद्दीन शाह ने भी काम किया। इतना ही नहीं अभिनय की दुनिया का एक और अनमोल सितारा बेंजामिन गिलानी भी उस नाटक में था। टॉम के लिए इस अनुभव ने चुनौती और प्रेरणा दोनों का काम किया। इन्हें पृथ्वी थियेटर से जुड़ने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। इन्होंने पृथ्वी थियेटर में लम्बे समय तक काम किया और अभिनय के क्षेत्र की बारीकियों को सीखा व खुद को लगातार साबित किया। मशहूर गीतकार साहिर लुधियानवी के जीवनगाथा पर बने नाटक में इन्होंने साहिर के किरदार को जीवंत कर दिया। 2014 में प्रदर्शित इस नाटक में इन्होंने खूब वाहवाही लूटी और लोगों की साहिर के प्रति ही नहीं टॉम अल्टर के जीवन के प्रति भी उत्सुकता बनी। इस अलावा इन्होंने ग़ालिब के जीवन पर बने नाटक में भी काम किया। शक्ल-सूरत से ये भारतीय नज़र नहीं आते लेकिन हिंदी बोलते तो लोग दांतो तले उंगलियां दबा लेते थे। सिनेमा में एक मुकाम हासिल करने लेने के बाद भी रंगमंच में इन्होंने समय दिया है और आज भी सक्रिय हैं।

सिनेमा के साथ-साथ रंगमंच को समय देने वाले कलाकारों में यशपाल शर्मा का नाम भी लिया जाता है। हिसार में जन्मे यशपाल शर्मा बचपन से ही अभिनय में झुकाव रखते थे। गांव-देहात में ही सही रामलीला में काम करने से कभी नहीं चुकते थे। इन्हें अभिनय का ऐसा शौक लगा कि अपने मेहनत के दम पर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली में प्रवेश पाने में कामयाब हो गये। 'कोई बात चले' नाटक के ज़रिये वो सफलता हासिल की कि रंगमंच की दुनिया में छा गये। रंगमंच से सिनेमा मे जाने के दौरान उनके साथ भी वही कुछ हुआ प्रायः जैसा कि हर नये कलाकार के साथ होता है। रंगमंच में पारंगत होने के बाद उन्होंने खूब काम किया लेकिन इससे इनका गुजारा नहीं हो सका। पैसे की जरुरतें उन्हें सिनेमा की ओर जाने के लिए प्रेरित करती रहीं। अंततः यशपाल ने मुम्बई की कदम ओर बढ़ाया। वहां पहुंचने के बाद उन्होंने पथरीली राह को स्वीकार किया। कई जगह ऑडिशन दिया। कभी-कभी ऐसी भी स्थिति सामने आई जब आने-जाने के लिए किराये तक का पैसा नहीं हुआ करता था। कभी उधार के पैसे से किराया चुकाकर तो कभी पैदल ही वह काम की तलाश में यहां-वहां भटकते रहे। आर्थिक समस्याओं के कारण कई बार उन्हें शारीरिक और मानसिक कठिनाईयों को झेलना पड़ा लेकिन इन्होंने कभी हार नहीं मानी। नतीजा ये हुआ कि 1998 में उन्हें हज़ार चौरासी की माँ जैसी फिल्म में काम करने का पहला मौका मिला जिसका उन्हें लम्बे समय से इंतजार था। जया बच्चन और नन्दिता दास जैसे उम्दा कलाकारों के साथ इस फिल्म में काम करके वह सिनेमा की दुनिया में पहचाने जाने लगे। इसके बाद गुनाह, शूल, मुझे कुछ कहना है, पुकार, चमेली, अर्जुन पंडित, समर, 'लगान', धूप, वेलकम टू सज्जनपुर जैसी फिल्मों से वह दर्शकों के दिलों में जगह बनाने में कामयाब हो गये। सिनेमा से

लौटकर रंगमंच को समय दे पाना यशपाल के लिए भी आसान नहीं रहा, लेकिन अपनी जिम्मेदारी को निभाते हुए वे रंगमंच पर भी दिखाई देते हैं। यशपाल शर्मा जब मात्र रंगमंच के कलाकार थे तो शो देखने आने के लिए लोगों को बहुत बार बुलाना पड़ता था। कभी कभी शो वाले दिन समय पर लोगो को घर घर जाकर बोलना पड़ता था इसके बावजूद भी बहुत कम लोग शो में शामिल हो पाते थे। जबकि वह एक फ्री शो हुआ करता था। लेकिन आज के समय में उनका कहीं शो होता है तो लोग पैसा देकर शो देखने आते है और उनके शो हाउसफुल रहते हैं।

रंगमंच और सिनेमा दोनों ही मनोरंजन के बहुत बड़े माध्यम हैं। दोनों का लक्ष्य एक होते हुए भी दोनों कलाओं में एक बहुत बड़ी असमानता है। जहाँ रंगमंच एक लाइव कला है वहीं सिनेमा रिकार्डेड कला। इस कारण से रंगमंच और सिनेमा के कार्य प्रणाली में समान होते हुए भी एक दूसरे से भिन्न है। यही कारण है कि जब कोई कलाकार रंगमंच से सिनेमा की ओर रूख करता है तो उसे सिनेमा के कार्य प्रणाली के अनुसार खुद को ढालने में वक्त लगता है। क्योंकि रंगमंच कलाकार लाइव परफॉर्मेंस के आदी होते है जहाँ पर उन्हें हर एक्शन को बड़ा करके के दिखाना होता है ताकि वो खुद को हर दर्शक तक पहुँचा सकें। वहीं सिनेमा में कलाकर और दर्शक के सीधा मिलाप नहीं होता है। यहाँ पर दोनों के बीच का माध्यम बनता है टेक्नोलॉजी! कैमरा सिनेमा में एक लाइव दर्शक की भूमिका अदा करता है जो कि हर एक्शन पर बड़ी ही बारीकी से नज़र रखता है। सिनेमा दर्शकों तक पहुंचने से पहले निर्देशक अपने अनुसार हर छोटे से छोटे एक्शन को अलग रूप दे सकता है लेकिन वहीं रंगमंच में कलाकारों के सामने मात्र एक मौका होता है अपने प्रदर्शन को साबित करने का। इस तरह रंगमंच से सिनेमा में पहुंचा

कलाकार काफी सक्षम हो जाता है और अपनी क्षमता की उसे कीमत मिलने लगती है जिसे छोड़कर प्रायः वह रंगमंच की ओर नहीं लौट पाता है।

प्रमुख फिल्म अभिनेताओं और सिनेमा उद्योग द्वारा रंग क्षेत्र का विस्तार नामक इस अध्याय पर फिल्म एवं थिएटर विशेषज्ञ महेश से शोधार्थी की वार्ता हुई और इससे जो तथ्य सामने आए वो इस प्रकार है- यशपाल शर्मा के तमाम नाटकों में एक नाटक बहुत ही चर्चित हुआ है जिसे उन्होंने भारत रंग महोत्सव में नाज़िरा बब्बर के साथ किया था। जिसे देखने का अवसर महेश जी को मिला था। यशपाल जी अच्छे एक्टर हैं महेश जी ने उनका अभिनय थिएटर में भी देखा है और फिल्मों में भी लेकिन भारत रंग महोत्सव में जब महेश जी सिलेक्शन कमिटी में थे तो ये उनका शो देखने गए तो इन्होंने उनके अभिनय में फिल्मों की छवि पाई हालांकि यशपाल ने कहा भी कि मैं जानता हूं कि यह कमर्शियल नाटक है यह कोई एक्सपेरिमेंटल थियेटर नहीं है। हमारे ज्यादा से ज्यादा दर्शक पैसा खर्च कर कर देखने आते हैं तो हम उन्हें वही दे रहे हैं जो उन्हें चाहिए। मैं जो कर रहा हूं उसने फिल्म की छवि है लेकिन यशपाल ने कहा कि जब मैं थिएटर करता था तब कोई नहीं आता था लेकिन जब फिल्म के बाद मैं थिएटर में आया तो बहुत दर्शक हमारे शो देखने आते हैं यह चीज बकायदा उन्होंने उस सिलेक्शन के दौरान कहा। जो सही भी है कि जब हम थिएटर करते थे तो दर्शक नहीं आते थे दर्शक के लिए हम तरसते थे, दर्शक को बुलाते थे उसके बाद भी दर्शक नहीं आते थे। जब हमारी पहचान बन गई तब आप देखिए अब। आप अब इसलिए आते है कि आपने हमें फिल्मों में देखा है और अब आप हमें रूबरू देखना चाहते हैं।

डॉ महेश चंपक लाल साक्षात्कार में बताते है: नसरुद्दीन हों या अनुपम खेर हों या शोध के लिए चयनित अन्य सभी कलाकार, वह सारे चरित्र अभिनेता बने उसमें कोई स्टार नहीं बना। उसमें एक भी नहीं है। नसीरुद्दीन शाह समानांतर फिल्मों में ही काम करते थे पहले फिर वह कमर्शियल फिल्मों में आए लेकिन उनकी शुरुआत हुई समानांतर फिल्मों से, ओम पुरी समानांतर फिल्मों से आए। 'सारांश' जब अनुपम खेर ने किया तो बिकॉज आफ् थियेटर ट्रेनिंग उनको चुना गया क्योंकि वह बहुत कम उम्र के थे, थियेटर के थे, इसलिए वो उस रोल को कर पाए। उस समय के जो जाने माने स्टार थे उनको अगर दिया जाता। सारांश का रोल उतना अच्छा नहीं होता जितना अनुपम खेर ने किया यह जो ट्रेनिंग उनको थिएटर में मिलती है तो फिल्मों में जगह बनाने में उनको बहुत ही आसानी होती है। अनुपम खेर लगातार थियेटर नहीं करते थे। नसरुद्दीन ने थिएटर भी किया पृथ्वी थिएटर में। उन्होंने बहुत सारे नाटक किए जितनी फिल्में। पृथ्वीराज काम ने भारत की पहली बोलती फिल्म आलम आरा में भी काम किया। 1946 में अभिज्ञान शाकुंतलम् को प्रस्तुत किया बाद में उन्होंने बहुत सारे नाटक किए। 60 तक वह नाटक करते रहें। थियेटर और सिनेमा समानांतर रूप से चला। यह बाद में नहीं हुआ। इनमें आप पृथ्वीराज को छोड़ दीजिए या नसीरुद्दीन को छोड़ दीजिए। नसीरुद्दीन के नाटक आप देखिए उन्होंने मंटो के जो नाटक किए। मैंने (महेश चंपक जी ने) देखा है नसीरुद्दीन शाह को, कि जो थियेटर में थे, फिल्म में थें और वापस फिल्मों से थियेटर में आए। वो यह बिल्कुल ही जानते हैं कि मैं कहां फिल्म कर रहा हूं, कहां समांतर फिल्म कर रहा हूं, कहां मैं कमर्शियल फिल्म कर रहा हूं और कहां मैं थियेटर कर रहा हूँ। यह जो फिल्मों का एक असर उनके एक्टिंग में हुआ करता है वह रंगमंच में बिल्कुल

नहीं है। फिल्मों में जाने से पहले वह जिस तरह से ड्रामा में भूमिकाएँ करते थे बिल्कुल उसी तरह से वह वापस आकर भी करते रहें यह कठिन है। कभी भी उन्होंने दर्शकों को ये नहीं कहा की आप मुझे स्टार की तरह नाटक में देखे। नाटक को नाटक की तरह ही देखें। इसीलिए कोई बड़ा स्टार इस नाटक में काम कर रहा है यह छोड़ दें इसीलिए कभी वह बड़े थिएटर में नहीं गए। वह पृथ्वी थिएटर में बिल्कुल सौ - डेढ़ सौ लोगो के सामने नाटक करते थे। आप नसरुद्दीन को देखिए उन्होंने कभी बड़े थिएटर में रोल नहीं किया उन्होंने जो नाटक किए वह बिल्कुल ताल में प्रशिक्षित जिस प्रकार के रोल करते हैं वह दोबारा उसी प्रकार से काम शुरू किया। नसीरुद्दीन जब फिल्म छोड़कर थिएटर में आते हैं तो फिल्म का कोई प्रभाव नहीं रहता। जिस तरह से कमर्शियल फिल्मों में वह चरित्र करते थे। कमर्शियल फिल्मों में उन्होंने जिस प्रकार के रोल किए उसी समय जब वह थिएटर करते थे तो उसमें उसका कोई अंश नहीं दिखाई देता था। उस समय आप सोच में पड़ जाते हैं कि हम उसी एक्टर को देख रहे हैं जिसे हमने कर्मा में देखा था या डर्टी पिक्चर में देखते हैं, त्रिमूर्ति में देखते हैं। यह वही है क्या? यह हमारे दिमाग में प्रश्न उठता है। नसीरुद्दीन शाह थिएटर के ट्रेनिंग के कारण ही वह फिल्मों में अपनी जगह बना सकें, चरित्र भूमिकाएं कर सके।

इसी क्रम में राम गोपाल बजाज की बात करें तो अभी मैंने (महेश जी ने) अक्षय की फिल्म में उनको देखा। कहां अक्षय कुमार इतना बड़ा स्टार लेकिन वह एक ही सीन में छाप छोड़ गये। राम गोपाल बजाज को जहां-जहां भी काम करने का मौका मिला तो उनके काम को देख कर एक साधारण दर्शक भी कह सकता है कि उन्होंने थियेटर की तालीम हासिल की है।

श्रीराम लागू को मैंने (महेश) नटसम्राट में देखा उस समय तो मराठी थिएटर में उनका बहुत बड़ा नाम था और नटसम्राट में उन्होंने जो रोल किया और उसके बाद जो 2-4 उनकी फिल्में आई। उन्होंने सबसे अच्छा घरौंदा में जो रोल किया। घरौंदा में उस समय अमोल पालेकर भी थे, वह भी थिएटर से आए हैं लेकिन घरौंदा अगर चली तो वह सिर्फ श्रीराम लागू के कारण। श्रीराम लागू नटसम्राट में बिल्कुल ही थियेटर के लगते हैं। वह शेक्सपियर के चरित्र को नटसम्राट में करते थे लेकिन जब उन्होंने घरौंदा में काम किया तो उन्होंने देखा कि फिल्म की डिमांड अलग है तो बिल्कुल यथार्थवादी अभिनेता के रूप में घरौंदा में दिखे। उनका फिल्मी सफर अलग है उसके बाद उन्होंने थिएटर उतना नहीं किया जितनी की फिल्में की। मराठी थिएटर में भी उन्होंने उतना नहीं किया वह बहुत सारी फिल्में करने लगे तो वह दोबारा लौटकर नहीं आए।

नसरुद्दीन ने हिंदी रंगमंच और सिनेमा दोनों को समृद्ध किया है जब फिल्मों में गए तो फिल्मों में किस तरह का अभिनय हो सकता है उस पर अमल किया। नसीरुद्दीन समानांतर फिल्मों के अमिताभ बच्चन हैं। समांतर फिल्मों में उन्होंने जिस प्रकार के रोल किए, स्पर्श को देखा जा सकता है, मासूम में उनको चुनौतीपूर्ण रोल में देखा जा सकता है। इतना चुनौतीपूर्ण उनकी आंखों में देख लीजिए, उनकी चेहरों पर देख लीजिए। वह थिएटर वाला ही कर सकता है। इतनी गहराई से और उसी समय देखिए कि उन्होंने डर्टी पिक्चर फिल्म की जिसमें वो गाना भी गाते थे। हालांकि वह उन्हें ठीक नहीं लगता था लेकिन उन्हें करना था इसलिए वह करते थे और यही कारण है कि डर्टी पिक्चर में भी उन्हें जिस तरह का रोल करना था वह किए। वह जानते हैं कि मैं किस प्रकार के थिएटर में काम करता हूं और किस प्रकार के फिल्म में काम करता हूं और उस फिल्म की क्या

डिमांड है और एक दूसरे का असर उन पर नहीं होता। कमर्शियल में काम करते हैं तो वह भूल जाते हैं कि मैं एक्सपेरिमेंटल फिल्मों में काम कर चुका हूं, समानांतर फिल्मों में काम कर चुका हूं, वहां मुझे लाउड एक्टिंग नहीं करनी है, यहां जितनी भी लाउड करनी है। वह लाउड करते भी हैं लेकिन हर फिल्म में वह किस प्रकार की फिल्मों में काम करते हैं वह बिल्कुल ध्यान में रखते हुए करते हैं। यह मैंने नसरुद्दीन में देखा की डर्टी पिक्चर करने वाला या त्रिदेव करने वाला, कर्मा में दिलीप कुमार के साथ काम किया इन सब में उन्हें पता था कि हमें किस तरह का कार्य करना है यानी कि वह फिल्मों में भी चरित्र के हिसाब से खुद को ढ़ालते हैं यह जो तकनीक और स्किल है, स्किल और आर्ट इन दोनों को एक साथ अपनाने वाले नसरुद्दीन शाह हैं। कहां आर्टिस्टिक और कहां स्किल! तो मैं समझता हूं कि नसरुद्दीन जैसा एक्टर नहीं है यह मेरी अपनी मान्यता है और यह बात मैं उनसे प्रभावित होकर नहीं कह रहा हूँ। मैं तटस्थ रूप से कह रहा हूं मैं आंकलन करने के बाद कह रहा हूं और इसके लिए मेरा वजन भी है मैंने उनका समानांतर फिल्मों में काम करना गुजराती फिल्मों में काम करना गुजराती निर्देशक के साथ काम करना इन सब को देखा है। नसरुद्दीन ने कमर्शियल नाटक में काम नहीं किया उन्होंने सिर्फ समांतर नाटकों में ही काम किया। यह फर्क है कि आप किस प्रकार के प्रस्तुति कर रहे हैं जब नसरुद्दीन नाटक में लौट कर आए तो वह कमर्शियल थिएटर में नहीं गए।

गिरीश कर्नाड एक बड़े लेखक और अभिनेता हैं। नाटक 'बिखरे बिंब' जो मैंने शबाना को डबल रोल में करते देखा था जिसके लेखक गिरीश कर्नाड हैं। उसमें क्या है कि दो बहने हैं। एक बहन विकलांग है। विकलांग बहन है जो दूर कहीं जा नहीं सकती तो वह बैठे हुए

एक उपन्यास लिख रही है। उपन्यास लिखते लिखते वह उपन्यास में इतनी खो जाती है कि वह सब कुछ भूल जाती है। उसके बाद उस उपन्यास को जब उसकी बहन पढ़ती है तो उसे लगता है कि यह उपन्यास तो मुझे अपने नाम से छपवानी चाहिए और वह ऐसा ही करती है। उस उपन्यास के कारण वह बहुत बड़ी स्टार बन जाती है उसका बहुत बड़ा नाम हो जाता है। हालांकि वह असल लेखिका नहीं है असल लेखिका तो उसकी विकलांग बहन है जब उसे पुरस्कार मिल रहा होता है तो पुरस्कार लेते समय उन्हें कहा जाता है कि आप अपना वक्तव्य दें। वह एक टेलीविजन स्टूडियो में बैठे हैं वक्तव्य देने जा रही हैं। वक्तव्य के कुछ समय बाद स्टूडियो की लाइट ऑफ हो जाती है और फिर टीवी के स्क्रीन पर एक दूसरी छवि उभर कर आती है जिसमें वो है। उसकी ही शबाना की अपनी और वो पूछती है कि तुमने लिखा है यह उपन्यास? यह उसका इनर भाग था। गिरीश कर्नाड बहुत अच्छी तरह से टेलीविजन को थियेटर में लाएं उस नाटक का जो सेट है वह एक टेलीविजन स्टूडियो का है और उसमें एक शबाना स्क्रीन पर है और एक शबाना थियेटर के मंच पर। एक प्री रिकॉर्डिंग है और एक जीवंत। यह गिरीश कर्नाड का एक कमाल है जो उन्होंने इस तरह के आईडिया को अपनी लेखनी में उतारा।

अनुपम खेर ने जब सालगिरह नाटक किया तो वह जो फिल्मों के अनुपम खेर हैं वही हैं। सालगिरह नाटक अच्छा चला लेकिन इस नाटक को आप देखोगे तो ऐसा नहीं लगता है कि यह थिएटर के डिमांड से कर रहे हैं। फिल्मों में जिस प्रकार से वह काम करते हैं बस उसी प्रकार से उन्होंने काम किया।

रंगमंच और सिनेमा दोनों विधाएं एक दूसरे से बिल्कुल अलग हैं, जो फिल्म की डिमांड है उस डिमांड में क्या होता है कि अगर आप थिएटर से आए हैं तो आपका जो फिल्म निर्देशक है वह आपको कहता है कि यहां थिएटर को आप छोड़ दे, थिएटर को आप भूल जाओ। थिएटर में लार्जर देन लाइफ करते हो या दूर दूर तक बैठा हुआ दर्शक आपको सुन सके आपको देख सके या फिर आप ब्रॉड करते हो। यहां आप को सहज रूप से करना है मानो आपको एक्ट करना ही नहीं है, एक्टिंग छोड़ दो आप, भूल जाओ एक्टिंग को यानी कि दोनों जो मीडियम है उसकी डिमांड अलग है। फिल्मों में जब आप काम करते हो तो आपको थिएटर छोड़ देना पड़ता है। थिएटर से क्या छोड़ देना पड़ता है आपको? छोड़ देना पड़ता है वह की जो आप लार्जर देन लाइफ करते हो उसे छोड़ देना पड़ता है लेकिन चरित्र को बनाने की जो शक्ति होती है, उभारने की जो शक्ति होती है, चरित्र की बारीकियों को समझने की जो शक्ति होती है इसमें आपको थिएटर ही काम में आता है। आप देखिए कि एक ऐसा कलाकार जो फिल्म में ही काम कर रहा है जो कभी थिएटर नहीं किया। वह जब चरित्र करता है और एक थिएटर से आया हुआ बंदा चरित्र करता है तो दोनों में देखिए काफी अंतर मिलेगा तो वहां थिएटर की ट्रेनिंग आपको काम में आती है। जब सत्यजीत राय ने पहली और आखिरी हिंदी फिल्म शतरंज के खिलाड़ी बनाई उसमें दो मंजे हुए एक्टर थे संजीव कुमार और सैयद जाफरी। संजीव कुमार का अभिनय देखिए क्योंकि उन्होंने थियेटर छोड़ दिया था और सैयद जाफरी थिएटर करते थे तो सैयद जाफरी के अभिनय में आप को थिएटर दिखेगा। उनके अभिनय में कहीं ना कहीं आपको लगेगा कि मानो यह मंच पर काम कर रहे हैं। इस बात से वह बिल्कुल कॉन्सेस हैं यानी कि उनकी जो अभिनय की शैली है वह थोड़ी सी संजीव कुमार के

मुकाबले में थीएट्रिकल था क्योंकि उस समय वह थिएटर भी करते थे लेकिन संजीव कुमार थिएटर छोड़कर बिल्कुल फिल्मों में आ गए। आप दिलीप कुमार को और थियेटर से आए हुए पृथ्वीराज कपूर को देखिए। दोनों को आप mughal-e-azam में देखिए दोनों हिस्टोरिकल कैरेक्टर है लेकिन दिलीप साहब का अंदर टोन है, वह शहजादे का रोल करते हैं वह हिस्टोरिकल रोल करते हैं, कहां उन्हें बुलंद होना है कहां नहीं होना है। क्योंकि केवल और केवल वह फिल्म के अभिनेता थे उन्होंने कभी थिएटर में काम नहीं किया। फिल्मों का जो रियलिज्म है और जो थिएटर का रियलिज्म है दोनों में बहुत फर्क है। पृथ्वीराज कपूर भी थिएटर में रियलिज्म लाए लेकिन जब उन्होंने फिल्मों में काम किया आप दोनों को देखिए तो आपको पृथ्वीराज कपूर ज्यादा थियेटरिकल लगेंगे। क्यों उन्हें चुना गया? क्योंकि उनकी छवि एक ऐतिहासिक चरित्र के लिए निर्माण हो चुकी थी उन्होंने सिकंदर का रोल किया। ऐसे-ऐसे रोल किया उन्होंने। जब आप अवारा में उन्हें देखते हो बतौर जज के रूप में, तभी आपको परछाई मिलेंगी हिस्टोरिकल कैरेक्टर की उनका चलना, बैठना उनके सामने आप राज कपूर को देखिए बिल्कुल यथार्थवादी चरित्र कहीं भी आपको थिएटर नहीं दिखेगा हालांकि दोनों एक ही परिवार के है आप आवारा फिल्म देखिए वहां आप देखोगे एक थिएटर का बंदा है एक फिल्म का है। जिन्होंने कभी थिएटर नहीं किया हालांकि छोटे-मोटे रोल उन्होंने पृथ्वीराज के साथ किए थे फिर बाद में छोड़ दिया। शम्मी कपूर ने थिएटर किया था। शम्मी कपूर के एक्टिंग में भी थियेट्रीकली है, राज कपूर में नहीं है। राज कपूर बिल्कुल फिल्मों से जुड़े हुए थे वह अवारा में बिल्कुल फिल्म एक्टर की तरह ही रोल निभाया लेकिन उनके पिताजी पृथ्वीराज कपूर को देखिए जज होते हुए भी ऐसा लगता है कि वह हिस्टोरिकल कैरेक्टर है 1960 में उन्होंने

जो काम किया मुग़ल-ए-आज़म। उसकी कुछ ना कुछ झलक आपको वहां दिखेगी। जब आप थिएटर में काम करते हो तो थिएटर को पूरी तरह से छोड़ देना थोड़ा मुश्किल है, लेकिन नसरुद्दीन ने यह किया। नसरुद्दीन ने यह कहा भी है जब मैं थिएटर करता हूं तो मैं जानता हूं कि थीएट्रिकली नहीं आनी चाहिए समांतर सिनेमा में जब उन्होंने काम किया तो उन्होंने जो एक अभिनय की परिपाटी बनाई। कुछ ऐसे कलाकार हैं जो फिल्मों इंडस्ट्री के एक ग्लैमर है उसे वह थियेटर में नहीं लाते हैं या उसे नकारते हैं और नसूरुद्दीन ने हमेशा नकारा है। थिएटर में आप जाइए तो उनका जो डिसिप्लिन है पेश करने का अंदाज है वह बिल्कुल थियेक्ट्रिकल रहता है वह फिल्म को लेकर बात भी करना पसंद नहीं करते हैं यह चीज मैंने नसरुद्दीन में देखी है।

अध्याय निष्कर्ष

अभिनय एक ऐसी विधा है जिसमें जितना अभ्यास किया जाये वो उतना ही निखरता है या फिर अभ्यास और अनुभव के दम पर अभिनय के प्रति कलाकार अपनी पकड़ को मजबूत करता रहता है। रंगमंच के अनुभव के साथ सिनेमा में अपनी पकड़ बनाने वाले कलाकार सिनेमा और रंगमंच के रिश्तों को बहुत बारीकी से समझते हैं। जिस तरह से उन्होंने रंगमंच के अनुभव के साथ सिनेमा में कार्य आरंभ किया उसी तरह से जब वे पुनः रंगमंच में आये तो अब उनके पास रंगमंच के साथ ही सिनेमा का भी अनुभव था। जिसमें मुख्य रूप से टेक्नोलॉजी का प्रयोग होता है। उनके द्वारा किये जा रहे डिजाईन, डायरेक्शन, लाइट, साउण्ड आदि कार्यों में टेक्नोलॉजी की बढ़ोतरी देखने को मिलती है। इसका एक और पक्ष भी रखा जा सकता है कि समय के अनुसार टेक्नोलॉजी हमारे

जीवन के हर हिस्से में अपनी पकड़ बनाती चली आ रही है। उसी प्रकार रंगमंच में भी अब टेक्नोलॉजी ने अपनी जगह बना ली है जिसकी बदौलत सिनेमा आए दिन सफलता की नयी ऊंचाईयों को छू रहा है। रंगमंच से सिनेमा में आए कलाकारों की कला में निखार आया और उन्होंने सफलता का स्वाद भी चखा। अगर ज़रुरत किसी चीज की महसूस हुई तो रंगमंच को थोड़ा समय देने की। इसी चीज की कमी दिख रही है। रंगमंच को समय देने पर सिनेमा की तुलना में दौलत और शोहरत कम हासिल हो रही है। जो रंगमंच से सिनेमा की ओर गये कलाकारों को फिर से रंगमंच की ओर लौटने में एक बाधा साबित हो रही है। रंगमंच में दर्शक सीमित संख्या में जुटते हैं जबकि सिनेमा एक साथ अलग-अलग स्थानों पर प्रदर्शित होता है और खूब पैसा इकट्ठा करता है। पैसा और नाम रंगमंच की दुनिया में कम है जबकि सिनेमा में ज्यादा है इसलिए रंगमंच का विकास उतना नहीं हो रहा जितने का यह हकदार है। इसके लिए रंगमंच से सिनेमा की ओर गये कलाकार भी जिम्मेदार हैं। इस अध्याय में विभिन्न पुस्तकों, इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री, साक्षात्कार और अन्य स्रोतों से प्राप्त साहित्य के अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि भिन्न-भिन्न कलाकारों के जीवन में रंगमंच का अपना-अपना स्थान रहा है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि जिस लगन से रंगमंच कलाकार सिनेमा की ओर आकर्षित होते है और उसमें अपना समय देते है, उसी लगन के साथ अगर वो पुनः रंगमंच में अपना समय दें तो रंग दर्शकों की संख्या में भी बढ़ोतरी देखने को मिलती है साथ ही रंगमंच कलाकार को एक प्रोत्साहन मिलता है जो उन्हें दिल से रंगमंच में काम करने को उत्साहित करता है। इसी क्रम में जिस तरह रंगमंच सिनेमा को अच्छे कलाकार

प्रदान कर सिनेमा के गुणवत्ता को अग्रसर कर रही है उसी भांति सिनेमा उद्योग रंगमंच को आर्थिक रूप से मदद कर रंगमंच के अग्रसर में अपना भागीदारी निभा रहा है।

निष्कर्ष

हिंदी रंगमंच के विकास में प्रमुख सिनेमा अभिनेताओं का योगदानः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन शीर्षक पर शोधार्थी द्वारा जो मंथन किया गया। उसके निष्कर्ष स्वरूप निम्न बातों पर प्रकाश डाला जा रहा है।

हिंदी रंगमंच: भारत में रंगमंच की शुरूआत से लेकर आधुनिक समय के हिंदी रंगमंच को देखा जाए तो हिंदी रंगमंच को अपने ही हिंदुस्तान में वो स्थान नहीं प्राप्त है जो मनोरंजन के अन्य साधनों को प्राप्त है। भारतेंदु काल से हिंदी रंगमंच को अस्तित्व में लाने का प्रयास जारी है लेकिन तब से सौ वर्षों के इतिहास पर गौर किया जाए तो हिंदी रंगमंच को अस्तित्व में लाने का ज़िक्र साहित्य तक ही सीमित रहा है। जिस भव्यता से साहित्य में रंगमंच को उतारा गया है। उस भव्यता से वो कभी मंच पर नहीं आ पाया। कभी-कभार व्यवहारिक स्तर पर लाया भी गया तो अपनी संस्था, खुद या अपने साहित्य को उच्च स्थान दिलवाने के लिए, न की हिंदी रंगमंच के उत्थान के लिए। ऐसा नहीं कि हिंदी रंग जगत में कोई विद्वान नहीं हुआ लेकिन वो ख़ुद को साहित्य तक ही सीमित रखे। देखा जाये तो हकीकत तौर पर हिंदी रंगमंच ने बीसवीं सदी के छठे दशक उपरांत व्यवहारिक स्तर पर अपना करिश्मा दिखाना शुरू किया है। आधुनिक हिंदी रंगमंच का आज जो चेहरा है वो लगभग साठ-सत्तर वर्ष ही पुराना है। व्यवसाय की दृष्टि से हो या फिल्म में जाने की लालसा से, कला को संयोजने की दृष्टि से हो या हिंदी रंगमंच के प्रति प्रेम से। जिस भी रूप में क्यों न हो, आज हिंदी रंगमंच कलाकार हर रूप में हिंदी रंगमंच को अग्रसर करने व साहित्यिक हिंदी रंगमंच को मंच पर लाने में जुटे हैं। अनेकों

प्रकार के नये-नये उपकरणों की मदद से बेहतर से बेहतर प्रस्तुति की चेष्टा की जा रही है और उसमें वो सफलता भी पा रहे हैं। आज भारतीय रंगमंच के संदर्भ में यह कहना कतई गलत नहीं होगा कि हिंदी रंगमंच भारतीय रंगमंच की अगुआई कर रहा है। इतना ही नहीं, अनेक उतार-चढ़ाव और समस्याओं से गुज़रते हुए भी आज हिंदी रंगमंच वैश्विक स्तर के रंगमंच के मुकाबले से कम नहीं है।

रंगमंच के माध्यम से सिनेमा में मुकाम हासिल कर पुनः रंगमंच में कार्य करने वाले कलाकारों का हिंदी रंगमंच में योगदान को देखने हेतु चौदह कलाकारों का चयन किया गया था, उन सभी के जीवन में रंगमंच का अपना अलग-अलग स्थान देखने को मिलता है। उक्त शोध के आधार पर कह सकते हैं कि पृथ्वीराज कपूर, नसीरुद्दीन शाह, अनुपम खेर, राम गोपाल बजाज, ओम शिवपुरी, ओम पुरी, गिरीश कर्नाड, पंकज कपूर, सौरभ शुक्ला, टॉम ऑल्टर, पीयूष मिश्रा, श्रीराम लागू, परेश रावल, यशपाल शर्मा उक्त सभी कलाकारों ने भारतीय रंगमंच के विकास में अपना बखूबी रोल निभाया है। अपने-अपने क्षेत्र से रंगमंच की शुरूआत करने वाले उपर्युक्त सभी अभिनेताओं का हिंदी रंगमंच से गहरा लगाव देखने को मिलता है। सिनेमा में जाने के पूर्व हो या पश्चात्य दोनों समय में सभी कलाकारों ने अपना तन-मन रंगमंच को समर्पित रखा। सिनेमा में जाने से पूर्व तथा पश्चात्य में इनके द्वारा किये गये रंगमंच में बदलाव की बात करें तो तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जिस तरह से उन्होंने रंगमंच अनुभव के साथ सिनेमा में कार्य आरंभ किया उसी तरह से जब वो पुनः रंगमंच में आये, तो रंगमंच के साथ उनके पास सिनेमा का अनुभव था, जिससे उनकी वित्तीय स्थिति पहले के अपेक्षा ज़्यादा

मजबूत हो चुकी थी। उनके द्वारा किये जा रहे डिज़ाइन, डायरेक्शन, लाइट, साउण्ड आदि कार्यों में तकनीक की बढ़ोतरी देखने को मिलती है।

उपर्युक्त कलाकारों में पृथ्वीराज कपूर, ओम शिवपुरी, राम गोपाल बजाज, नसीरूद्दीन शाह, ओम पुरी, अनुपम खेर, पंकज कपूर, पीयूष मिश्रा, सौरभ शुक्ला और यशपाल शर्मा के अलावा शेष गिरीश कर्नाड, परेश रावल, श्रीराम लागू और टॉम ऑल्टर ऐसे कलाकार हैं जिन्हें अपने शैक्षिक कार्यकाल या व्यवसायिक रंगमंच करने के दौरान हिंदी रंगमंच से जुड़ने का मौका मिला, लेकिन उससे पहले वे विशेष रूप से अपने क्षेत्रीय रंगमंच से जुड़े रहे।

प्रमुख चयनित अभिनेताओं द्वारा विशेष रूप से हिंदी रंगमंच में योगदान की बात करें तो इसे समझने हेतु इसे तीन भागों में देखा जा सकता है। प्रदर्शन, आर्थिक और शैक्षिक। प्रदर्शन के क्षेत्र में चयनित कलाकारों द्वारा किये गये प्रमुख कार्य, जिसने हिंदी रंगमंच के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन सभी महान हस्तियों की रंगमंच गतिविधियों पर दृष्टिपात करने से निम्न तथ्य सामने आते हैं:-

पृथ्वीराज कपूर के द्वारा हिंदी रंगमंच को बढ़ावा देने के लिए 'पृथ्वी थियेटर' की स्थापना की गई, जिसने आरंभ से देश-दुनिया की अलग-अलग जगहों पर जाकर नाटक प्रस्तुतियाँ दीं और हिंदी रंगमंच जगत तथा कलाकारों के लिए एक मार्गदर्शन का कार्य किया। जिस तरह ईप्टा रंग संस्थान भारतीय रंगमंच में एक मुहिम और लहर लेकर आयी थी उसी तरह ही हिंदी रंगमंच के उत्थान में पृथ्वी थियेटर का भी बहुत बड़ा योगदान रहा है। नाटक 'पठान', 'गद्दार', 'आहुति', 'कलाकार', 'पैसा' पृथ्वी थियेटर द्वारा मंचित लोकप्रिय

नाटक है। जिसके प्रदर्शन ने न सिर्फ रंगमंच को अग्रसर किया बल्कि राष्ट्र एकता में भी अपना सहयोग दिया। पृथ्वी थियेटर ने 260 हिंदी रंगमंच कलाकार दिए, जिन्होंने आगे चलकर हिंदी रंगमंच और सिनेमा को अग्रसर किया।

रामगोपाल बजाज ने अंधायुग, बिच्छू, किंगलियर, कंजूस, सुनो जनमेजय, द फायर, तुगलक, लहरों के राजहंस, वोटिंग फॉर गोदो, एण्टीगनी, गणदेवता, एवम् इन्द्रजित, कभी चित कभी पट, खामोश! अदालत जारी है, हिरोशिमा, त्रिशंकु, शह ये मात, हयवदन, आषाण का एक दिन, घासीराम कोतवाल, शतरंज के खिलाड़ी जैसे अनेक नाटकों से अपने अभिनय और निर्देशन क्षमता का परिचय दिया। उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से अपना स्नातक पूरा करने के साथ वहीं पर रिपेटरी कंपनी में अपना योगदान दिया। सन् 1995 से 2001 ई. के बीच उन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के निर्देशन का पदभार संभाला। इस बीच उन्होंने 'भारत रंग महोत्सव', 'जश्न-ए-बचपन' रंग महोत्सव का शुभारंभ किया जो भारतीय और हिंदी रंगमंच के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि रही। भारंगम भारतीय रंगमंच के प्रचार और कला के आदान-प्रदान का सबसे बड़ा कार्यक्रम है, जो आज भी राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली द्वारा देश के चारों तरफ प्रत्येक वर्ष आयोजित किया जाता है। इसके अलावा उन्होंने 'बाल-संगम', 'एकल नाट्य समारोह', 'रंग-प्रसंग पत्रिका', 'थियेटर इंडिया', 'श्रुति कार्यक्रम', नाट्य संस्था 'दिशांतर' का श्री गणेश किया। रामगोपाल बजाज द्वारा लिखित नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' बहुत लोकप्रिय नाटक है। साथ ही उन्होंने 'तेलेडंड', 'अग्नि मत्तु मले' जैसे ग़ैर-हिंदी भाषी नाटकों का हिंदी में अनुवाद भी किया।

ओम शिवपुरी ने अपनी स्नातक समाप्त करने के बाद ही कड़ी मेहनत से 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली' में रिपेटरी कंपनी की शुरूआत की। हिंदी रंगमंच के प्रचार-प्रसार और उत्थान में एन. एस. डी. रिपेटरी कंपनी का योगदान आज लोगों के समक्ष है। इसके अलावा उनके द्वारा हिंदी रंग क्षेत्र में किये गये कार्यों में विशेष रूप से 'दिशांतर' नाट्य संस्था की स्थापना करना था। उस काल में 'ईप्टा', 'पृथ्वी थियेटर' और 'दिशांतर' ये तीनों संस्थायें एक दौर में शामिल थीं। 'ईप्टा' और 'पृथ्वी थियेटर' की भांति ही 'दिशांतर' ने भी हिंदी रंग प्रस्तुतियों की बौछार लगा दी थी। सभी संस्थाओं ने अपने-अपने नये प्रयोग के ज़रिए हिंदी रंगमंच को अलग रूप देने में अपनी भूमिका निभाने का कार्य किया। 'सुनो जनमेजय', 'हयवदन', 'बेगम का तकिया', 'घासीराम कोतवाल', 'अंधा युग', 'तुगलक' एवं 'किंग लियर' आदि दिशांतर द्वारा मंचित लोकप्रिय नाटक है। आज जो रूप हम हिंदी रंगमंच का देखते हैं, उसमें इन संस्थाओं का एक खास रोल है। यह कहना कतई गलत नहीं होगा कि इन संस्थाओं के योगदान ने हिंदी रंगमंच अग्रसर किया।

नसीरूद्दीन शाह द्वारा सन् 1979 ई. में 'मोटली' रंग संस्था की स्थापना की गई, जिसका पहला मंचित नाटक 'वोटिंग फॉर गोदो' रहा, इसमें 'ब्लादिमीर' के सफल किरदार निभाने के लिए शाह की बहुत प्रशंसा हुई। इसके बाद शाह ने मोटली के बैनर तले नाटक 'वोटिंग फॉर गोदो', 'जसमा ओडन', 'बलि', 'ऑड कपल', 'अंधायुग', 'प्रतिविम्ब', 'उध्वस्त धर्माशाला', 'डॉन जुआन', 'ऑन द हार्मफुलनेस ऑफ टोबैको', 'द एनवर्सिरी', 'जूलियस सीजर', 'द केन म्यूटिनी कोर्ट मार्शल', 'प्लेटफॉर्म', 'महात्मा वर्सेस गांधी' आदि का सफलता पूर्वक मंचन किया। इन प्रदर्शन ने नसीरूद्दीन शाह को न सिर्फ रंगमंच में

अलग पहचान दिलवाई बल्कि बेंजामिन गिलानी, रत्ना पाठक, टॉम ऑल्टर आदि जैसे सिनेमा कलाकार भी इनके साथ रंगमंच से जुड़े।

पीयूष मिश्रा का हिंदी नाटक 'कोर्ट मार्शल' में कर्नल सूरत सिंह का किरदार कौन भुल सकता है, जिसे जीवंत कर पीयूष मिश्रा आलोचकों और दर्शकों का ध्यान खींचा और आंखों के तारे बन गए। 'जब शहर हमारा सोता है', 'पंख होते तो उड़ जाती', 'लाइफ एंड टाइम्स ऑफ गैलीलियो', 'आने भी दो यारों', 'वो अब भी पुकारता है', 'गगन दमामा बाज्यो', 'झीनी-झीनी', 'महाकुंड का महादान', 'महकी-महकी', 'सीली-सीली', 'जिन्हें जल्दी थी वे चले गए', 'मुझे भी चाँद चाहिए', 'खेल-खेल में', 'हैमलेट कभी बॉम्बे नहीं गया', 'दुविधा', 'आइंस्टीन', 'ऑपरेशन थ्री स्टार', 'अस्मिता', 'औरत भली रामकली', 'माधवी', 'महानिर्वाण', 'हमारे दौर में', 'पत्तर अनाराँ दें', 'जंगल बुक से आगे' जैसे कालजयी नाटकों में इन्होंने जबरदस्त अदाकारी की और रंगमंच की दुनिया में शोहरत हासिल की। इन नाटकों में सिर्फ अभिनय ही नहीं किया बल्कि नाटकों के लिए गीत, संगीत, गायन के लिए अपनी आवाज़ और सम्पूर्ण नाटक को निर्देशित कर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया और युवाओं को अपनी ओर आकर्षित किया।

पंकज कपूर ने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली में कोर्स करने के दौरान 74 से ज्यादा नाटकों में काम किया। जिसमें 'आधे अधूरे', 'द फूल', 'वरनम वन', 'चोपड़ा कमाल नौकर जमाल', 'अंकल वान्या', 'मैना गुर्जरी', 'सैंया भये कोतवाल', 'तिलचट्टा', 'छोटे सैयद बड़े सैयद' जैसे नाटक से पंकज कपूर को अभिनय की दुनिया में एक पहचान मिली।

गिरीश कर्नाड द्वारा रचित नाटक 'ययाति', 'तुग़लक', 'हयवदन', 'अंजु मल्लिगे', 'अग्निमतु माले', 'नागमंडल' और 'अग्नि और बरखा' आदि हिंदी रंगमंच प्रदर्शन को बढ़ावा देने में बहुत कारगर साबित हुआ। इनके द्वारा रचित नाटकों में ऐतिहासिक पात्रों को इस तरह से वर्णित किया गया है कि मंच प्रदर्शन के समय वो दर्शकों को बांधे रखते हैं। गिरीश के नाटक बड़े ही लुभावने अंदाज में और प्रासंगिक विषय को समेटे होते है। इनके नाटकों का मंचन कई भाषाओं में अनुवाद के बाद अलग-अलग प्रांतों में आज भी खेले जाते हैं। हिंदी रंगमंच को समृद्धि दिलाने में गिरीश के नाटक शुरू से ही प्रेरणा का काम करते आ रहे हैं। कर्नाड द्वारा रचित नाटकों को न सिर्फ भारत में बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सराहा गया है तथा इनके नाटक के अनेकों मंचन होते आये हैं। कर्नाड रंगमंच की दुनिया में राष्ट्रीय प्रतीक के रुप में स्थापित हो चुके हैं।

श्रीराम लागू का नाटक 'नटसम्राट' में 'गणपतराव बेलवल्कर' की भूमिका का दर्शकों और रंग प्रेमियों पर इस तरह प्रभाव रहा कि उनको 'नट् सम्राट' के नाम से जाना जाने लगा। 'आधे-अधूरे', 'एक होता राम', 'आक्रामक', 'मी जिंकालो मी हादी', 'मादी', 'यशोदा', 'गिधाड़े' जैसे नाटकों में अभिनय और निर्देशन के ज़रिये इन्होंने अभिनय की दुनिया में प्राणप्रण से सेवा की और युवाओं को रंगमंच की ओर आने के लिए प्रेरित किया।

ओम पुरी के द्वारा किये गये प्रसिद्ध नाटकों में नाटक 'ऑथेलो', 'तीन बहनें', 'खड़िया का घेरा', 'सूर्यमुख', 'सुल्तान रजिया', 'दांतोज डेथ', 'तुगलक', 'द लैसन', 'सूर्यास्तक' शामिल हैं। जिसके प्रदर्शन ने ओम पुरी को एक सफल अभिनेता की पहचान दिलाई। ओम द्वारा स्थापित 'मज़मा' रंग संस्थान, जिसके बैनर तले 'उध्वस्त धर्मशाला', 'पाँचवाँ

सवार’ नाटक का सफल मंचन हुआ। ओम द्वारा सिनेमा ‘अर्ध सत्य’ में किया गया अभिनय इतना सफल रहा कि सिनेमा लेखन में रंगमंच कलाकारों को ध्यान में रखकर कहानी लिखी जाने लगी।

अनुपम खेर के प्रदर्शन के क्षेत्र में नाटक ‘अन्धायुग’, में एक वृद्ध प्रहरी की और ‘जाग उठा है रायगढ़’ में एक सैनिक की भूमिका को काफी सराहा गया। उनके द्वारा किया गया अभिनय किसी एक स्वरूप में बंधा नही होता है। हर एक किरदार में वो बिल्कुल अलग नज़र आते हैं, जो एक अभिनेता को अपनी पहचान दिलवाता है। इसी अभिनय के गुण को रंगमंच और सिनेमा कलाकारों को सिखने के लिए उन्होंने ‘Anupam Kher’s Actor Prepares-The School Of Actor’ की नीव रखी है, जहां रंगमंच की दुनिया में प्रवेश पाने वाले नए कलाकारों को मुख्य रूप से अभिनय के गुण सिखाये जाते हैं।

नाटक ‘अ व्यू फॉम द ब्रिज’ ‘लूक बैक इन एंगर’, ‘घासी राम कोतवाल’, ‘हयवदन’ में निभाये गये किरदार से अपनी पहचान बनाने वाले **सौरभ शुक्ला** द्वारा सिनेमा उपरांत पुनः 2019 में ‘रेड हॉट’ नामक नाटक से रंगमंच में वापसी की। सौरभ बताते हैं कि ‘लाइव प्रस्तुति में आपके प्रदर्शन के लिए दर्शक द्वारा बजायी गई तालियों का आनंद, एक अलग आनंद होता है। यह आनंद आपको कहीं और नहीं मिलेगा।’ यही कारण है कि सौरभ शुक्ला युवाओं को रंगमंच से जुड़ने के लिए प्रेरित करते हैं।

टॉम ऑल्टर ने नाटक 'मौलाना', 'बाबर के औलाद', 'लाल किले का आखिरी मुशायरा', 'गालिब के खत', 'तीसवीं शताब्दी' में अपने किरदार से यह साबित कर दिखाया कि वो सिर्फ सिनेमा के पर्दे तक ही नहीं बल्कि रंगमंच के मंच पर भी एक सफल अभिनेता है।

टॉम उन कलाकारों की श्रेणी में आते है जिन्होंने सिनेमा के बाद रंगमंच में कदम रखा और उनका यह प्रयास उन सिनेमा कलाकारों को प्रेरित करता है जो सिनेमा के पर्दे के साथ-साथ रंगमंच में भी अपनी रूचि रखते हैं।

परेश रावल ने गुजराती नाटक 'कृष्ण बनाम कन्हैया', 'खेलैया' और 'डियर फ़ादर' के प्रदर्शन से ख्याति प्राप्त कर सिनेमा में कदम रखा। इसके उपरांत भी वो रंगमंच से जुड़े रहे जिसके लिए उन्होंने 'आंगिकम' नाट्य संस्था की स्थापना की। इस संस्था ने गुजराती के साथ-साथ हिंदी नाट्य प्रदर्शन में भी बखूबी योगदान दिया। इस संस्था द्वारा किया प्रसिद्ध नाटक 'कृष्ण बनाम कन्हैया' है, जिसके सैकड़ों प्रदर्शन राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किए गए। परेश रावल द्वारा किया गया हिंदी नाटक 'स्थूल' भी उनके जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि रही है, इस नाटक में नसीरूद्दीन शाह भी बतौर अभिनेता शामिल थे।

यशपाल शर्मा ने नाटक 'कोई बात चले' में अभिनीत किरदार से अपनी पहचान बनाई। इसके अलावा उन्होंने ययाति, आधे-अधुरे, हैमलेट, कोर्ट मार्शल आदि नाटकों में कार्य किया, जो दर्शकों और रंग प्रेमियों द्वारा खुब सराहा गया। यशपाल शर्मा रंगमंच के लिए हमेशा अग्रसर रहते है।

प्रदर्शन की दृष्टि से सिनेमा में एक मुकाम हासिल करने के बाद जब उक्त कलाकारों द्वारा नाटक हेतु मंच पर वापसी हुई, तो उन्हें देखने के लिए दर्शकों की भारी भीड़ उमड़ने लगी। जिससे न सिर्फ रंगमंच को दर्शकों से भरा मंच मिला, बल्कि इससे रंगमंच की आर्थिक सहायता भी हुई। अब उनके शो देखने के लिए दर्शक टिकट भी खरीदने को

तैयार रहने लगे। साथ ही, उनके इस मुकाम ने रंग कलाकारों के लिए प्रोत्साहन का कार्य किया। इस संदर्भ में **यशपाल शर्मा** का कहना है: 'सिनेमा में एक मुकाम हासिल करने के बाद जब मैं रंगमंच में आया, तो मेरे हर प्रदर्शन में लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती थी जो आज भी जारी है।'

आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो चयनित अभिनेताओं द्वारा सिनेमा में कार्य करने के उपरांत उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आया। इससे रंगमंच में यह लाभ हुआ कि जब उन्होंने पुनः रंगमंच करना शुरू किया तो रंगमंच करते वक्त उन्हें किसी तरह की आर्थिक समस्या का सामना नहीं करना पड़ा। वे अब अपने रंगमंच प्रयोग में नये-नये तकनीक, उपकरण आदि का उपयोग आसानी से करने में सक्षम रहे। साथ ही, उनके द्वारा किये जाने वाले रंगमंच में संख्यात्मक रूप से बढ़ोतरी हुई। इस संदर्भ में **पृथ्वीराज कपूर** अपने एक साक्षात्कार में बताते भी हैं कि - मेरा सिनेमा में कार्य करने का मकसद ही यही है कि रंगमंच करते वक्त आर्थिक परेशानी न आये।

शैक्षिक दृष्टि से देखा जाए तो उक्त कलाकारों ने भिन्न-भिन्न शैक्षिक संस्थाओं, विश्वविद्यालयों, कार्यशालाओं (एन.एस.डी. दिल्ली, बी.एन.ए. लखनऊ, श्रीराम सेंटर दिल्ली, 'एक्ट वन' दिल्ली आदि) आदि माध्यम से अपने अनुभव को साझा करने के साथ रंगमंच के प्रत्येक पक्ष के सिद्धांतिक एवं व्यवहारिक रूप के अध्ययन व अध्यापन से रंगमंच कलाकारों को सही मार्गदर्शन का कार्य किया। इसके अलावा **पृथ्वीराज कपूर** द्वारा स्थापित 'पृथ्वी थियेटर', **ओम शिवपु**री और **रामगोपाल बजाज** द्वारा स्थापित 'दिशांतर', **परेश रावल** द्वारा स्थापित 'आंगिकम', **टॉम ऑल्टर** और **नसीरूद्दीन शाह**

द्वारा स्थापित 'मोटली', **ओम पुरी** द्वारा स्थापित 'मज़मा' रंग संस्था न सिर्फ हिंदी रंगमंच प्रदर्शन में अहम भूमिका निभाई, बल्कि साथ ही उसने अपने क्षेत्र के नए कलाकारों को नाट्यकला की सही समझ के साथ अग्रसर करने का कार्य भी किया। शैक्षिक क्षेत्र में योगदान हेतु **अनुपम खेर** द्वारा 'Anupam Kher's Actor Prepares- The School Of Actor' की स्थापना की गई, जहां पर मुख्य रूप से अभिनय के गुण सिखाये जाते हैं।

सिनेमा का रंगमंच में योगदान: उक्त अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि सिनेमा के विकास में रंगमंच ने बहुत सहारा दिया है। इसके बदौलत आज हिंदी सिनेमा बहुत उच्च मुकाम पर पहुँच पाया है, लेकिन इस बात को स्वीकारना होगा कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सिनेमा ने भी रंगमंच को अपना योगदान दिया है। जिस प्रकार के कलाकारों का जिक्र शोध कार्य में किया गया है, उनका दिल हमेशा रंगमंच के लिए धड़कता रहा लेकिन आर्थिक स्थिति बेहतर नहीं होने के कारण उन्हें रंगमंच से सिनेमा की ओर रूख करना पड़ा। पुनः उनकी आर्थिक स्थिती पटरी पर आने के बाद वे रंगमंच में भी लगे रहे। इस बात को झूठलाया नहीं जा सकता है कि अप्रत्यक्ष रूप में सिनेमा, रंगमंच को आर्थिक मदद करता आ रहा है। इतना ही नहीं, बीसवीं सदी के जिस पाँचवे-छठे दशक से हिंदी रंगमंच पर विशेष रूप से कार्य होने आरंभ हुए, वह दौर हिंदी सिनेमा के गोल्डेन एज के ठीक पहले और आरंभ का समय रहा। जो सिनेमा दर्शक, सिनेमा में जाने की लालसा रखते थे, उन्होंने अपनी शुरूआत रंगमंच से की। और कहीं न कहीं सिनेमा का रंगमंच में यह अप्रत्यक्ष योगदान भारतीय सिनेमा के आरंभ से ही रहा है। जब भारत की पहली फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' दादा साहेब फाल्के द्वारा बनाई गई थी तो

उसके कास्टिंग को चुनने के लिए रंगमंच कलाकारों को प्राथमिकता दी गई थी। फिल्म हरिश्चंद्र राची फैक्ट्री (दादा साहब फाल्के पर बनाई गई फिल्म) में दिखाया भी गया है कि उस समय बहुत संख्या में लोगों ने रंगमंच में हिस्सा लेना शुरू किया ताकि वो सिनेमा के पर्दों पर आ सकें। यह क्रम आज भी देखने को मिलता है। मुख्य रूप से सिनेमा रंगमंच को आरंभ से ही अप्रत्यक्ष रूप में मदद करता आ रहा है।

अंततः कहा जा सकता है कि जिस प्रकार से रंगमंच ने सिनेमा को अपना बहुमूल्य योगदान दिया है, उसी प्रकार सिनेमा तथा प्रमुख सिनेमा कलाकार भी रंगमंच के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाते आ रहे हैं, जिसके फलस्वरूप आज हिंदी रंगमंच सिर्फ साहित्य तक ही नहीं बल्कि प्रस्तुतियों में भी विश्वविख्यात है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

शोध थीसिस

1. Kaur, Sarabjit, 21vi shatapdi ke hindi natak aur rangmanch Badalta swarup, Department of Hindi, Kurukshetra University.
2. http://hdl.handle.net/10603/257284 (Joshi, Priyanka, Films And History: A Critical Study Of Select Hindi Films (1950-2008), Department of History, University of Pune, 2013, Chapter 3 & 4)
3. http://hdl.handle.net/10603/73621 तोंडे, रामदास नारायण, आधुनिक हिंदी साहित्य और फिल्मांकनः स्वरूप एवं समस्याएँ, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्याल, औरंगाबाद, 2014, द्वितीय अध्याय
4. http://hdl.handle.net/10603/9204 (खिल्लन, पूजा, समांतर सिनेमा का भाषिक और सामाजिक अध्ययन (विशेष संदर्भ नसीरूद्दीन शाह अभिनीत फिल्में), दिल्ली विश्वविद्यालय, 2012, अध्याय एक)
5. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/73621/9/09_chapter%20 3.pdf (अध्याय तीन-सिनेमा और समाज का संबंध)
6. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/17176/6/06_chapter%20 2.pdf (द्वितीय अध्याय- हिंदी सिनेमा और हिंदी साहित्यकार)
7. http://hdl.handle.net/10603/1706 (पोतुराजु, रेड्डी वेंकट, हिंदी नाटक: परिवर्तन के विविध आयाम (1950 से 2000 तक), हैदराबाद विश्वविद्यालय, 2003, अध्याय चार)
8. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97988/5/05_chapter%20 2.pdf (द्वितीय अध्याय-हिंदी नाटकः विविध चरण एवं प्रवृत्तियां)

9. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/97169/7/07_chapter-2.pdf (द्वितीय अध्याय, आधुनिक हिंदी नाटक का विकास)

10. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/jspui/bitstream/10603/122612/9/09_chapter%203.pdf (हिंदी रंगमंच काल विभाजन, अध्याय - तीन)

11. http://hdl.handle.net/10603/152462 बेगम, आसिया, सोठात्तर युगीन नाटक और जगदीश चंद्र माथुर, विर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, पीएच. डी. शोध प्रबंध, 2017, अध्याय-2

12. http://hdl.handle.net/10603/168385 नैर, एस. जनार्धनन, साठोत्तर हिन्दी नाटकों में वस्तुगत तथा रंगमंचीय विकास का अध्ययन मोहन राकेश और लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों के संदर्भ में, केरला विश्वविद्यालय, 1995, अध्याय-एक

हिंदी पुस्तकें

1. मिश्र, डॉ ब्रजवल्लभ., भरत और उनका नाट्यशास्त्र, प्रकाशन इलाहाबाद एन. सी. जेड. सी. सी., 1988
2. श्रीनेत, दिनेश, पश्चिम और सिनेमा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
3. अंकूर, डॉ चंद्रभूषण गुप्त, सिनेमा और इतिहास, प्रकाशक, शशि प्रकाशन गाज़ियाबाद, 2012
4. विप्लव, विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, प्रकाशक, प्रभात पेपर बैक, नई दिल्ली, 2013
5. दिलचस्प, हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास, प्रकाशक, भारतीय पुस्तक परिषद, नई दिल्ली, 2014
6. झा, वंदना, भारतीय सिनेमा का शताब्दी वर्ष पहचान और प्रतिरोध, प्रकाशक, प्रतिश्रुति

प्रकाशन, कोलकाता, 2016

7. हसन, डॉ रयाज़, सिनेमा का उद्‌भव एवं विकास, प्रकाशक ज्ञात नहीं
8. चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टी, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976, अध्याय-11
9. शर्मा, विश्वनाथ डॉ, हिन्दी रंगमंच का उद्‌भव और विकास, उषा पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली
10. ओझा, दशरथ डॉ, हिन्दी नाटक का उद्‌भव और विकास, प्रकाशक राजपाल एंड सन्स
11. भार्गव, अनिल, भारतीय सिनेमा का इतिहास, सिने साहित्य प्रकाशन, जयपुर
12. सिंह, डॉ. देवेंद्रनाथ, यादव, डॉ. विरेंद्र सिंह, भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा एक मूल्यांकन, पैसिफिक पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2012
13. चातक, डॉ. गोविंद, रंगमंचः कला और दृष्टि, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली
14. दुबे, डॉ. चंदुलाल, हिंदी रंगमंच का इतिहास, पहला भाग, प्रकाशन कुजबिहार पचौरी, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा
15. लाल, डॉ. लक्ष्मीनारायण, पारसी हिन्दी रंगमंच, प्रकाशन राजपाल एंड सन्स, दिल्ली-1973
16. शर्मा, रामविलास, मित्र संवाद, पत्रिका, परिमल प्रकाशन इलाहाबाद, 1992
17. डॉ. अज्ञात, भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, प्रकाशन- पुस्तक संस्थान, कानपुर, 1978
18. गुप्त, सोमनाथ, हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास, प्रकाशक - इंद्र चंद्र नारंग, हिंदी भवन, रानी मंडी, इलाहाबाद
19. गुप्त, डॉ. अवधेश चंद्र, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक: विचार-तत्व

20. पुरी, नंदिता सी., असाधारण नायक ओम पुरी, प्रकाशन-हिंदी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2010

21. विप्लव विनोद, हिंदी सिनेमा के 150 सितारे, प्रकाशन प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2013

22. शाह, नसीरउद्दीन शाह, और फिर एक दिन... कुछ यादें, प्रकाशन-पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया प्रा. लि. गुड़गाँव, हरियाणा, 2019

अंग्रेजी पुस्तकें

1. Saran, Renu, History of Indian Cinema, Publisher, Diamond Pocket Books (P) Ltd. New Delhi, 2018
2. Gulzar, Nilhani, Govind, Chatterjee Saibal, Encyclopaedia of Hindi Cinema, Published by Encyclopaedia Britannica (India) Pvt. Ltd. New Delhi
3. Saran Renu, Encyclopedia of Bollywood- Film Actors, Published by Diamond Pocket Books Pvt. Ltd., 2010
4. Rakesh Mohan, One Day in the Session of Rain, Published by Penguin Books Limited, 24 April 2015
5. Satchidanandan, K., Authors Speek, Sahitya Acadmy, New Delhi, 2006

लेख

1. भारतीय सिनेमा का इतिहास, निर्मल्य सामंत, दिल्ली विश्वविद्यालय
2. हिंदी सिनेमा की भाषा तब और अब, डॉ जय कौशल, कदम
3. Film and Television Institute of India, Puna, Prospects-2020

4. Harris, Jordan, Scott, From Bombay to Bollywood: 50 Years of Indian Cinema, Article, NW Film center, rogerebert.com
5. Guru, Dr. B.P. Mahesh Chandra, Sapna, Dr. M.S., Prabhudev, M., Kumar, Mr. M. Dileep, History of Indian Cinema, International Journal of Business and Administration Research Review, Vol. 2, Issue.11, July-Sep, 2015, ISSN: 2348-0653
6. http://oldror.lbp.world/UploadedData/9057.pdf अग्रवाल, योगेंद्र, वर्तमान हिंदी रंगमंच में विभिन्न पक्षों की प्रयोगवादिता एवं रंगमंच पर उसका प्रभाव, रिव्यहू ऑफ रिसर्च, ISSN:2248-894X, Vol.-8, Issue-9, June-2019
7. Durai, D.J.Naganatha, GIRISH KARNAD HIS GRAND WORKS, International Journal of Multidisciplinary Research Review, ISSN -2395-1877, Vol.1, Issue -33, November-2017

विडियो लिंक

1. https://youtu.be/3-4VjMgnnRQ (Guftagoo with Naseeruddin Shah, Rajya Sabha TV, 18 Oct. 2018)
2. https://youtu.be/FuS8IV3Ugko (Guftagoo with Om Puri, Rajya Sabha TV, 23 August 2012)
3. https://youtu.be/Q5U7JNl6hAs (Guftagoo with Anupam Kher, Rajya Sabha TV, 25 June 2018)
4. https://www.facebook.com/vijayksainivlog/videos/292756391998087 (RAM GOPAL BAJAJ Famous Theatre Director & Bollywood Actor Live Interview

With Vijay K Saini)

5. https://youtu.be/FLvXS2tLQXg (Prof Ram Gopal Bajaj in Sahitya Akademi Panel Discussion on Present Scnereio of Playwrighting)
6. https://youtu.be/Dg0COkBkwW0 (Performing Arts: Ram Gopal Bajaj on Andha Yug)
7. https://youtu.be/pzbbyMl0_dU (NSD के भूतपूर्व निदेशक रामगोपाल बजाज के साथ एक्टिंग पर बातचीत)
8. https://www.facebook.com/watch/?v=773896519673775&extid=RMbV66WBs3xOetoX (Devendra Raj Ankur lecture on theatre design techniques)
9. https://youtu.be/lYCeKUKxt-U (Guftagoo with Tom Alter, Rajya Sabha TV, 23 August 2016)
10. https://youtu.be/0jYh6WiMnmo (Guftagoo with Pankaj Kapoor, Rajya Sabha TV, 19 July 2013)
11. https://youtu.be/xUXk-q3ZTys (Guftagoo with Paresh Rawal, Rajya Sabha TV, 7 January 2018)
12. https://youtu.be/snVVjpiPBUg ('Ab koi dar nahi…' Piyush Mishra, Full Episode, Part 1, The Slow Interview with Nilesh Mishra, 6 Dec. 2019)
13. https://youtu.be/2HE56m20hgU (Tumhari Aukat kya hai, Piyush Mishra, Full Episod Part 2, The Slow Interview with Nilesh Mishra, 6 Dec. 2019)
14. https://youtu.be/SS8tsGDDKj4 (Guftagoo with Piyush Mishra, Rajya Sabha TV, 12 Apil 2016)

15. https://youtu.be/I-fS6TcN8s0 (Guftagoo with Yashpal Sharma, Rajya Sabha TV, 05 Oct. 2015)

16. https://youtu.be/6NhY56YyNbc (Asian Paint, Har Ghar Kucch Kehta Hai - Seven Episode Ratna Pathak Shah, 20 Oct. 2013)

17. https://youtu.be/GEr4oKdsXu8 (Ratna Pathak Shah Interview: मीठी, खिलखिलाहट भरी life, Acting & Naseer, Saurabh Dwivedi। BARGAD, 23 Jan. 2021)

18. https://youtu.be/L5skA6FYtpY (Tabassum Talkies, The Legend of Dr Shriram Lagoo, 3 April 2017)

19. https://youtu.be/qXQVaWGCbN0 (Guftagoo With Saurbh Shukla, Rajya Sabha TV, 10 January 2016)

20. https://youtu.be/rrcFTF-06d8 (Bollywood movie actress neena gupta interview by Devang Bhatt, 28 Dec. 2012)

ब्लॉगस

1. डॉ. विजय शिंदे, भारतीय सिनेमा का आरंभ, साहित्य और समीक्षा
2. शिंदे विजय डॉ., दादा साहेब फाल्केः भारतीय सिनेमा के जनक, साहित्य और समीक्षा
3. आधुनिक हिंदी रंगमंच (क), अमितेश

वेब लिंक

1. https://nettv4u.com/entertainment/hindi/article/top-20-theatre-artists-who-made-it-to-bollywood (Top 20 Theatre Artists Who Made It To Bollywood)

2. https://www.scoopwhoop.com/inothernews/theatre-actors-in-bollywood/#.tbxy7qwjp (51 Times Indian Theatre Gifted Bollywood With Amazing Acting Talent)
3. https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/interesting-and-unknown-facts-about-dadasaheb-phalke-1525077198-1 (Dadasaheb Phalke: The father of Indian Cinema)
4. https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/throwback-of-prithviraj-kapoor-and-madhubala-dilip-kumar-starrer-1960-bollywood-movie-mughal-e-azam?pageId=4 (किस्से: भारत की पहली बोलती फिल्म में पृथ्वीराज ने किया था कमाल, 'मुगल-ए-आजम' के लिए मिली थी इतनी फीस)
5. https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/throwback-of-prithviraj-kapoor-and-madhubala-dilip-kumar-starrer-1960-bollywood-movie-mughal-e-azam?pageId=5 (किस्से: भारत की पहली बोलती फिल्म में पृथ्वीराज ने किया था कमाल, 'मुगल-ए-आजम' के लिए मिली थी इतनी फीस)
6. https://www.world-theatre-day.org/pdfs/RamGopalBajajBIO.pdf
7. https://sangeetnatak.gov.in/sna/citation_popup.php?id=1158&at=1
8. https://in.bookmyshow.com/person/om-puri/1622
9. https://prabook.com/web/om.shivpuri/726764
10. https://cineplot.com/om-shivpuri-memories/ (Om Shivpuri – Memories)

11. https://www.amarujala.com/photo-gallery/entertainment/bollywood/actor-om-shivpori-death-anniversary-know-about-his-personal-and-professional-life?pageId=3 (विलेन बन मशहूर हुए इस एक्टर की ऐसे हुई थी मौत, पत्नी और बेटी ने भी बॉलीवुड में खूब कमाया नाम)

12. https://www.amarujala.com/kavya/mud-mud-ke-dekhta-hu/famous-writer-girish-karnad-untold-stories (मां का बाल विवाह हुआ था और वह बहुत ही कम उम्र में विधवा हो गई थीं: गिरीश कर्नाड)

13. https://www.aajtak.in/entertainment/story/girish-karnad-indian-actor-film-director-kannada-writer-playwright-full-profile-tmov-661611-2019-06-10 (गिरीश कर्नाड: साहित्य, सिनेमा जगत का कभी न भुलाया जाने वाला फनकार)

14. http://www.imagi-nation.com/moonstruck/clsc79.html (Girish Karnad)

15. https://www.facebook.com/Tom-Alter-1266966813367276 (Tom Alter Facebook Profile)

16. https://madrascourier.com/biography/the-lesser-known-story-of-tom-alter/ (Venktesh, Karthik, The Lesser Known story of Tom Alter, Madras Courier, Biography, 23 September 2020)

17. https://economictimes.indiatimes.com/magazines/panache/life-of-tom-alter-some-interesting-facts-you-might-not-have-known/bollywood-loses-a-gem/slideshow/60893838.cms (Life of Tom Alter: Some Interesting Facts You Might Not Have Known, 30 sep. 2017)

18. https://www.filmfare.com/features/being-naseer-2538.html(Being Naseer)

19. https://www.hindustantimes.com/art-and-culture/neena-gupta-on-theatre-mandi-house-and-bengali-market/story-7ItBeKfRBwDmgzHKXNjZpJ.html (From IAS to actor: Neena Gupta on theatre, Delhi and more)
20. https://in.bookmyshow.com/person/neena-gupta/3303
21. https://moviesbooth.com/5-times-neena-gupta-threw-out-the-rule-book-owned-her-personal-style/
22. https://www.indiatv.in/entertainment/bollywood-shahid-kapoor-congratulate-his-father-on-receiving-a-doctorate-shares-a-picture-694202 (शाहिद कपूर ने दी पिता पंकज कपूर को डॉक्टरेट करने की बधाई, शेयर की तस्वीर)
23. https://www.dilsedeshi.com/biography/paresh-rawal-biography-hindi/ (परेश रावल का जीवन परिचय | Paresh Rawal Biography in Hindi)
24. https://www.tribuneindia.com/2010/20100105/harplus.htm#8 (Bollywood actor keeps his love for theatre intact)
25. https://www.cinestaan.com/articles/2020/jan/29/24187/be-an-artist-and-not-a-politician-yashpal-sharma-on-retaining-the-democratic-spirit-in-art (Be an artist and not a politician: Yashpal Sharma on retaining the democratic spirit in art)
26. https://www.thehindu.com/features/cinema/Being-bad-is-hard-work/article16044686.ece (The Hindu, Online news Paper, September 23, 2010 18:39 IST)
27. https://in.bookmyshow.com/person/ratna-pathak-shah/1046804

28. http://www.serendipityartsfestival.com/archives-2016/curators/performing-arts/lillete-dubey/
29. https://in.bookmyshow.com/person/lillete-dubey/3727
30. https://indianexpress.com/article/entertainment/bollywood/shriram-lagoo-dead-1927-2019-rare-actor-highly-intelligent-had-logic-to-apply-to-character-6172542/ (Shriram Lagoo (1927-2019): 'Rare actor, highly intelligent, had logic to apply to character')
31. https://www.filmfare.com/news/bollywood/veteran-actor-dr-shriram-lagoo-passes-away-38091.html(Veteran Actor Dr Shriram Lagoo Passes Away)
32. https://scroll.in/reel/947154/shriram-lagoo-1927-2019-acting-legend-and-rationalist-leaves-behind-a-rich-and-complex-legacy (Kulkarni, Damini, Shriram Lagoo (1927-2019): Acting legend and rationalist leaves behind a rich and complex legacy, 17 Dec. 2019)
33. https://www.bbc.com/hindi/india-50830103 (वंदना, श्री राम लागू: हिंदी और मराठी अभिनेता का 92 साल की उम्र में निधन, 18 दिसंबर 2019)
34. https://www.ndtv.com/entertainment/veteran-actor-shriram-lagoo-cremated-with-state-honours-urmila-matondkar-nana-patekar-and-others-att-2151940 (Veteran Actor Shriram Lagoo Cremated With State Honours. Urmila Matondkar, Nana Patekar And Others Attend Funeral)
35. https://www.imdb.com/name/nm0795661/bio?ref_=nm_ov_bio_sm
36. https://in.bookmyshow.com/person/saurabh-shukla/2063

तालिका-1
पृथ्वीराज कपूर द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 'दो धारी तलवार' (1928), 'सिनेमा गर्ल' (1929), 'आलम आरा' (1931), 'द्रौपदी' (1931), 'राजरानी मीरा' (1933), 'सीता' (1934), 'मंजिल' (1936), 'मिलाप', 'विद्यापति' (1937), 'दुश्मन' (1939), 'चिंगारी', 'सजनी' (1940), 'सिकंदर', 'राज नृतकी' (1941), 'ईशारा' (1943), 'देवदास' (1945), 'दहेज' (1950), 'अवारा' (1951), 'आनंद मठ' (1952), 'परदेश' (1957), 'मुग़ल-ए-आज़म' (1960), 'रूस्तम सोहराब' (1963), 'प्यार किया तो डरना क्या' (1963), 'गज़ल' (1964), 'जानवर' (1965), सिकंदर-ए-आज़म' (1965), 'डाँकू मंगल सिंह' 'ये रात फिर ना आयेगी' (1966), 'तीन बहुरियाँ' (1968), 'नानक नाम जहाँ है' (1969), 'हीर रांझा' (1970), 'कल आज और कल' (1971)

तालिका-2
श्री राम लागू द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: हिंदी सिनेमा: 'देश प्रदेश' (1978), 'मुकद्दर का सिकंदर'(1978), 'लावारीस' (1981), 'इंकार' (1977), 'साजन बिन सुहागन' (1978), 'खुद्दार' (1994), 'घर दुआर' (1985) मराठी सिनेमा: सामना (1974), कठपुतली (1976), भिंगरी (1977), 'सिंहासन' (1979), ज़ाकोल (1980), खिचड़ी (1982), गुपचुप-गुपचुप (1983), मुक्ता (1994), मसाला (2012), नागरिक (2015), शासन (2016)

तालिका-3
ओम शिवपुरी द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: आषाढ़ का एक दिन (1971), कोशिश (1972), नमक हराम (1973), अचानक (1973), तूफान (1975), टुकड़े (1975), शोले (1975), जीवन ज्योति (1976), उधार का सिन्दूर (1976), मौसम (1975), बालिका बधू (1976), आर्द्र (1976), किताब (1977), फरिश्ता या कातिल (1977), हम किसी से कम नहीं (1977), इमाम धरम (1977), एक ही रास्ता (1977), फ़ाइ फॉर (1978), डॉन (1978), नौकरी (1978), पत्नी और वो (1978), चक्रव्यूह (1978), स्वर्ग नर्क (1978), सरकारी मेहमान (1979), ग्रेट जुआरी (1979), मीरा (1979), हम तेरे आशिक हैं (1979), सरगम (1979), जादू का पैमाने (1980), ख़ूबसूरत (1980), वही फिर रात (1980), बंदिश (1980), रेड रोज़ (1980), द बर्निंग ट्रेन (1980), किस्मत (1981), कुदरत (1981), खून की धमाका (1981), मेरी आवाज सुनो (1981), जमाने को दिखाना है (1981), तीसरी आँख (1982), सम्राट (1982), बेमिसाल (1982), ये तो कमाल हो गया (1982), अर्थ (1982), डिस्को डांसर (1982), पेंटर बाबू (1983), प्रेम तपस्या (1983), अँकोवा लॉ (1983), कुली (1983), तलाक (1984), आज का विधायक राम अवतार (1984), मकसद (1984), नया कदम (1984), आशा ज्योति (1984), हम दोस्त (1985), मास्टरजी (1985), वैज्ञानिक मैं गाऊंगा (1985), तूफान-तूफान (1985), टार्ज़न के एडवेंचर (1985), गुलामी (1985), गिरफ़्तार (1985), अलग अलग (1985), देखा प्यार तुम्हारा (1985), सवेरेवाली गाड़ी (1986), आखिरी सफर (1986), शत्रु (1986), मददगार (1987), डांस डांस (1987), सीतापुर की गीता (1987), मैं और तुम (1987), हमारा खानदान (1988), तटबंध लेडीज़ (1988), मर्डर (1988), नामुमकिन (1988), एक

नया रिश्ता (1988), खतरों के खिलाड़ी (1988), कंवरलाल (1988), बीवी हो तो ऐसी (1988), सच्चाई की ताकत (1989), मिट्टी और सोना (1989), दाता (1989), गोला बारूद (1989), आग का गोला (1989), जुर्रत (1989), अपना देश पराए लोग (1989), कसम सुहाग की (1989), जेंटलमैन (1989) कहां है कानून (1989), घर का चिराग (1989), नाग नागिन (1990), अमीरी ग़रीबी (1990), स्वर्ग (1990), सालाब (1990), जुर्म (1990), वीरू दादा (1990), खूनी रात (1991), नरसिम्हा (1991), शांति क्रांति (1991), रुपये दस करोड़ (1991), हमला (1992), ज़ुल्म हुकूमत की हुकूमत (1992), किस में कितना है दम (1992), युगांधर (1993), पुलिसवाला (1993), आखिरी संघर्ष (1997)

तालिका-4
गिरीश कर्नाड द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: हिंदी सिनेमा - 1974 में जादू का शंख, 1975 में निशांत, 1976 में मंथन, 1977 में स्वामी, 1977 में जीवन मुक्त, 1978 में संधर्भ, 1979 में संपर्क, रत्नदीप, 1980 में बेक़ासूर, आशा, मन पसंद, अपने पराये, 1981 में शमा, 1982 में तेरी कसम, 1983 में एक बार चले आओ, 1984 में तरंग, तलाक, 1985 में ज़माना, मेरी जंग, सुर संगम, 1987 में सूत्रधार, 1988 में आकर्षण, 1989 में मिल गयी मंजिल मुझे, 1991 में अंतर्नाद, 1996 में आतंक, 1998 में चाइना गेट, आक्रोश: क्रोध का चक्रवात, 2000 में पुकार, 2005 में इकबाल, 2006 में एक प्रकार का गुबरैल, 2009 में 8x10 तस्वीर, 2009 में आशाएं, 2012 में एक था टाइगर, 2014 में सम्राट एंड कंपनी, 2015 में गुरू दक्षिणा, 2016 में शिवाय, चाक एंड डस्टर, 2017 में टाइगर जिंदा है

कन्नड़ सिनेमा - 1970 में संस्कार, 1971 में वंश वृक्ष, 1978 में संधर्भ, 1983 में अनंद भैरवी, 1983 में अन्वेषन, 1985 में नी ठंडा कनिके, 1988 में कादानी बेन्की, 1989 में प्रथमा उषाकिराणा, 1990 में संथा शिशुनाला शरीफा, 1994 में पूर्ण सत्य, अगाथा, 1995 में संगीत सागर गणयोगी पंचाक्षर गवै, 1999 में कनूरू हेग्गादिथि, एके-47, प्रत्यर्थ, 2001 में वंदे मातरम, 2006 में तनाणम तनाणम, 2007 में लव कुश, 2011 में केम्पे गौड़ा, 2012 में यारे कूगाडाली, 2013 में स्वीटी नन्ना जोड़ी, चंद्रा, 2014 में सवारी 2, 2015 में रूद्रा तांडव, राणा विक्रम इसके अलावा भारत के भारत के अन्य भाषा तेलुगू, तमिल, मलयालम, असमिया, मराठी में भी काम किया। जिसमें 1982 में अम्बरथा, 1982 में अपरूपा, 1991 में चैतन्य, 1996 में राजा, 1997 में रत्वगम, मिंसार कनवु, 1998 में कधल मन्नान, 2000 में हे राम!, 2003 में टाइगर हरिश्चंद्र प्रसाद, 2004 में चेल्लामे, शंकर दादा एमबीबीएस

तालिका-5
राम गोपाल बजाज द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 'मासूम' (1983), 'हिप-हिप हुर्राह' (1984), 'न्यू दिल्ली टाईम्स', 'अंतहीन' (1986), 'मिर्च मशाला' (1987), 'चांदनी', 'मैं आज़ाद हूँ' (1989), 'फायर' (1986), 'जय गंगा', 'द पिकॉक स्परिंग' (1996), 'निषाद' (2002) 'मोंदों मेयेर उपाख्यान', 'मंगल पाण्डये द राइजींग', 'द मय्थ', 'परज़ानिया' (2005), 'कथो उपनिषद' (2011), 'लोगिन' (2012), 'मैंगो ड्रिम्स' (2016), 'जॉली एल. एल. बी. 2', 'चिफ' (2017), 'मणिकर्णिका द क्विन ऑफ झांसी' (2019), प्रतिशोध, चाँदनी,

राम गोपाल बजाज द्‌वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: 'महाकुंभ' (2014-2015), 'रिश्तों का चक्रव्यूह' (2017-2018), 'सूफियाना प्यार मेरा' (2019), 'द वेरडिक्ट-स्टेट वीएस नानावती' (2019)

तालिका-6
परेश रावल द्‌वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 1984 में होली, धर्म और कानुन, 1985 में मिर्च मसाला, अर्जुन, 1986 में नाम, समुंद्र, भगवान दादा, 1987 में उत्तर दक्षिण, डकैत, मरते दम तक, 1988 में खरीदार, कब्ज़ा, आखिरी अदालत, फ़लक, खतरों के खिलाड़ी, सोने पे सुहागा, 1989 में ताकतवर, शिवा, हथियार, राम लखन, 1990 में स्वर्ग, काफ़िला, आवारगी, जीवन एक संघर्ष, क्रोध, जख्मी ज़मीन, गुनाहों का देवता, वर्दी, 1991 में स्वयं, योद्‌धा, प्रेम कैदी, साथी, आई मिलन की रात, फ़तेह, शंकरा, गुनहगार, प्रतिकार, 1992 में दुश्मन ज़माना, दौलत की जंग, पुलिस ऑफिसर, कर्म योद्‌धा, जानम, तिलक, जीना मरना तेरे संग, ज़ुल्म की अदालत, अधर्म, जिगर, विरोधी 1993 में सरदार, अंत, रूप की रानी चोरों का राजा, सर, पहला नशा, कृष्ण अवतार, गोविन्दा गोविन्दा, प्लेटफॉर्म, मनी, परवाने ,दिल की बाज़ी, माया, कन्या दान, मुकाबला, फूल और अंगार, किंग अंकल, दामिनी, 1994 में द जेंटलमैन, वो छोकरी ,अंदाज़ अपना अपना, आग और चिन्गारी, दिलवाले, क्रान्तिवीर, लाड़ला, मोहरा, जुआरी, इक्का राजा रानी, आ गले लग जा, 1995 में बाज़ी, मिलन, निशाना, ओ डार्लिंग यह है इण्डिया, रिकशावोड्, संजय, मनी मनी, जन्म कुंडली, अकेले हम अकेले तुम, राजा, रावण राज, 1996 में बंदिश, विजेता, ग्रेट रॉबरी, हाहाकार, निर्भय, रंगबाज़, 1997 में तमन्ना, मिस्टर एंड मिसेज़ खिलाड़ी,

दौड़, इंसाफ, गुलाम-ए-मुसतफा, जुदाई, गुप्त, हीरो, नम्बर वन, मृत्युदाता, आर या पार, औज़ार, ज़मीर, महानता, कहर, 1998 में सत्या, बदमाश, हीरो हिन्दुस्तानी, कभी ना कभी, अंगारे, बड़े मियाँ छोटे मियाँ, चाची 420, चाइना गेट, कुदरत, दंड नायक, अचानक, डोली सजा के रखना, 1999 में वास्तव, खूबसूरत, हम तुम पे मरते हैं, आरज़ू ,हसीना मान जायेगी, गैर, बड़े दिलवाला, आ अब लौट चलें, 2000 में हेरा फेरी, दुल्हन हम ले जायेंगे, दीवाने, हद कर दी आपने, तेरा जादू चल गया, हर दिल जो प्यार करेगा, बुलन्दी, फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी, शिकारी, 2001 में ये तेरा घर ये मेरा घर, लव के लिये कुछ भी करेगा, अमेरिकन चाय, नायक, मोक्ष, 2002 में कहता है दिल बार बार, हम किसी से कम नहीं, आवारा पागल दीवाना, आँखें, चोर मचाये शोर, 2003 में बागबान, हंगामा, दिल का रिश्ता, जोड़ी क्या बनाई वाह वाह रामजी, फंटूश, आँच, 2004 में हलचल, शंकर दादा, एम बी बी एस, आन, ऐतराज़, पूछो मेरे दिल से, 2005 मेँ बचके रहना रे बाबा, गरम मसाला, दीवाने हुए पागल, 2006 में मालामाल वीकली, भागम भाग, फिर हेरा फेरी, 36 चाइना टाउन, चुप चुप के, जाने होगा क्या, गोलमाल, यूँ होता तो क्या होता, 2007 में चीनी कम, नो स्मोकिंग, भूल भुलैया, फौज में मौज, गुड बॉय बैड बॉय, फूल एन फाइनल, जाने तू या जाने ना, वेलकम, हैटट्रिक, 2008 में एक दो तीन, जाने तू ... या जाने ना, मान गये मुगल-ए-आजम, मुंबई मेरी जान, मेरे बाप पहले आप, 2009 मेँ रोड टु संगम, 'पा', रेडियो ढूडते रेह जाओगे, दे दना दन, 2010 में रण, रंग रसिया, आक्रोश, अतिथि तुम कब जाओगे?, 2011 मेँ रेडी, 2012 मेँ खिलाड़ी 786, ओ एम जी- हे भगवान, फरारी की सवारी, तेज, 2013 मेँ टेबल नंबर 21, 2014 मेँ राजा नटवरलाल,

हिम्मतवाला, जिला गाजियाबाद, 2015 में वेलकम बैक, धरम संकट में, 2019 में उरी द सर्जिकल स्ट्राइक, 2023 में शहज़ादा।

तालिका-7
टॉम ऑल्टर द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: हिंदी सिनेमा- 2017 में सरगोशियां, रिड्रम, 2014 में ऑनर किलिंग, 2012 में लाइफ की तो लग गई, 2011 में तुम्हारी मारिया, 2010 में जानलेवा, 2008 में जुनून रंग रंगिया के रंग, 2007 में भज्जा भून, 2005 में जल्लाद, द राइजिंग: बैलाड ऑफ मंगल पांडे, 2004 में लोकनायक, वीर जारा, असंभव, एतबार, घर गृहिस्ती, 2003 में हवायें, 2002 में दिल विल प्यार व्यार, 1993 में सरदार, 1992 में जुनून, 1990 में आशिकी, 1989 में परिंदा, 1988 में सोने पे सुहागा, 1986 में कर्मा, 1985 में राम तेरी गंगा मैली, 1981 में क्रांति, 1978 में देश परदेश, 1977 में राम भरोसे, शतरंज के खिलाड़ी, 1976 में चरस। **अंग्रेजी सिनेमा** - 2013 में कॉर्नर टेबल, 2012 में एँ क्रीम, 2011 में वीट लव दिल्ली, सन ऑफ फ्लावर, साइकिल किक, 2008 में अ ओशिनयन ऑफ एन ओल्ड मेन, 2006 में राजा के साथ एक रात, 2001 में विंग्स ऑफ फायर, 1982 में गांधी। **अन्य भाषा** - 1977 में कन्नेश्वर (कन्नड़), 1982 में ब्रजभूमि (ब्रजभाषा), 1996 में अदाजया (असमिया), 2007 में कैलाशी केलेनकारी (बांग्ला), 2012 में केवी राइट जैश (गुजराती), 2014 में दापतर-स्कूल बैग (मराठी), 2016 में अनुरागकारीक्किनवेल्लम् (मलयालम)

टॉम ऑल्टर द्वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: 2017 में रिश्तों का चक्रव्यूह, 2014 में यहां के हम सिकंदर, 2003 में हातिम, 1997 में शक्तिमान, बेताल पचीसा, 1993-1997 में ज़बान संभाल के, 1988 में भारत एक खोज, 1990-1991 में टीपू सुल्तान की तलवार, 1993-1998 में जुनून, 1995-1998 में आहट

तालिका-8
नसीरूद्दीन शाह द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: हिंदी सिनेमा- 2016 में जीवन हठी, तेरा सुररूर, 2015 में चार्ली के चक्कर में, वेलकम बैक, डर्टी पॉलिटिक्स, 2014 में फाइंडिंग फन्नी, डेढ़ इश्किया, 2013 में जॉन डे, ज़िंदा भाग, सिद्धार्थ, 2011 में देओल, गर्ल इन येलो बूट्स, डर्टी पिक्चर, ज़िन्दगी न मिलेगी दोबारा, 7 खून माफ़, 2010 अल्लाह के बन्दे, राजनीति, इश्किया, पीपली लाइव, 2009 में फ़िराक, बारह आना, 2008 में दस कहानियां, जाने तू या जाने ना, एक बुधवार!, बॉम्बे से बैंकॉक, अमल, 2007 में जाने तू या जाने ना, शूट ऑन साइट, हनीमून ट्रैवल्स प्राइवेट लिमिटेड, 2006 में कृश, शून्य, वैली ऑफ फ्लौवर्स, एक धुन बनारस की, मिक्सड डबल्स, ओमकारा, 2005 में पहेली, इकबाल, होम डिलीवरी, बींग साइरस, मैं मेरी पत्नी और वो, परज़ानिया, द ग्रेट न्यू वण्डरफुल, 2004 में असंभव, मैं हूँ ना, 2003 तीन दीवारें, मकबूल, द लीग ऑफ एक्सट्राऑर्डिनरी जेंटलमैन, 2002 में एनकाउन्टर, 2001 में कसम, मोक्ष, मानसून वैडिंग, मुझे मेरी बीवी से बचाओ, गुरु महागुरु, 2000 में तूने मेरा दिल ले लिया, हे राम, गज गामिनी, 1999 में सरफ़रोश, भोपाल एक्सप्रेस, 1998 में चाइना गेट, दंड नायक, धूँढते रह जाओगे, सर उठा के जियो, बॉम्बे बॉयेज़, सच अ लौंग जर्नी, 1997 में अग्निचक्र, दावा, लहू के दो रंग, प्राइवेट

डिटेक्टिव, 1996 में चाहत, राजकुमार, हिम्मत, 1995 में टक्कर, नाजायज़, मिस्टर अहमद, 1994 में द्रोह काल, पोंथन मादा, त्रियाचरित्र, मोहरा, 1993 में लुटेरे, सर, कभी हाँ कभी ना, हस्ती, बेदर्दी, गेम, 1992 में विश्वात्मा, चमत्कार, पनाह, डाकू और पुलिस, इलेक्ट्रिक मून, तहलका, टाइम मशीन, 1991 मेँ लक्ष्मण रेखा, शिकारी, एक घर, माने, 1990 में पुलिस पब्लिक, चोर पे मोर, 1989 में खोज, त्रिदेव, 1988 में हीरो हीरालाल, मालामाल, पेस्तॉन जी, रिहाई, द पर्फेक्ट मर्डर, ज़ुल्म को जला दूँगा, लिबास, मिर्ज़ा ग़ालिब, 1987 में जलवा, इजाज़त, ये वो मंज़िल तो नहीं, 1986 में जेनेसिस, शर्त, एक पल, मुसाफ़िर, कर्मा, 1985 में गुलामी, मिसाल, मिर्च मसाला, त्रिकाल, अघात, अनंतयात्रा, खामोश, 1984 में मान मर्यादा, लोरी, होली, मोहन जोशी हाज़िर हो, कंधार, पार पार्टी, 1983 मेँ जाने भी दो यारों, मासूम, हादसा, मंडी, अर्द्ध सत्य, कथा, वो सात दिन, 1982 में बाज़ार, दिल आखिर दिल है, स्वामी दादा, अधरशिला, सितम, तहलका, 1981 में चक्र, उमराव जान, तजुर्बा, बेज़ुबान, सज़ाये मौत, 1980 में आक्रोश, अलबर्ट पिन्टो को गुस्सा क्यों आता है, हम पाँच, स्पर्श, भवनी भवाई, 1979 में सुनयन, शायद, 1978 में जुनून, 1977 में भूमिका, गोधूलि, 1976 में मंथन, 1975 में निशांत।

तालिका-9
ओम पुरी द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 1975 में चोर चोर छुपजा, 1976 में घासीराम कोतवाल (मराठी), 1977 में दबी हुई आवाज़ें, भूमिका, गोधुली, 1978 में अरविंद देसाई की अजीब दास्तां, भूख, 1979 में शायद, साँच को आंच नहीं, 1980 में स्पर्श, चन्न परदेसी (पंजाबी), भवनी भवाई (गुजराती), अल्बर्ट पिंटो को गुस्सा

क्यों आता है, आक्रोश, 1981 में हरि होंडल बरगदर: बटाईदार, कलयुग, शोध, 1982 में गांधी, डिस्को डांसर, वक्त-वक्त की बात, रास्ते प्यार के, विजेता, नसीब नी बलिहारी (गुजराती), 1983 में गुमनाम है कोई, चोख (बंगाली), जाने भी दो यारो, आरोहन, अर्ध सत्य, मंडी, बेकरार, आश्रय, 1984 में दल, माटी मांगे खून, दुनिया, श्रांत, रावण, पार, राम की गंगा, तरंग, शीशे का घर, गिद्ध, 1985 में पत्थर, ज़माना, बहू की आवाज़, होली, नासूर, सांझी, अघात, 1986 में अंतहीन, उत्पत्ति, नई दिल्ली टाइम्स, लॉंग दा लिश्कारा, 1987 में मिर्च मसाला, गोरा, सुसमन, मार्टे डैम टाक, 1988 में अचानक, हम फरिश्ते नहीं, एक ही मकसद, पुरावृतम (मलयालय), 1989 में शगुन, सावा सेर गेंहु, दर्शन, इलाका, 1990 में संक्रांति, हालात, घायल, दिशा, 1991 में इरादा, सैम और मैं, (अंग्रेजी), नरसिंह, मीना बाज़ार, अन्तर्नाद, 1992 में कर्म योद्धा, रात्रि (तेलगु), मौजूदा, आनन्द का शहर (अंग्रेजी), अंकुरम (तेलगु), धारावी, 1993 में आकांक्षा, माया मेमसाब, द बर्निंग सीज़न, पतंग, हिरासत में, 1994 में भेड़िया (अंग्रेजी), द्रोहकाल, पुरुष, 1995 में एक का जवाब दो, ज़ख्मी सिपाही, आतंक हाय आतंक, मुसीबत में भाई (अंग्रेजी), लक्ष्य, तर्पण, कर्तव्य, 1996 में प्रेमग्रंथ, कृष्ण, भूत और अँधेरा (अंग्रेजी), माचिस, घातक, राम और श्याम, तलाशी, 1997 में ज़मीर: एक आत्मा का जागरण, गुप्त: छिपा हुआ सच, मेरा बेटा कट्टरपंथी (अंग्रेजी), भाई, चाची 420, मृत्युदंड, निर्णय, चुप, आस्था, 1998 में विनाशक, प्यार तो होना ही था, इतनी लम्बी यात्रा (अंग्रेजी), चाइना गेट, 1999 में पूरब ही पूरब है, एके47 (कन्नड़-तेलुगु), खूबसूरत, मोन पेटिट डायबल (फ्रेंच-हिंदी), 2000 में दुल्हन हम ले जायेंगे, पुकार, हे राम! हेरा फेरी, कुंवारा, कुरुक्षेत्र, घाठ, जिंदगी जिंदाबाद, बस यारी राखो, 2001 में फर्ज़, ज़हरीला, गदर:एक प्रेम कथा, पैरोल अधिकारी (अंग्रेजी),

अब खुश हो? (अंग्रेजी), चिड़ियाघर संचालक(अंग्रेजी), रहस्यवादी मालिशिया(अंग्रेजी), भारतीय, दीवानापन, बॉलीवुड कॉलिंग, इस प्यार को क्या नाम दूं, 2002 में पिताह, माँ तुझे सलाम, क्रांति, अंश: घातक भाग, प्यार दीवाना होता है, आवारा पागल दीवाना, शरारत, चोर मचाये शोर, गुरु महागुरु, घाव, ध्रुव, 2003 में आपको पहले भी कहीं देखा है, काश आप हमारे होते, एक और एक ग्यारह, कोड 46 (अंग्रेजी), मिस इंडिया, मकबूल, चुपके से, कगार:जीवन की सीमा, धूप, प्यार किया नहीं जाता, 2004 में युवा, देव, लक्ष्य, बॉलीवुड के बादशाह, रुकना, 2005 में ज़िंदा दिल, मुंबई एक्सप्रेस, मंगल पांडे: द राइजिंग, अमर जोशी शहीद हो गया, क्यों की, दीवाने हुए पागल, जल्लाद, 2006 में रंग दे बसंती, बागी, मालामाल विक्ली, चुप चुप के, बाबुल, डॉन, 2007 में खल्लास, देल्ही हाइट्स, पंगा ना लो, मूर्ख और अंतिम, बुद्ध मर गया, विक्टोरिया नं. 203, ढोल, दम काटा, चार्ली विल्सन का युद्ध(अंग्रेजी), देखते ही गोली मार दो, स्वागत, 2008 में यारियां, मेरे बाप पहले आप, किस्मत, कनेक्शन, पैसा है तो हनी है, सिंह इज किंग, मुखबिर, महारथी, 2009 में चल चला चल, बिल्लू, दिल्ली-6, बाबर, लंदन ड्रीम्स, ज़िंदगी चलती रहती है, कुर्बान, बोलो राम, 2010 में संगम का रास्ता, ना घर के ना घाट का, कुश्ती, दबंग, पश्चिम ही पश्चिम है, एक्शन रिप्ले, 2011 में तीन थे भाई, कुछ लव जैसा, प्रेम एक्सप्रेस, बिन बुलाये बराती, खाप, डॉन 2: द किंग इज बैक, समाज काम से गई, 2012 में अग्निपथ, तेरे नाल लव हो गया, चार दिन की चांदनी, मेरे दोस्त पिक्चर अभी बाकी है, कृष्ण और कंस, फूल का बेटा, कमाल धमाल मालामाल, हे भगवान, चक्रव्यूह, 2013 में पुलिसगीरी, जट्ट बॉयज पुत्त जट्टण दे (पंजाबी), भाजी समस्या में (पंजाबी), प्रेमी 2014 में बेरहम, बाज़ार ए हुस्न, सौ फुट की यात्रा (अंग्रेजी), छोटे आतंक, चार

साहिबजादे (पंजाबी), 2015 में जय जवान जय किसान, गंदी राजनीति, चमड़ा जीवन(पंजाबी), जय हो लोकतंत्र, उवा, मिस टनकपुर हाजिर हो, बजरंगी भाईजान, वापसी पर स्वागत है, बुनियाद, (पंजाबी), होगया दिमाग का दही, बनिया (अंग्रेजी), 2016 में घायल एक बार फिर, एक लाख नदियाँ (अंग्रेजी), आदुपुलियट्टम (मलयालम), परियोजना मराठवाड़ा (मराठी), योद्धा सावित्री, कानून में अभिनेता (पाकिस्तानी फिल्म), मिर्ज्या, गांधीगिरी, ये है लॉलीपॉप, चार साहिबजादे: बंदा सिंह बहादुर का उदय, चापेकर बंधु, 2017 में वायसराय हाउस (अंग्रेजी), गाजी हमला, चीता (कन्नड़), नली रोशनी, श्री कबाड़ी, 2018 में लोड वेडिंग (पाकिस्तानी फिल्म), 2019 में गांधी हत्या, 2020 में गुल मकाई, ओमप्रकाश जिंदाबाद, 2023 में खेला होबे
ओम पुरी द्वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: सदगति, मुकुट में जड़ा रत्न, खानदान, भारत एक खोज, काकाजी कहिन, तमस, श्री योगी, किरदार, वो छोकरी, आहट, सी हॉक्स, अन्तराल, सीआईडी, अचानक 37 साल बाद, सफेद दांत, जासूस विजय, द्वितीय जनरेशन, कैंटरबरी टेल्स, हमने ली है शपथ।

तालिका-10
अनुपम खेर द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: सारांश (1984), कर्मा (1986), अ वेडनसडे (2008), खोसला का घोसला (2006), स्पेसल 26 (2013), दिलवाले दुल्हनियाँ ले जायेंगे (1995), मैंने गाँधी को नहीं मारा (2005), डैडी (1989) (टी.वी. सिनेमा), हम आपके हैं कौन (1994), लम्हें (1991), राम लखन (1989), 1942 अ लव स्टोरी (1994), बेबी (2005), कुछ कुछ होता है (1998), एम. एस. धोनी

(2016), सौदागर (199), तेज़ाब (1988), दिल है कि मानता नहीं (1991), विवाह (2006), कहो ना... प्यार है (2000), हसीना मान जायेगी (1999), होटल मुंबई (2018), द एक्सिडेंटल प्राइम मनिस्टर (2019), दिल (1990), वीर-ज़ारा (2004), प्रेम रत्न धन पायो (2015), हम (1991), मोहब्बतें (2000), हम आपके दिल में रहते हैं (1999), जब तक है जान (2012), दबंग (2010), हम हैं कमाल के (1993), सूर्वंशंम (1999), शोले और शबनम (1992)
अनुपम खेर द्वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: 2001 में 'सवाल दस करोड़ का' 2004 'से ना समथिंग टू अनुपम अंकल', अमेरिकन सिरिज 'ई.आर.', 2014 में 'अनुपम खेर शो, कुछ भी हो सकता है', भारतवर्ष, लीड इंडिया

तालिका-11
पंकज कपूर द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 1982 में गांधी, आधारशिला, 1983 में जाने भी दो यारो, आरोहन, मंडी, 1984 में खण्डहर, मोहन जोशी हाज़िर हो, 1985 में खामोश, ऐतबार, अघात, 1986 में चमेली की शादी, मुसाफिर, एक रुका हुआ फैसला, 1987 में जलवा, ये वो मंज़िल तो नहीं, सुसमन, 1988 में मैं ज़िंदा हूँ, एक आदमी, तमस, 1989 में अगला मौसम, राख, मरही दा दीवा (पंजाबी), कमला की मौत, 1990 में एक डॉक्टर की मौत, षडयंत्र, 1992 में रोजा (तमिल), 1993 में आकांक्षा, द बर्निंग सीज़न, 1994 में कोख, 1995 में राम जाने, 1997 में रुई का बोझ, 2002 में जैकपॉट दो करोडे, 2003 में मैं प्रेम की दीवानी हूं, मकबूल 2005 में दस, द ब्लू अंब्रेला, सेहर, 2007 में धर्म, 2008 में हल्ला बोल, 2009 में प्यार खिचड़ी, 2010 में गूड शर्मा, 2011 में चला मुसद्दी ऑफिस-ऑफिस, 2013 में मटरू

की बिजली का मंडोला, 2014 में फाइंडिंग फैनी (अंग्रेजी), 2015 में शानदार, 2018 में टोबा टेक सिंह, 2019 में हैप्पी, 2022 में जर्सी, 2023 में लॉस्ट, भिड़, 2024 में बिन्नी एंड फैमली
पंकज कपूर द्वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: 'नीम का पेड़', 'फटिचर', 'कब तक पूकारू', 'क्रम चंद', 'फिलिप्स टॉप टेन', 'ऑफिस-ऑफिस', 'जबान संभाल के', 'लाइफ लाइन', 'करमचंद',

तालिका-12
पीयूष मिश्रा द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 1988 में भारत एक खोज, 1993 में सरदार, 1998 में दिल से, 2002 में समुराई, 2003 में तितली, मकबूल, एक दिन 24 घंटे, साला सिटी, 2004 में दिवार, 2005 में बहुत अच्छा, 2007 में 1971, झूम बराबर झूम, 2009 में गुलाल, सफेद हाथी, 2010 में तेरे बिन लादेन, लफंगे परिंदे, लाहौर, 2011 में भिंडी बाज़ार, पीले जूते वाली वह लड़की, रॉकस्टार 2012 में गैंग्स ऑफ वासेपुर - भाग 1, गैंग्स ऑफ वासेपुर - भाग 2, एक दिन याद रखें, 2013 में पार्श्वगायक, मध्याहन रेखाएँ, 2014 में रिवॉल्वर रानी, द शौकिन्स, 2015 में त्योहार, घर वापसी, 2016 में कथाकार, तेरे बिन लादेन: जिंदा या मुर्दा, हैप्पी भाग जायेगी, गुलाबी, 2018 में संजू, हैप्पी फिर भाग जायेगी, 2020 में गैरकानूनी, JL50, 2021 में मत्सयकांड, इलिगल 2, 2022 में साल्ट सिटी, 2023 में कंजूस मक्खिचूस, 2024 में मैं अटल हूँ, भारतीय 2, जेएनयू: जहांगीर राष्ट्रीय विश्वविद्यालय।

पीयूष मिश्रा द्वारा बतौर गायक किये गये लोकप्रिय सिनेमा: गुलाल (2009), लाहौर (2010) (गीत: 'ओ रे बंदे'), गैंग्स ऑफ वासेपुर (2012), (गीत: 'मनमौजी' और 'इक बगल'), जलपरी (2012) (गीत: 'बरगद के पेड़ों'), शीशमहल (2024) (गीत: 'होता है') में बतौर संगीतकार एवं 'आरंभ है प्रचंड' (गुलाल - 2009), 'दुनिया' (गुलाल - 2009), 'जब शहर हमारा' (गुलाल - 2009), 'इक बगल में (गैंग्स ऑफ वासेपुर-2012), 'आबरू' (गैंग्स ऑफ वासेपुर - भाग 2 - 2012), 'मनवा' (अर्जुन: द वॉरियर प्रिंस - 2012), 'बरगद के पेड़ो पे शाखे पुरानी' (जलपरी: द डेजर्ट मरमेड - 2012), 'बस चल कपाट' (साहब, बीवी और गैंगस्टर रिटर्न्स - 2013), 'चंदा की कटोरी है' (रिवॉल्वर रानी - 2014), 'चल लड़े रे भैया' (रिवॉल्वर रानी - 2014), 'थायें करे कट्टा' (रिवॉल्वर रानी - 2014), 'भोलासा मन था' (शीशमहल - 2024), 'होता है' (शीशमहल - 2024)
पीयूष मिश्रा द्वारा गीत लेखन किये गये लोकप्रिय सिनेमा: अपना दिल मिलाओ दोस्तो, ब्लैक फ्राइडे, आजा नचले, परामर्श, गुलाल, लाहौर, गैंग्स ऑफ वासेपुर-1, गैंग्स ऑफ वासेपुर-2, जलपरी, समीर, 7 दिन मोहब्बत इन, शमशेरा, शीशमहल

तालिका-13
सौरभ शुक्ला द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: 'नीम का पेड़', 'फटिचर', 'कब तक पूकारू', 'क्रम चंद', इस रात की सुबह नहीं, करीब, ज़ख्म, ताल, अर्जुन पंडित, बादशाह, ये है मुंबई मेरी जान, हे राम!, दिल पे मत ले यार, मोहब्बतें, काट दो, नायक: असली हीरो, ये तेरा घर ये मेरा घर, मोक्ष, मेरे यार की शादी है, कर्ज: सत्य का बोझ, ये दिल, कलकत्ता मेल, रघु रोमियो, मुझे माफ करें, मुंबई मैटिनी, हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी, मुद्दा - मुद्दा, युवा, बालू ABCDEFG (तेलुगु), मुंबई एक्सप्रेस, अन्नियान (तमिल),

यक़ीन, घर पहुँचाना, कल: कल और आने वाला कल, चेहरा, अल्लारी बुल्लुडू, मिश्रित युगल, लगे रहो मुन्ना भाई, फुटपाथ की देखभाल (कन्नड़), सलाम-ए-इश्क: प्यार को श्रद्धांजलि, खोया खोया चाँद, शोबिज़, मेरा नाम एंथनी गोंसाल्वेस है, मिथ्या, दे ताली, हरि पुत्तर: आतंक की कॉमेडी, स्लमडॉग करोड़पती, दसविदानिया, अरे बाप रे, किस्मत से संयोग, प्यार खिचड़ी, चिंटू जी, तेरा क्या होगा जॉनी, लाहौर, पाठशाला, मिर्च, उत्तर पतंग, ये साली जिंदगी, आरक्षण, शकल पे मत जा, पप्पू कान्ट डांस साला, जिंदा रहना, मैं हूं 24, दिल्ली सफारी, अंतिम कार्य, डेविड, फटा पोस्टर निकला हीरो, गुंडे, मैं तेरा हीरो, भूतों का गिरोह, एक थो चांस, लात मारना, पी, कौन कितने पानी में, मोहल्ला अस्सी, ढिल्लूकु धुड्डु (तमिल), द विशिंग ट्री, जग्गा जासूस, रेड, दास देव, धोखाधड़ी सैयां, ठाकुरगंज का परिवार, अल्बर्ट पिंटो को गुस्सा क्यों आता है?, द ज़ोया फैक्टर, फैसला - राज्य बनाम नानावटी, उजड़ा चमन, बाला, पागलपंती, आधार, छलांग, मैडम मुख्यमंत्री जी, द बिग बुल, तड़प, शमशेरा, दृश्यम 2, भेड़िया
सौरभ शुक्ला द्वारा लिखा गये लोकप्रिय सिनेमा पटकथा: कलकत्ता मेल, मुंबई एक्सप्रेस, एसीड फैक्ट्री, पप्पू कॉट डांस साला, दिल पे मत ले यार, रघु रोमियो, मुद्दा - मुद्दा, चेहरा, सलाम-ए-इश्क: प्यार को श्रद्धांजलि, मिथ्या, रात गई बात गई, उत्तर पतंग, मोटा, मैं हूं 24, शुष्क दिवस

तालिका-14
यशपाल शर्मा द्वारा किये गये लोकप्रिय सिनेमा: हजार चौरासी की माँ, शूल, अर्जुन पंडित, समर, पुकार, बवंडर, आलवंधन/अभय (हिंदी-तमिल), मुझे कुछ कहना है, अवगट (मराठी), लगान: वन्स अपॉन ए टाइम इन इंडिया, गुनाह, मुंबई से आया

मेरा दोस्त, चमेली, धूप, अम्मा, दम, गंगाजल, हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी, असम्भव, अब तक छप्पन, किसना: योद्धा कवि, डी, यहां, अमू, अपहरण, धड़कनें, बस एक पल, आजा नचले, लक्ष्यम (तेलुगु), अनवर, जोखिम, टशन, देशद्रोही, सज्जनपुर में आपका स्वागत है, सिंह इज किंग, संकट सिटी, वेल डन अब्बा, मुंबई कटिंग, डॉन सीनु (तेलुगु), लम्हा, रोड, ये साली जिंदगी, आरक्षण, सही धंधे गलत बंदे, मोनिका, चार्टशिट, जल, चक्रधर, राउडी राठौर, सुपर से ऊपर, गैंग्स ऑफ वासेपुर, जीना है तो ठोक डाल, ओएस, अजोबा (मराठी), सिंह साहब महान, गीतियाँ (डोगरी), जट्ट जेम्स बॉन्ड (पंजाबी), मंजूनाथ, पगड़ी द ऑनर (हरियाणवी), ऐसा ये जहान, मुख्तियार चड्ढा (पंजाबी), सरदार जी 2 (पंजाबी), बह्निमन (असमिया), हमीर (गुजराती), नली रोशनी, तूफान सिंह (पंजाबी) खेल खत्म, पंचलैट, बाबूजी एक टिकट बम्बई, जर्नी ऑफ भांगओवर, भारत अने नेनु (तेलुगु), एस.पी.चौहान, ठाकुरगंज का परिवार, फगुन हवे (बांग्लादेशी), दादा लखमी (हरियाणवी), बंटी और बबली-2, अयोथी (तमिल), महान भारतीय परिवार, बस्तर: नक्सली स्टोरी, चंदू चैंपियन।
यशपाल शर्मा द्वारा किये गये लोकप्रिय टेलीविज़न धारावाहिक: सीआईडी के कुल 4 एपिसोड (दो एपिसोड 2002 में और बाकी दो एपिसोड 2005 में) 2010 में "मेरा नाम करेगी रोशन" 2011 में 'तारक मेहता का उल्टा चश्मा' और 2014 में 'नीली छतरी वाले'

परिशिष्ट - 1 प्रश्नावली

<u>प्रारूप-1</u>

1. वर्तमान परिपेक्ष्य में आप हिंदी रंगमंच को कैसे और कहाँ देखते हैं?
2. आरंभ से अब तक आपके जीवन में रंगमंच किस तरह से महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है?
3. सिनेमा में कार्य करने के साथ-साथ जब आप पुनः रंगमंच की दुनिया में आयें तो इसमें पहले की तुलना में किस तरह का बदलाव देखने को मिला?
4. रंगमंच की दुनिया से सिनेमा की दुनिया में जाने पर किस तरह के हलातों का सामना करना पड़ा?
5. रंगमंच के विकास में सिनेमा अभिनेता और सिनेमा किस तरह से सार्थक साबित हो सकता है?

<u>प्रारूप-2</u>

1. आरंभ से अब तक चयनित कलाकारों (वैसे कलाकार जो रंगमंच से सिनेमा में जाने के बाद भी रंगमंच में सक्रिय रहें) के जीवन में हिंदी रंगमंच किस तरह से महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है?
2. सिनेमा में जाने के पूर्व तथा पश्चात्य चयनित कलाकारों (वैसे कलाकार जो रंगमंच से सिनेमा में जाने के बाद भी रंगमंच में सक्रिय रहें) के द्वारा हिंदी रंगमंच में किये गये कार्य को आप कैसे देखते है?
3. सिनेमा में कार्य करने के साथ-साथ जब चयनित कलाकारों (वैसे कलाकार जो रंगमंच से सिनेमा में जाने के बाद भी रंगमंच में सक्रिय रहें) पुनः रंगमंच की दुनिया में वापस आयें तो उनके कार्य प्रणाली में पहले के तुलना में किस तरह के बदलाव देखने को मिलते हैं?
4. रंगमंच की दुनिया से सिनेमा की दुनिया में खुद को स्थापित करने में रंगमंच कलाकारों को किस-किस तरह के हालातों का सामना करना पड़ता है?
5. रंगमंच के विकास में सिनेमा तथा सिनेमा कलाकार किस प्रकार से सार्थक साबित हो सकते हैं?
6. रंगमंच की ऑनलाइन प्रस्तुति, कार्यशाला, कक्षा आदि रंगमंच के साथ कितना न्याय कर पायी है या कर पा रही है?

परिशिष्ट - 2 साक्षात्कार

क्रमिक संख्या	चित्र	नाम	विशिष्टता	साक्षात्कार का माध्यम
1		यशपाल शर्मा	अभिनेता	वर्तालाप (भेंट)
2		डॉ. महेश चंपक लाल	निर्देशक, लेखक, रंगमंच अभिनेता, बड़ौदा के नाट्य कला विभाग में बतौर प्रोफेसर/डीन तथा अन्य एस. एन. ए. पुरस्कार से सम्मानित	वर्तालाप (टेलीफ़ोनिक)
3		आशुतोष बनर्जी	अभिनेता, निर्देशक, एन. एस. डी. रिपेटरी कलाकार	वर्तालाप (टेलीफ़ोनिक)

4		डॉ. चवन प्रमोद आर	निर्देशक, अभिनेता और लेखक, बड़ौदा, नाट्य कला विभाग में बतौर सहायक प्रोफेसर तथा अन्य, उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ युवा पुरस्कार से सम्मानित	वर्तालाप (भेंट)
5	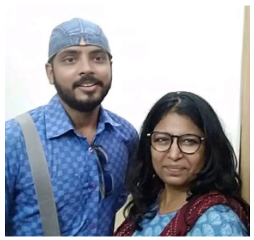	डॉ. विधु खरे दास	निर्देशिका, अभिनेत्री, वर्धा विश्वविद्यालय के थियेटर विभाग में सह-प्रधयापिका तथा अन्य एस. एन. ए. पुरस्कार से सम्मानित	वर्तालाप (भेंट)
6		डॉ. बीर विजय कुमार सिंह	परीक्षक - प्राचिन कला केंद्र, चंडीगढ़ तथा पं. श्याम दास मिश्रा संगीत महाविद्यालय, पटना, पूर्व प्रधानाध्यापक, ई.सी. रेलवे सीनियर सेकेंडरी स्कूल, दानापुर	वर्तालाप (टेलीफ़ोनिक)

परिशिष्ट - 3 छायाचित्र

THE MARVEL OF THE CENTURY.

THE WONDER OF THE WORLD.

LIVING PHOTOGRAPHIC PICTURES

IN

LIFE-SIZED REPRODUCTIONS

BY

MESSRS. LUMIERE BROTHERS.

CINEMATOGRAPHE.

A FEW EXHIBITIONS WILL BE GIVEN

AT

WATSON'S HOTEL

TO-NIGHT (7TH instant).

PROGRAMME will be as under:

1. Entry of Cinematographe.
2. Arrival of a Train.
3. The Sea Bath.
4. A Demolition
5. Leaving the Factory.
6. Ladies and Soldiers on Wheels.

The Entertainment will take place at 6, 7, 9, and 10 p.m.

ADMISSION ONE RUPEE.

A reproduction of the advertisement of the film "Cinematographe", which appeared in "The Times of India" of July 7, 1896.

CS Scanned with CamScanner

(चित्र संख्या-1 लुमियर ब्रदरस के द्वारा दिखाये गये सिनेमा का अखबार 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में छपा विज्ञापन)

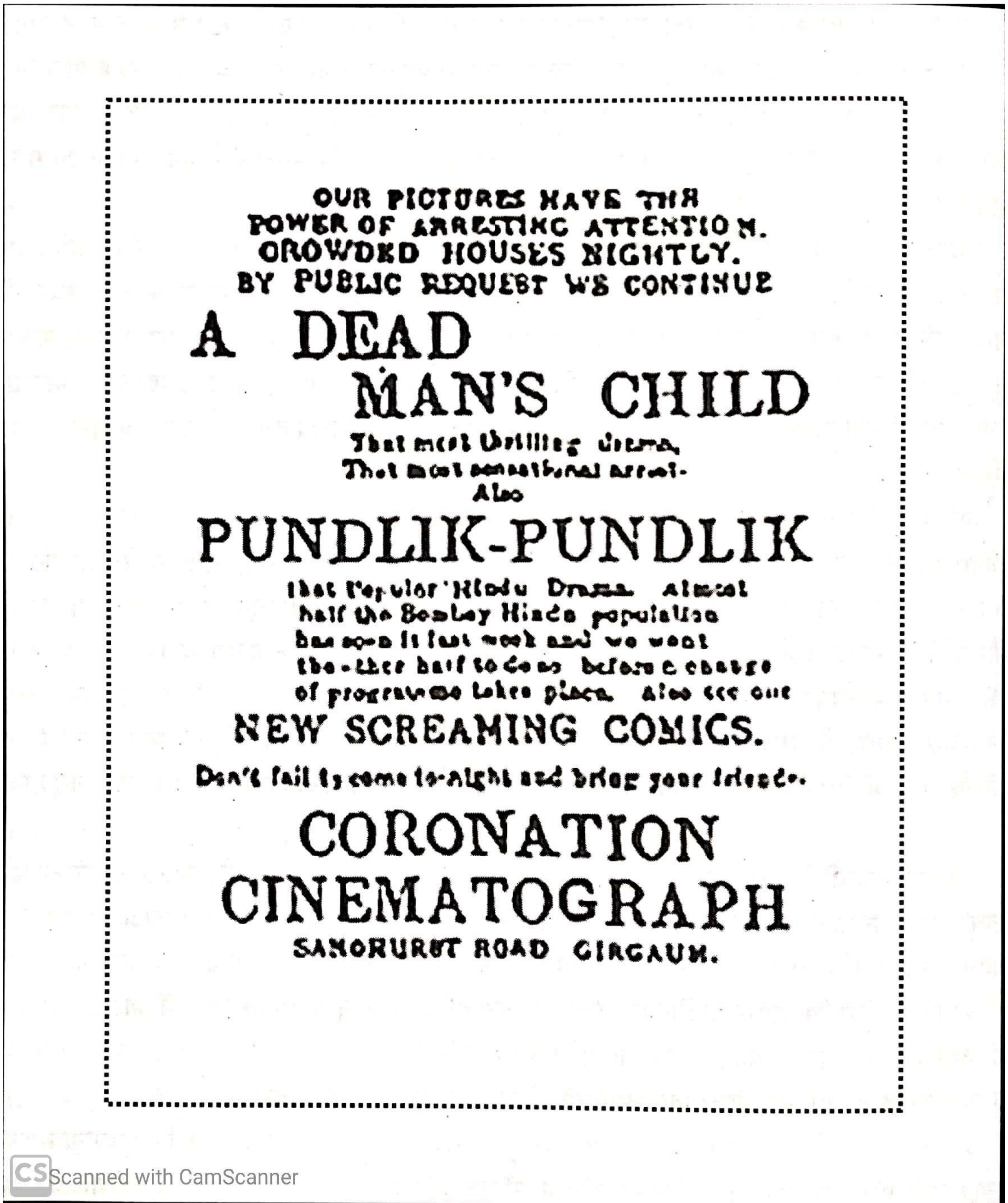

(चित्र संख्या-2 रामचंद्र गोपाल तोरने के द्वारा निर्देशित फिल्म ‘पुंडलिक’ का विज्ञापन)

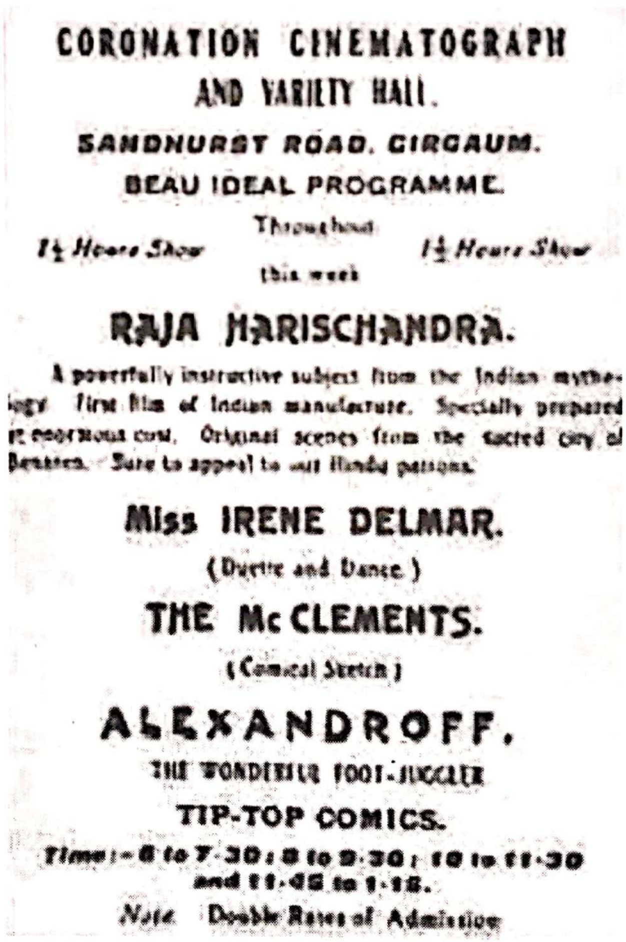

CORONATION CINEMATOGRAPH
AND VARIETY HALL.
SANDHURST ROAD, GIRGAUM.
BEAU IDEAL PROGRAMME.
1½ Hours Show Throughout this week 1½ Hours Show

RAJA HARISCHANDRA.

A powerfully instructive subject from the Indian mythology. First film of Indian manufacture. Specially prepared at enormous cost. Original scenes from the sacred city of Benares. Sure to appeal to all Hindu patrons.

Miss IRENE DELMAR.
(Duette and Dance.)
THE McCLEMENTS.
(Comical Sketch)
ALEXANDROFF.
THE WONDERFUL FOOT-JUGGLER
TIP-TOP COMICS.
Time:- 6 to 7-30; 8 to 9-30; 10 to 11-30 and 11-45 to 1-15.
Note. Double Rates of Admission

CS Scanned with CamScanner

(चित्र संख्या-3 दादा साहब फाल्के के द्‌वारा निर्देशित फिल्म ‘राजा हरिश्चंद्र’ का विज्ञापन)

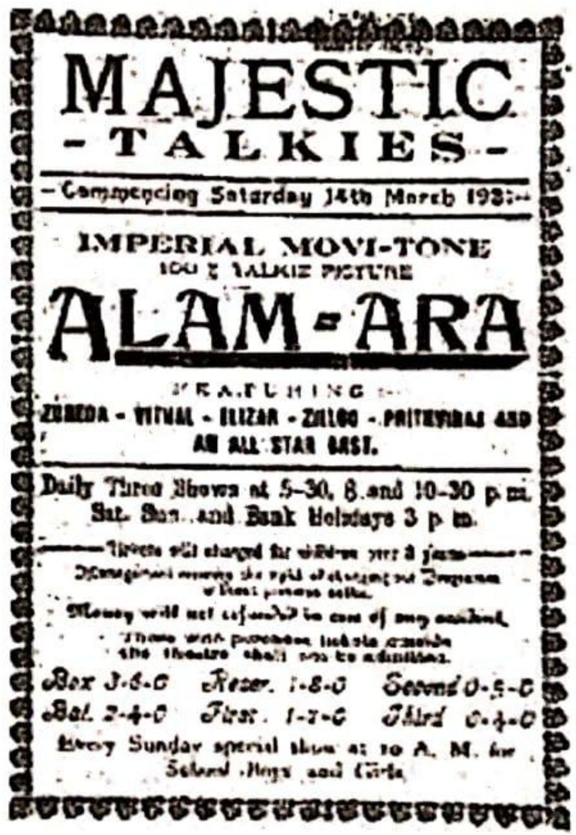

Scanned with CamScanner

(चित्र संख्या-4 'आरदेशिर ईरानी' के द्वारा निर्देशित फिल्म 'आलम आरा' का विज्ञापन)

चयनित सत्तरह कलाकरों का चित्र

पृथ्वीराज कपूर (चित्र संख्या-5)

श्रीराम लागू (चित्र संख्या-6)

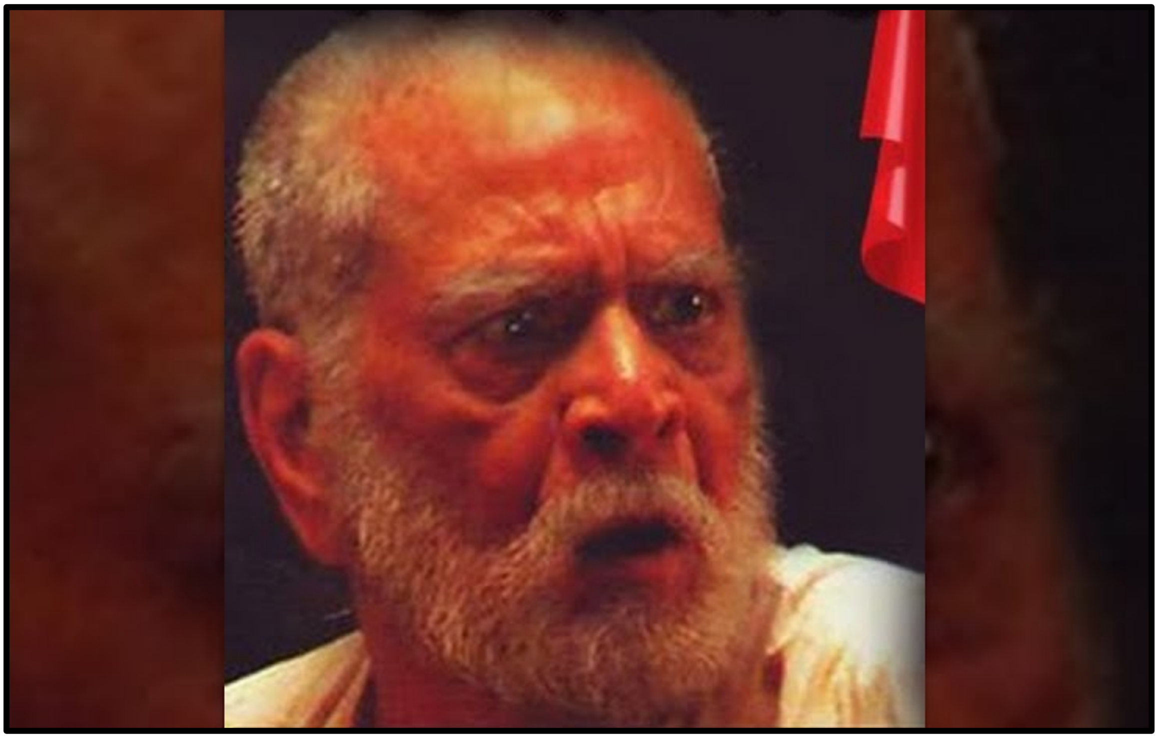

ओम शिवपुरी (चित्र संख्या-7)

गिरीश कर्नाड (चित्र संख्या-8)

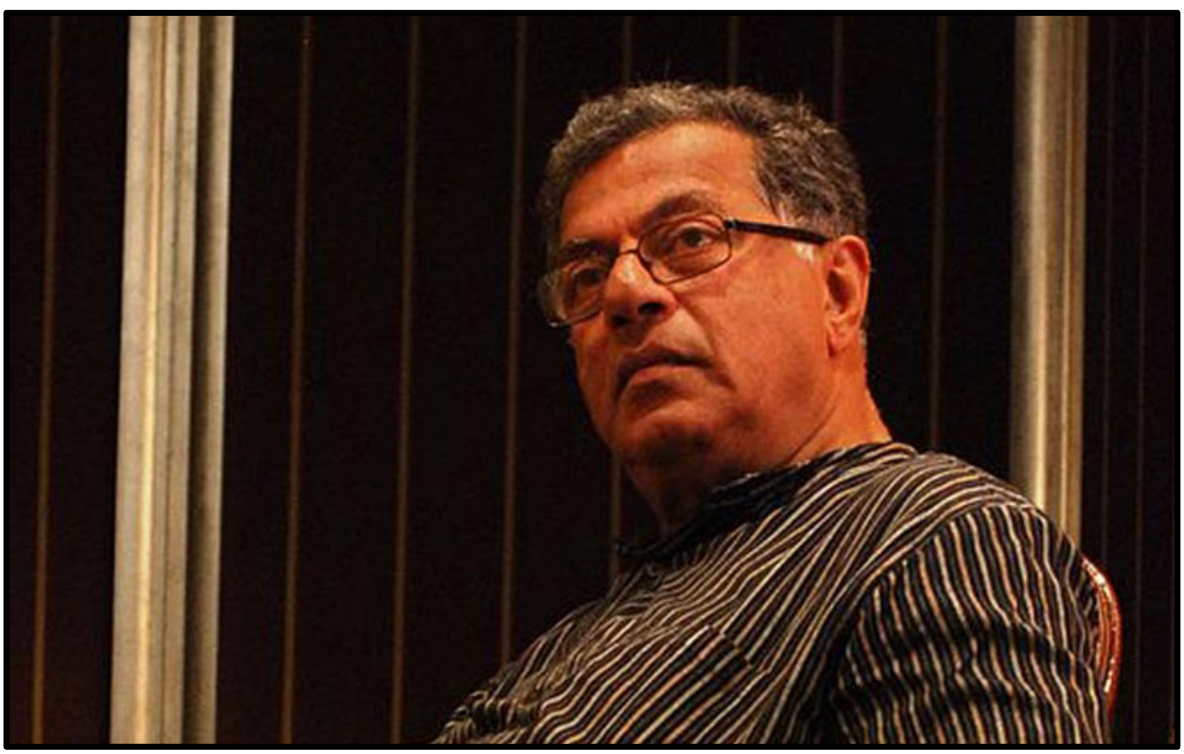

राम गोपाल बजाज (चित्र संख्या-9)

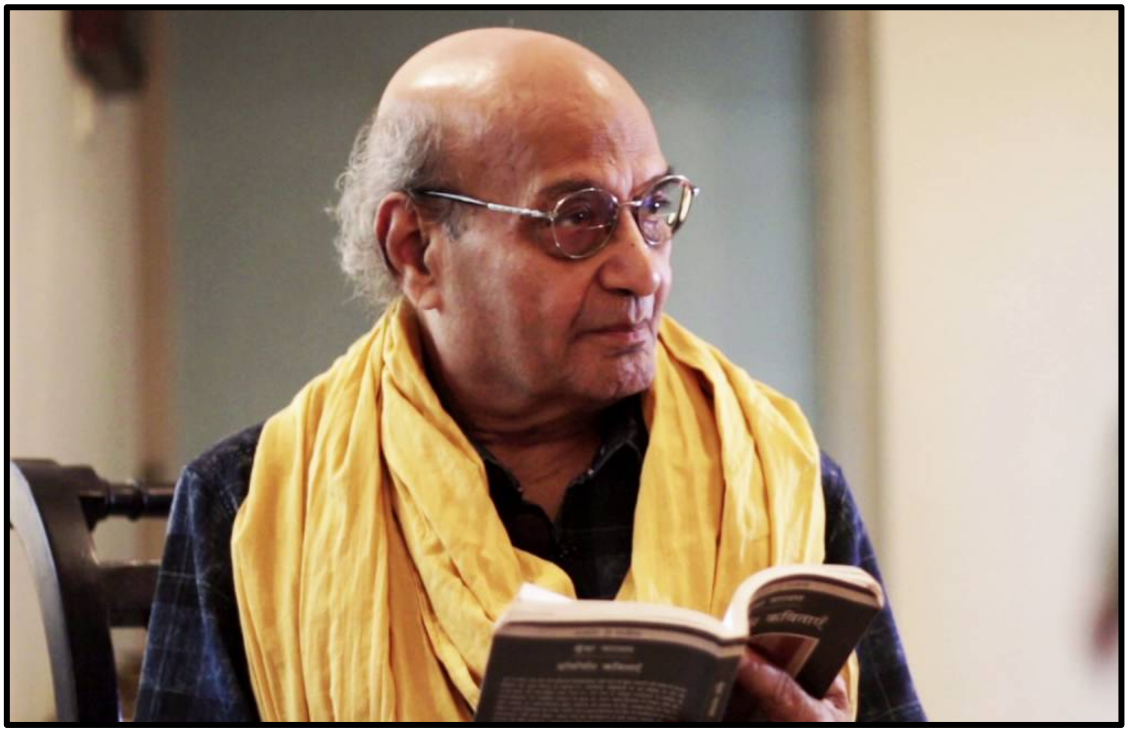

परेश रावल (चित्र संख्या-10)

टॉम ऑल्टर (चित्र संख्या-11)

नसीरउद्दीन शाह (चित्र संख्या-12)

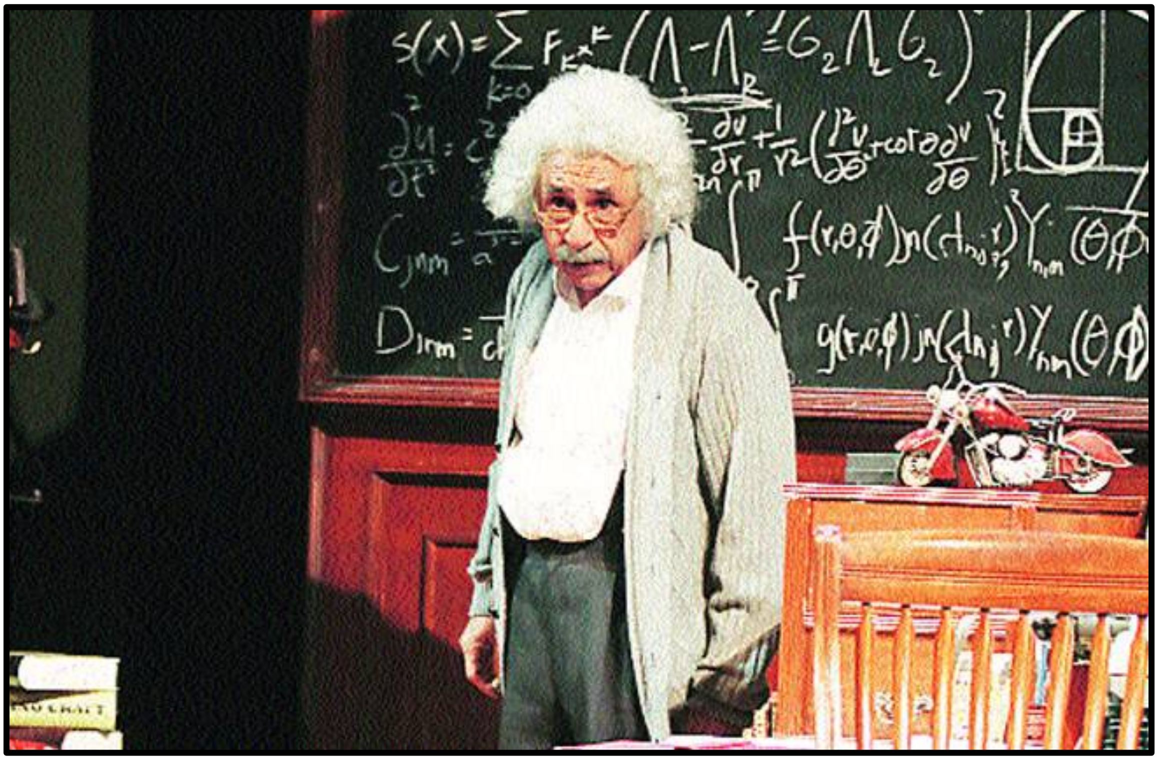

ओम पुरी (चित्र संख्या-13)

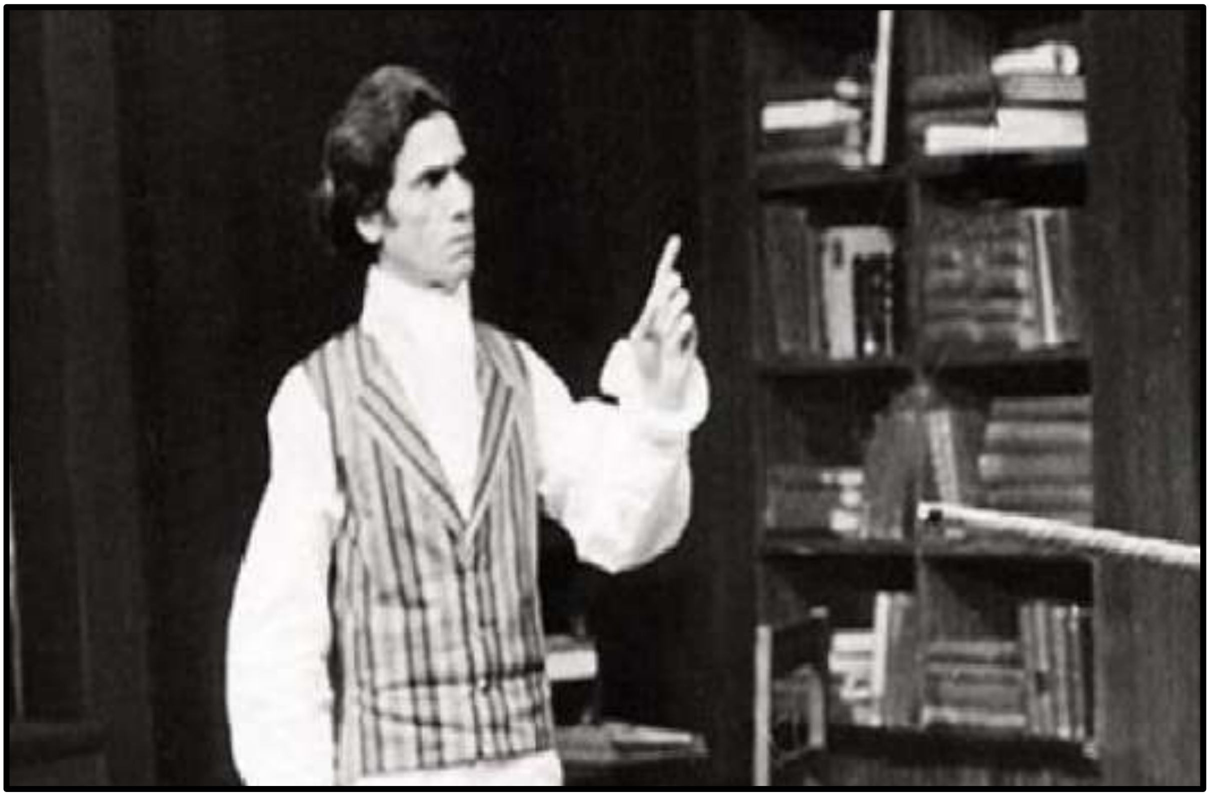

अनुपम खेर (चित्र संख्या-14)

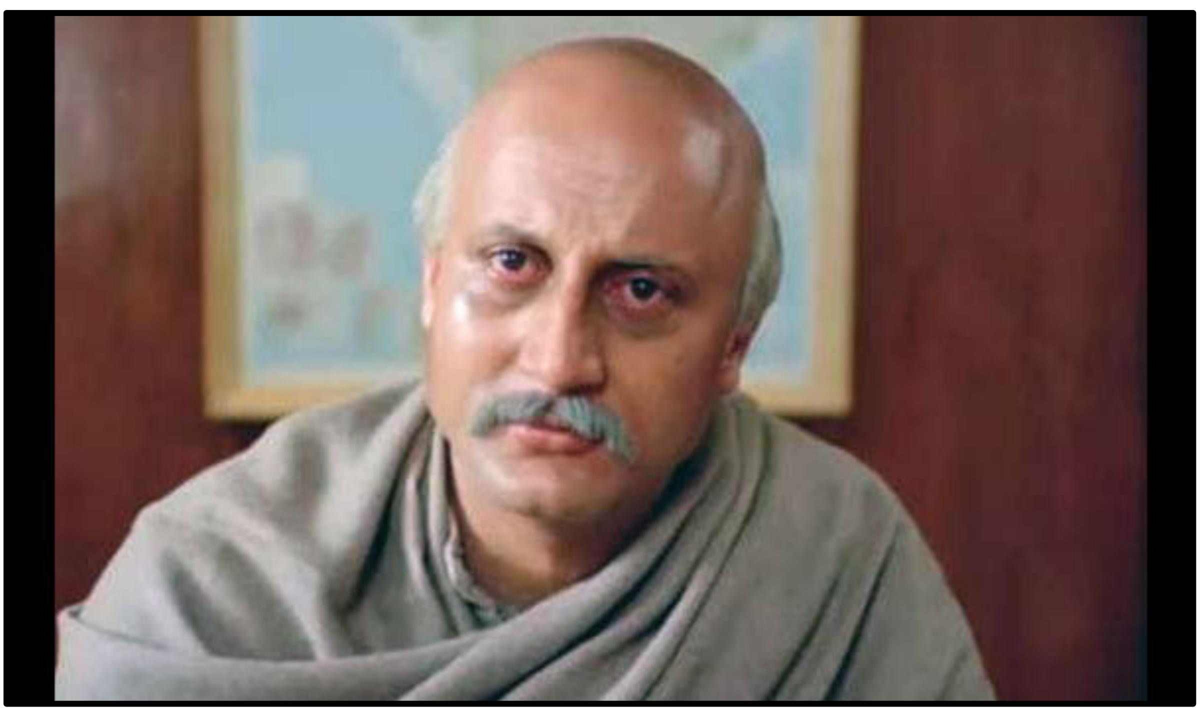

पंकज कपूर (चित्र संख्या-15)

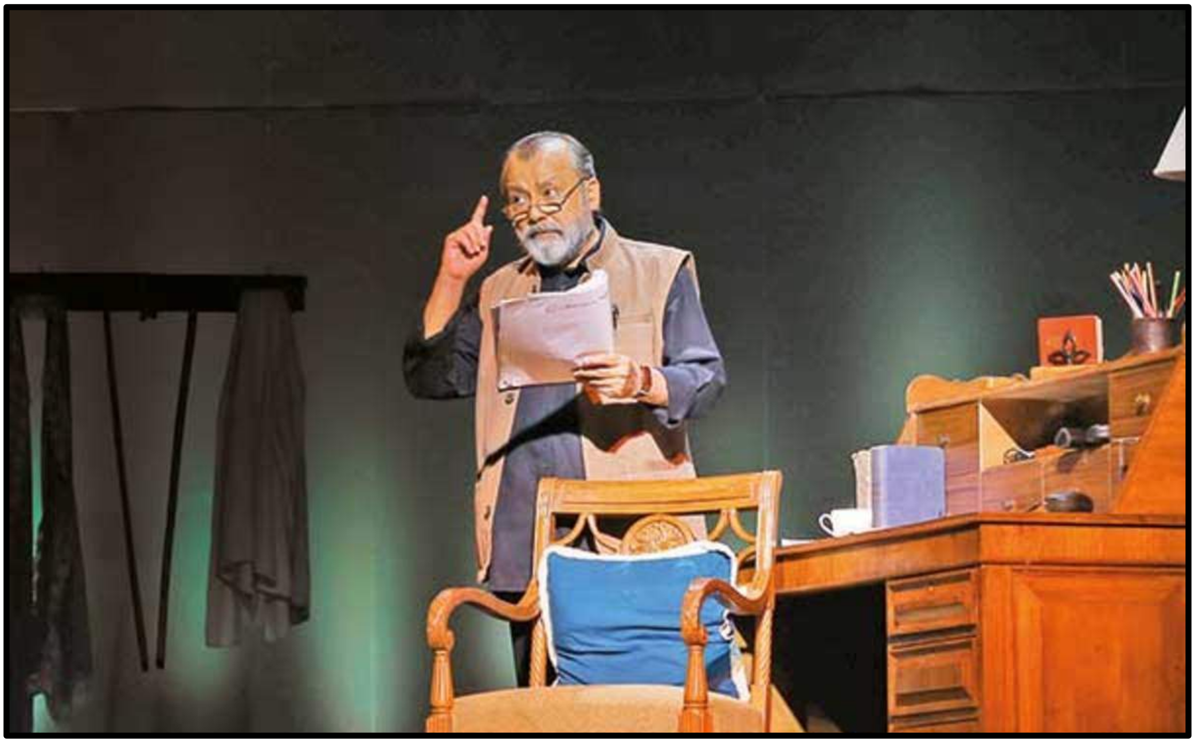

पीयूष मिश्रा (चित्र संख्या-16)

सौरभ शुक्ला (चित्र संख्या-17)

यशपाल शर्मा (चित्र संख्या-18)

PUBLICATION AND CONFERENCES

1. "Nari Aur Bhartiya Cinema" in Hindi Sahitya Aur Cinema, **ISBN: 978-81-930869-7-1**, Nov. 2018
2. "Ekkisavi Sadi ke Kisano Ki Dasha" in Samkalin Sahitya me Kisan avam Paryavaran, **ISBN: 978-93-88011-54-9**, Year 2019
3. "Contribution of Eminent Cinema Actors in Indian Theater" in History Research Journal, **ISSN: 0976-5425**, VOL-5-ISSUE-5-SEPTEMBER-OCTOBER-2019
4. "Hindi Ke Vikas Kshetra Me Cinema Ka Yogdan" in Hindi ki Vikas Yatra, **ISBN: 978-81-942920-1-2, 2020**
5. "Gender Issue In Girish Karnad's Yayati" in Ajanta Prakashan, Aurangabad, **ISSN: 2277-5730-IMPACT FACTOR - 6.399**, Vol.-X, Issue-I, January-March 2021
6. "Bihar ke Lok Sangeet Sanskriti ka Lok Jivan Par Prabhav" in Swar Sindhu Journal, **ISSN: 2320-7175**

WORKSHOPS AND SEMINARS

1. Three days 14th International Seminar on Rural Development, Conducted by **Institute for Social Development & Research, Ranchi**. From 27 October to 29 October 2018.
2. 2 days Children's Film Festival & National Workshop on Cinema Aesthetics 2018 organised by **Department of Mass Communication CUJ in collaboration with UNICEF Jharkhand**. On 19 - 20 November 2018.
3. Two days International Seminar on Prayaga Kumbha: Cultural Heritage of the World, Conducted by **Samrat Harshvardhan Shodh Sansthan, Prayagraj**. From 29 November to 30 November 2018.
4. One day International Seminar on Samkalin Sahitya or Samaj, Conducted by **Jamiya Milliya Islamiya University Delhi**. On 25 April 2019.

5. One day National Seminar on Hindi Sahitya Aur Cinema organized by **ST Agnes College (Autonomous) Mangaluru-575002**. On 24 November 2019.
6. Two days National Webinar on Sawar Sankar Riyaz in Indian Music, Conducted by **The Maharaja Sayajirao University of Baroda**. On 25 May and 27 May 2020.
7. One day International Webinar on Virtual Class room: A necessity in Performing Arts Education, Conducted by **The Maharaja Sayajirao University of Baroda**. On 26 May 2020.
8. One day National Webinar on Photography As a Successful Tool For Creating Awareness And Conservation Of Nature: Chapter II, Organized by **IQAC, Suri Vidyasagar College, Suri in collaboration with IQAC, Sambhunath College, Labpur**. On 12 September 2020.
9. One day International Conference on Current Trends in World Music by **Smt. Radhadevi Goenka College for Women, Akola (Maharashtra).** On 4th Feb. 2021.
10. Two days National Seminar on Lok Ke Vividh Rang, Conducted by **Department of Music and Dramatics, Lalit Narayan Mithila University, Darbhanga**. From 2 March to 3 March 2021.

WEBINAR CONDUCTED

1. 7 Days' National Webinar on Performing Arts Organised by me Under Artistic Education Santiniketan, From 07 June to 13 June 2020.

ACHIVMENT

1. **Research Excellence Award 2020**, For "Contribution of Eminent Cinema Actors in Indian Theatre" in History Research Journal, ISSN: 0976-5425, by InSc.
2. **Gold Medal** in Yoga, National Championship Org. By Youth Sports Development Foundation Delhi, ISCA, ISF. Prayagraj (U.P.) On 5-7 Dec. 2019.